॥ ॐ ह्री अहम नम ॥

॥ णमो जिण पवयणस्स ॥

आहार शुद्धि प्रकाश

(विविध ग्रन्था, सामयिकों, वतमान पत्र-पत्रिकाओ से सकलित)

अन्न अच्छा उसका मन अच्छा
मन अच्छा उसका जीवन अच्छा
जीवन अच्छा उसका मरण अच्छा
मरण अच्छा उसकी गति अच्छी
इस सबका मूल आधार है
आहार शुद्धि

प्रकाशक

वर्धमान सेवा केन्द्र

कुमारपाल वि० शाह

६८, गुलाल वाडी, बम्बई-४००००४

★ प्रकाशक व प्राप्ति स्थल
वर्धमान सेवा केन्द्र,
कुमार पाल वि० शाह
६८ गुलाल वाड़ी, ३ रा माला
बम्बई–४

★ अनुवादक
श्री पृथ्वीराज जैन, अंबाला

★ हिंदी संस्करण का संशोधन व सम्पादन–
कमल कुमार बेगानी
सदर, रायपुर (म.प्र.)

★ हिंदी संस्करण–द्वितीय १९८३

★ मूल्य–रू.५ = ५० पैसे

★ मुद्रक
अरिहत प्रकाशन
सदर बाजार, रायपुर हेतु
श्री विद्या इण्डस्ट्रीयल प्रिंटर्स

एवं श्री कृष्णा प्रिंटर्स
बजारी रोड, रायपुर
एव रायपुर प्रिंटर्स
बूढापारा, रायपुर

आचार बिना बिचार का मूल्य शून्य

प्रिय आत्मजन

सस्नेह आत्मस्मरण ।

तुम्हारा विचार पत्र मिला । विचार तो मन की भूमि में बोने का बीज है, इस विचारबीज को आचार से सिंचित किया जाए उसका समुचित और योग्य सम्भाल की जाए तो ही आत्मा का विकास होगा तभी विचार-बीज आत्मोन्नति का वट वृक्ष बन सकता है । बीज सड़े और सिंचाई सम्भाल न हो तो यह बीज या तो नष्ट हो जायेगा या उसका बेघाट जंगली विकास होगा ।

विचार का जितना मूल्य है उतना ही आचार का मूल्य है । दोनों में से किसी की कीमत कम नहीं आंक सकते फिर भी आचार का मूल्य विशेष है क्योंकि आचार रहित विचार की कीमत शून्य है। बंदूक की गोली विचार है । गोली के पीछे का बारूद बन्दूक से गोली छूटने का आधार है । बारूद जितना तेज उतना गोली का निशाना मजबूत । विचार से आचार नहीं प्रगटे तो वह विचार व्यर्थ है । अच्छे विचार व्यक्त करने से उन विचारों को अच्छी भाषा में कहने से सामने वाले को घड़ीभर के लिए चकित कर सकते हैं परन्तु उससे उसका जीवन परिवर्तन या हृदय परिवर्तन नहीं हो सकता । यह तो सदाचार ही कर सकता है । इसीलिए कहा है कि आचार रहित कोरी और बातूनी विद्वता बांझनी है, व्यर्थ है । विचार से आचार बने भी न भी बने परन्तु आचार से विचार पर असर पड़ता है । बड़े रूप में व्यक्ति जैसा जीवन जीता है जैसा आचरण करता है वैसा ही वह विचार करता है ।

सदविचार सरलता से नहीं आते वैसे सदाचार भी सरलता से सहज-रूप से नहीं होते । सदविचार और सदाचार के लिए सतत जागृत प्रयत्न करने पड़ते हैं और करने चाहिए । सदविचारों से आचार को बल मिलता है और सदाचारी व्यक्ति के कारण आसपास के लोगों को भी प्रेरणा और बल मिलता है । आचार विचार रेल की दो पटरी के समान है जीवन में वह समानान्तर रहें तो उससे स्व और सब का कल्याण होता है ।

विचार आचार से ही दीपित होते हैं । आचार में बजाय विचार में परिणमें तो वह 'विचार अविचार बन जाता है । इसलिए ही गांधीजी ने

कहा कि मणवन्धो उपदेश से कणभर आचरण ही अच्छा है ।

एकवार हमारे धार्मिक शिक्षण शिविर में रविशंकर दादा (महाराज) आये थे मैंने उन्हे पूछा, दादा ! हम गावो मे काम करते है । हमे वहा क्या करना चाहिए ।

दादा ने कहा 'कुमारपाल' भाषण के वजाय तुम लोगो के दु.ख में भाग लेने का काम करो । लोग अपने आप तुम्हारे तरफ खिचेंगे ।

ऐसा ही एक दूसरा प्रसंग है हर्वर्ट फवर को एक भाई ने पूछा, 'दुनिया में सवसे खतरनाक वस्तु कौन सी है ।'

उन्होने कहा, 'आचरण का स्वरुप धारण न करने वाला विचार ।'

मात्र विचार से हम कोई प्रगति नही कर सकते । विचार तो कार्य का वीज है । विचार विना कार्य सम्भव नही है । विचार वीज का विकास यदि आचरण द्वारा न हो तो वह विचार व्यर्थ है । विचार जव तक कार्य का स्वरुप धारण नही करते तव वह विचार न रह तरग वन जाते है ।

प्रत्येक महान कार्य के लिए पहले स्वप्न (Dream) चाहिए उसके वाद सकल्प (Ditermination) चाहिए और दोनो के साथ चाहिए समर्पण (Dedication) इन तीनो का सहयोग हो तव सिद्धि (Destination) मिलती है ।

कोई भी विचार सकल्प का रुप धारण करता है तभी वह असर कारक बनता है उससे ही उत्पादक शक्ति उत्पन्न होती है । ईरानी कहावत है कि अच्छा विचार करना बुद्धिमता है, किन्तु उसका अमल करना उससे भी वडी वुद्धिमता है ।

शिष्य ने गुरु को वन्दन कर विनय से पूछा, गुरुदेव ! हमारे विचारो मे कुछ खामी है ?

नही विचार तो वहुत सुन्दर है ।

तो फिर आपके चेहरे पर प्रसन्नता के वदले पीडा के भाव क्यो है ?

हे वत्स । मन मे यह विचार कर रहा हूँ कि तुम सुन्दर विचार तो व्यक्त कर सकते हो परन्तु उनमे से तुम कितने विचारो को आचार में लाये हो ? हे वत्स ! नये सुन्दर विचार व्यक्त करने का कोई महत्व नही है । महत्ता है विचारो को आचार मे उतारने की ।

मन वाणी और वतन में जिसकी एक सूत्रता है वह, महात्मा है,जो व्यक्ति काम करने के पहले मात्र बारे चिन्तन में ही डूबा रहता है तो वह समय जाने पर निराशावादी बन जाता है। विचार के अनुरूप कार्य करने से विचार का प्रयत्न किया जा सकता है। जो भी शुभ विचार आए उसके अनुरूप कार्य करना पड़ेगा ऐसा नहीं होगा तो जितने वेग से शुभ विचार आये उसके दुगने वेग से चले जायेंगे। परिणाम स्वरूप हम लाभ से वंचित रह जायेंगे।

तू अपने पत्र में लिखता है कि—मुझे सामायिक करने का मन होता है। रात्रि भोजन त्यागने का मन होता है। अभक्ष्य भोजन से दूर रहने का विचारता हूँ व्रत और तप की इच्छा होती है। परन्तु कौन जाने मैं यह सब नहीं कर सकता।

मित्र! तू यह सब मान सकता है इस में भी विशेष सर्व विरति स्वीकारने की भी आत्मा में शक्ति और क्षमता है। परन्तु तू मात्र विचार ही करता है विचारों को आचार में उतारने के लिए जरा प्रयत्न नहीं करता

तू समझता है कि समभाव से रहने में समता प्रगट होता है। अनेक आर्यों का मूल रात्रि भोजन में अनन्त जीवों की कारमी हत्या है। महाव्यसन परमात्मा स्वरूप आत्मा का पतनमार्ग है। व्रत तप पुण्य का बंध करने और कर्मों का नाश करने वाला संजीवनी है परन्तु मान नभपने में क्या हानि वाला है?

प्रिय आत्मजन! क्या तुम यह पता नहीं कि प्रतिक्षण आयुष्य क्षीण हो रहा है? पल के बाद घंटे-घंटे के बाद दिन-दिन के बाद महीने-महीना बाद वर्ष एवं समय की रेता सतत निकल रही है। और गया हुआ समय लाख उपाय करने के पश्चात भी वापस नहीं आता। जीवन भी अपना ऐसे ही चला जा रहा है और एक दिन अचानक काल के मुख का कवल बन जायगा।

मृत्यु निश्चित है। तब धर्म साधना में प्रमाद करना क्या है? इसके लिए पुरुषार्थ समय पर न करता उसके समान दूसरा मूढ़ कौन होगा?

अतः प्यारे मित्र! कल से नहीं आज से भी नहीं परन्तु इसी पल से विचार को आचार में मूर्त। तो हो शुभ विचार तभी ही शुभ आचरण उसी पल में शुरू कर दें।

आशा और आशा के साथ पत्र पूर्ण करता हूँ कि विचार को, सद्विचार को तू सदाचार में बदल देगा।

तुम्हारा—कल्याण मित्र कुमारपाल

सहायक पुस्तकें

इस पाठ्य पुस्तक मे निम्नलिखित पुस्तकों का सहयोग लिया गया है, उन सबका आभार मानते है ।

पुस्तक का नाम	लेखक ० संपादक ० प्रकाशक
१ धर्म संग्रह भाग–१	उपा. श्री मानविजय जी गणी
२ प्रवचन सारोद्धार	आ. श्री नेमचद्र सूरिजी म.
३ अभक्ष्य अनतकाय विचार	श्री यशोविजय जी जैन शाला
४. वनस्पति आहार के लाभ	डॉ. त्रिभुवनदास लहेरचद
५. आहार मीमाँसा	श्री प्रभुदास बेचरदास पारेख
६. श्रावक धर्म जागरिका सार्थ	आ. श्री विजयपद्मसूरि जी म.
७. आहार विशेपाक (हिन्दी गुज)	जैन जगत
८. नरक का प्रथम द्वार (रात्रि भोजन)	आ. विजयकीर्तिचद्रसूरिजी म.
९. प्राणियो की अपील	श्री नारणदास पुरुषोत्तमदास
१० जैन तत्वादर्श	श्री विजयानंद सूरिश्वर जी म.
११. अभक्ष्य अनतकाय विचार	श्री प्राणलाल मगल जी शाह
१२. आहार शुद्धि	श्री. मनसुखलाल ताराचद
१३. खुराक को पसदगी	श्री रमणलाल इजीनियर
१४. मनुष्य के योग्य कुदरती आहार	श्री जयतीलाल मानकर
१५ भारत सरकार के श्री राजेन्द्र बाबु	मुनि श्री हर्ष विमलजी म सा
१६ भक्ष्याभक्ष्य	श्री धीरजलाल टोकरसी शाह
१७ प्राणी हिसा निपेधक	श्री मोतीलाल मनसुखलालशाह
१८ भयकर भूत	श्री अमृतलाल जगजीवन दास
१९ दीर्घायुष्य और आरोग्य	डॉ महादेवप्रसाद M.D.N.D.

२०. जन्मभूमि, बम्बई समाचार, जयहिंद आदि के सम्पादक

-: रत्नकण :-

- आहार की शुद्धि आत्म शुद्धि हेतु महत्वपूर्ण है।
- आहार का आत्मा के साथ, भोजन का भजन के साथ गहरा सबंध है
- हमें भोजनानुसारी नहीं, भजनानुसारी बनना है।
- भोजन से शरीर का पोषण देना ठीक है मगर भोजन से शरीर को पुष्ट बनाना अनय है।
- भोजन जितना सात्विक इतना जीवन पवित्र।
- इंसान अपने को आसानी से समझ कर ईश्वर को क्यों नही समझ पाता इसका मुख्य कारण आहार है।
- भूख के बिना गुलकन्द को खाओगे तो वह नुकसान करेगा, भूख के वक्त सूखी रोटी को खायेंगे तो वह गुलकन्द का मजा देगी।
- भोजन देखकर अज्ञानी की जीभ में पानी निकलता है ज्ञानी की आँख में पानी।

सुनहरे कण

- झरने में बहता निर्मल जल जिस प्रकार शरीर के मल को साफ करता है वैसे ही वीतराग परमात्मा के वाणी रूपी झरने का पानी आत्मा के अंतर मल को साफ करता है।
- भोजन की शुद्धि नैतिक और मानसिक उत्थान का कारण बनती है।
- आपका मन ही स्वर्ग और नर्क है सुंदर विचारों के प्रकाश से विकसित मन स्वर्ग का आनंद प्रदान करता है खराब विचारों के अंधकार से पूरित मन नरक की यातना उत्पन्न करता है।

  अत: शरीर मन और आत्मा को बिगाड़ने वाला अभक्ष्य खान पान को जीवन भर के लिए त्याग कर दीजिए।
- हित भोजी-स्वयं की प्रकृति के अनुसार भोजन करने वाले और मित भोजी-समय और ऋतु के अनुसार भोजन करने वाले मानव को कभी रुग्ण नहीं होता।

आहार अमृत धारा

★ ऐसा हितकारी और अल्प प्रमाण में भोजन करना चाहिये जो जीवन और सयम यात्रा के लिए उपयोगी बन सके, और जिससे किसी भी प्रकार का विभ्रम न हो अन्यथा धर्म भ्रष्ट होगा।

★ जो मनुष्य उपयुक्त आहार. मिताहार या अल्पाहार करते हैं, उन्हे वैद्यो को चिकित्सा की आवश्कता नही पड़ती, वे स्वय ही स्वय के वैद्य होते है।
—आचार्य भद्रबाहु स्वामी जी

★ जो काल, क्षेत्र, मात्रा आत्म हित द्रव्य की गुणवत्ता और अपनी शक्ति का विचार करके भोजन करते है, उन्हे दवा की आवश्यकता नही होती।
—वाचक उमास्वाति जी

★ ज्ञानादि मोक्ष के साधन है और ज्ञान का साधन शरीर है तथा शरीर का आहार है, इसलिए साधक को समयानुकुल आहार की आज्ञा दी गई है।

★ जो अल्पाहारी है उनकी इद्रियां वासना की ओर नही दौड़ती तप के अवसर पर वे निरुत्साही नही होते, और वे स्वादिष्ट भोजन मे आसक्त नही होते।
—क्षमाश्रमण जिनभद्र जी

★ आयुर्वेद इस बात पर सहमत है कि शरीर मे दो कमल है, हृदय कमल और नाभि कमल। सूर्यास्त हो जाने के बाद ये दोनो कमल सकुचित हो जाते है, इसलिए रात्रि भोजन निषेद्ध है।
—आचार्य श्री हेमचद्र सूरि जी म० सा०

प्रकाशकीय

जैन दर्शन का ध्येय अनाहारी पद प्राप्त कर आत्मा की शुद्ध अवस्था मोक्ष पर्याय को प्रकट करना है। अनादि से कर्म संबंध युक्त आत्मा कर्म के कारण आहार ग्रहण कर शरीर का निर्माण करती है और उसे टिकाने के लिए नया नया आहार लेती है।

आहार से रक्त आदि धातुओं का निर्माण होता है और इसी के अनुसार विचारधारा का निर्माण होता है। आत्मा के परिणाम अच्छे रहे इस हेतु आहार की शुद्धि का प्रकाश प्राप्त कर जीवन का निर्माण आधारभूत आवश्यकता है।

अनादि काल से इस देह धारी जीव को आहार संज्ञा, रस स्वाद की वृत्ति न्यूनाधिक अंश मे सताती है। इस रस वृत्ति के अनियंत्रित हो जाने पर स्वास्थ्य हानि का हिसाब नहीं रहता है। रोग के कारण जीवन पराधीन होता है, तथा दु समय मृत्यु के कारण परलोक बिगड़ता है, जिससे पुनरुत्थान प्राप्त करना सहज नहीं है। रस लोलुपता के दण्ड स्वरूप असंख्य अनंत काल तक जीभ विहिन एकेंद्रिय अवस्था पानी पृथ्वी, अग्नि, वायु व वनस्पतिकाय मे परिभ्रमण करना पड़ता है। भविष्य का अनंत काल न बिगड़े विचार धारा कलुषित न बने, इस हेतु आहार विवेक करके आहार संज्ञा पर सम्पूर्ण प्रकार से विजय प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करना जरूरी है

शरीर के विकास के लिए मन की निर्मलता के लिए, आत्मा के आनंद को प्रकटाने के लिए, अत में जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए आहार का विवेक आवश्यक है और अनिवार्य है।

आहार अर्थात् भोज्य सामग्री चार प्रकार की है—अशन–पान–खादिम–स्वादिम। भोजन मे लिए जाने वाले खाद्य पदार्थ संख्या मे अनेक है। युगलिक युग से लेकर वर्तमान यंत्र युग तक मनुष्य ने खाद्य पदार्थों का अनेक प्रयोग करके भांति भांति व भांति भांति की वस्तुओं का निर्माण किया है।

खाने की इन वस्तुओं के मुख्यतः दो भेद किये जा सकते हैं। एक भक्ष्

कहलाती वनस्पति, औषधि अनाज आदि और दूसरी अभक्ष्य कहलाने वाली कदमूल मास मदिरादि वस्तुए ।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या ये सभी वस्तुए खाना जरूरी और योग्य है ? स्पष्ट उत्तर होगा कि नहीं । इस हेतु योग्य अयोग्य अर्थात अनंत केवल ज्ञानी परमात्माओ द्वारा आत्म हित की दृष्टि के समझाया गया भक्ष्य और अभक्ष्य खान पान का विवेक रखना आधार भूत आवश्यकता है ।

इस विवेक की आवश्यकता मात्र इसलिए है, कि भोजन से कोई अनुचित प्रभाव, विकृति, स्वास्थ्य हानि, मन की खराबी न हो और आत्महित भी खतरे में न पड़े तथा परलोक मे गति न बिगड़े ।

तन, मन और आत्मा के निर्माण व विकास का आधार शुद्ध सात्विक, भक्ष्य आहार है, आहार अशुद्ध, तामसी और अभक्ष्य होगा तो जीवन मे बहुत गड़बड़ होने की, स्वास्थ्य हानि की, स्वभाव में क्रोध काम व उत्तेजना की सदाचार व सदविचारों के लोप के रूप मे असत्य नुकसान की सम्भावना रहेगी ।

जैसा अन्न वैसा मन, और जैसा मन वैसा जीवन यह अनुभव सिद्ध हकीकत है ।

सात्विक शुद्ध भक्ष्य आहार से सद्विचार और सदाचार की रक्षा व वृद्धि होती है । यह अनुभव त्यागी तपस्वी पुरुष कहते है ।

अभक्ष्य पदार्थो मे कदमूल मे असख्य जीवो की हानि, मास अंडा आदि मे पचेन्द्रिय जीव की हानि होती है । कितने ही अभक्ष्यो मे असंख्य त्रस जन्तुओं का नाश होता है, जिससे आत्मा की परिणति कठोर, निर्दय बनती है मन की वृतिया विकृत हो जाती है. आत्मा की शाति भग होती है, साथ ही दुर्गति की आयुष्य का बधन सुलभ होता है । ऐसे अनर्थकारी दोष से विद्यार्थियो व युवको को बचाने के लिए प्रत्येक वर्ष आयोजित होने वाले जैन धार्मिक शिक्षण शिविरो मे नैतिक व आध्यात्मिक जीवन निर्माण करने का प्रयास किया जाता है ।

विद्यार्थियो को भक्ष्य व अभक्ष्य भोजन के विषय मे, [illegible] पदार्थो का वर्णन विज्ञान सम्मतता, स्पष्टता, उदाहरण व तर्क पूर्वक समझाया गया है । जिससे इन बालको ने उम्र भर के लिए ऐसे अभक्ष्य खान पान का त्याग करने का नियम स्वीकृत किया है ।

पेट करावे वेठ आदि कवित हमें अनेक बार लोगों के मुख से सुनते है। आज का वैज्ञानिक विश्व के अनेक शक्तियों पर विजय प्राप्त करने का दावा करता है किन्तु अब तक कोई वैज्ञानिक पेट की भूख समाप्त करने में समर्थ नहीं हो सका है जबकि ऐसा मार्ग परम तारक श्री जिनेश्वर देव ने दिखाकर जीव मात्र को अनन्त सुख मय मोक्ष का अनाहारी-द्वार दिखलाया है। अनाहारी पन प्राप्त करने के लिए परम उपकारियों ने मनुष्यों को अहिंसा तप संयम की शिक्षा दी है जिससे मनुष्य आहार के या रस का गुलाम नहीं बनता है। अशुद्ध आहार से निष्ठुर विकारी या तामसिक न बने इस हेतु "आहार शुद्धि" पर प्रकाश डाला गया है।

ज्ञानी भगवंतों ने विचार और आचार की शुद्धि के पूर्व आहार शुद्धि की बात बहुत ही समझ के साथ कही है। शुद्ध आहार के अभाव में मन शुद्ध और शांत नहीं बनता है। अर्थात चित्त बिना योग साधना असम्भवित है। और सृष्टि में मानव शरीर साधना के लिए उत्कृष्ट शक्तियों का निर्माण का साधन है। इस साधन को हम आहार संज्ञा से बहलाने की अपेक्षा आहार संज्ञा की विजय के लिए उपयोग करें यही उचित होगा। जबकि पाश्चात्य संस्कृति में आहार निद्रा, भय और मैथुन पुष्ट करने का जीवन है जबकि जिनशासन की संस्कृति में आहारादि संज्ञाओं की विजय की बात समाविष्ट है। इसलिए आध्यात्मिक साधना में आगे बढ़ने के लिए ज्ञानी भगवंतों ने अभक्ष्य आहार का निषेध किया है।

इस पुस्तक में संकलित जैन धर्म के सनातन सत्य की सामग्री युवकों और बालकों को सरलता से बोधगम्य हो, और शीघ्रता से ये बातें उनके दिल में उतर जाए इस हेतु अनेक पाश्चात्य वैज्ञानिकों और डॉक्टरों के मंतव्य इस पुस्तक में दिये गये है। इतना ही नहीं विषय विवेचनों को सदा याद रखने को चित्रों द्वारा अभिव्यक्ति (Visual reflection) करके दिमाग में हृदय पर इस पुस्तक के सचित्र प्रकाशन द्वारा सुंदर प्रयत्न भी किया गया है। इस पुस्तक में प्रस्तुत विवेचना को प्रामाणिक बनाने के लिए अनेक पत्रों, सामयिक प्रमाणों तथा पुस्तकों के अवतरण भी उद्धृत किये गये है। वस्तुतः यह सचमुच उपयोगी और अभिनन्दन के योग्य है।

हमारे पूर्वाचार्य ज्ञानी भगवतो ने प्रवचन-सारोद्धार धर्म संग्रह मे और श्रावक व्रत के भोगोपभोग विरमण व्रत मे २२ अभक्ष्यो की विशद् विवेचना की है, वह सिर्फ धार्मिक भावना तक ही सीमित नही है। आज के आरोग्य और चिकित्सा विज्ञान का भी इसे प्रबल समर्थन प्राप्त है। जो हमारी श्रद्धा को वृद्धिगत करता है।

शिविरार्थियो के लिए यह एक महत्व की पाठ्य-पुस्तक है। इसके अतिरिक्त छोटे बडे भाई-बहनो को जीवन के सच्चे विकास हेतु महत्वपूर्ण मार्ग-देती है।

प्रस्तुत पुस्तक पूज्यपाद परमोपकारी तपोनिधी आचार्य देव श्री विजय भुवन भानु सुरिश्वर जी महाराज के शिष्य रत्न श्री राजेन्द्र विजय जी म०सा० द्वारा सन् १९३५ मे पाटण के जैन शिक्षण शिविर मे 'अभक्ष्य अनतकाय विचार' नामक पुस्तक के आधार पर तथा अनेक अन्य ग्रन्थो के सहयोग से सकलित की गई है।

यह पुस्तक मूलत: गुजराती मे लिखी गयी थी, किन्तु हिंदी भाषी क्षेत्रो मे इसके हिंदी सस्करण के लिए आते निवेदन के कारण अबाला (पजाब) निवासी श्री पृथ्वीराज जी जैन,एम०ए०से अनुवाद करा इस पुस्तक की प्रथम आवृति सन् १९७९ में प्रस्तुत की गई थी। हिन्दी के प्रथम सस्करण के उपरान्त यह द्वितीय संस्करण पाठको को समर्पित करते हमे आनद की अनुभूति हो रही है।

यह पुस्तक बालको के लिए उपयोगी बने तथा बाल्यकाल से ही सस्कार और सत्य के प्रति अभिरूचि जागृत कर वे अपने आहार के भक्ष्य अभक्ष्य का भेद समझकर उसके अनुसार आहार पर नियंत्रण रखें सयम जीवन जी सके, इस शुभ उद्देश्य से पाठशालाओ पुस्तकालयो तथा घर मे सर्वत्र इस पुस्तक का उपयोग करे तो हमारा यह प्रयास सार्थक समझेंगे। इसलिए धार्मिक शिक्षको तथा माता पिता मे विशेष विनती है। इस पुस्तक के उपयोग द्वारा बालको मे स्व नियंत्रण और सयम जीवन के बीज आरोपित हो यही अभिलाषा है।

इस पुस्तक मे जिनाज्ञा के विरूद्ध कुछ भी छपा हो तो मिच्छामि दुक्कड।

लि:—कुमार पाल वि० शाह

बम्बई

तप युद्ध की शिक्षा आहार-शुद्धि

लेखक पू० मुनिराज श्री पूर्णचंद विजय जी म०

भारत के सभी धर्मशास्त्र मानव जीवन की महत्ता का मूल्यांकन करते हुए कहते है कि यह मानव भव तो मुक्ति का मंगल द्वार है। मुक्ति का मंगल द्वार खोलने की चाबी इसी भव मे मिल सकती है। यही इसकी महत्ता है, इसी से इसकी सर्वोपरिता है बाकी तो यह मानव शरीर मल मूत्र की भांति मुश्किलों और उलझनो का सागर है। भौतिक सम्पन्नता को प्रदर्शित करने का कोई अतिशय मूल्य नहीं है। इसके कीमती मूल्यांकन का कसौटी आध्यात्मिक आजादी ही है।

आध्यात्मिक आजादी की चरम और परम सीमा यह मुक्ति है और इस मुक्ति द्वार के उद्‌घाटन की चरित्र चाबी, यदि मानव जीवन मे ही मिल सकती फिर विचार करने की बात यह है, कि इस द्वार उदघाटन में आहार शुद्धि कोई महत्वपूर्ण अंग है या नही ?

उत्तर आहार शुद्धि की आवश्यकता को सिद्ध कर देता है। मुक्ति के मंगल द्वार को खोलने की चाबी है, आचार शुद्धि, इस आचार शुद्धि की आधार शिला है विचार शुद्धि, और विचार शुद्धि की वाहक है आहार शुद्धि।

आहार शुद्धि से विचार शुद्धि विचार शुद्धि से आचार शुद्धि, आचार शुद्धि से कर्म विशुद्धि और अंत में मोक्ष। इस पुनीत क्रिया में धीरे धीरे गहराई तक डुबकी लगाइये।

आहार जैसी डकार। अन्न जैसा मन। खान पान जैसे अरमान। ये और इन जैसी कहावतों का अर्थ यह है कि आहार का असर छोटा मोटा नहीं है। आहार यों तो शरीर की क्रिया है किंतु इसका प्रभाव मानव के मन पर मनन पर, और जीवन पर भी पड़े बिना नही रहता है। शारीरिक विकास के साथ साथ मनुष्य के विचार उच्चार और आचार में भी आहार कारणीभूत तत्व है।

संज्ञा अर्थात सुदृढ़ संस्कार। समस्त जीव सृष्टि चार संस्कारों को अपनी छाया की भांति लगातार भव भ्रमण करती है। इन संज्ञा चतुष्कोण में पहली संज्ञा आहार, दूसरी भय तीसरी विषय वासना और चौथा मूर्च्छा परिग्रह की

कहलाती है। आहार संज्ञा की कायमी मर्प पकड से मुक्त होकर अनाहारी पद का स्वातत्र्य प्राप्त करने के लिए तप का यह युद्ध मंत्र हमारे शास्त्र कारो ने प्रदान किया है। तप का युद्ध कोई बच्चो का खेल नही है। इस युद्ध के लिए ताकत और ताकत के लिए तालीम लेनी होती है। तालीम के रूप मे ही हमारे शास्त्रकारो ने भक्ष्य अभक्ष्य पेय अपेय को चर्चा निर्धारित की है, और इस संदर्भ मे गहरी से गहरी जानकारी प्रदान की है।

आहार संज्ञा की गुलामी से मुक्त होने के लिए तप का युद्ध करना अनिवार्य है। इस तप युद्ध में विजय वरमाला वरण के लिए शक्ति प्राप्ति विना सफलता असम्भव है, शक्ति प्राप्त करने के लिए शिक्षा लिए विना छुटकारा नही है। यह परेड करनी है इसलिए बावीस अभक्ष्य, बत्तीस अनंतकाय और चार महाविगई का सम्पूर्ण जीवन के लिए त्याग करिए। अभक्ष्य त्याग की शिक्षा से जागृत जवा मर्दी, तप युद्ध करने के लिए उत्साह और फिर आहार की संज्ञा की स्थायी गुलामी की बेडी छिटका करके जीव अनाहारी पद की स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेगा।

सिर्फ आहार शुद्धि को अपनाकर आत्म सतोष नही मानना है। हमारा अतिम आदर्श और महत्व पूर्ण मुद्रालेख तो यह अणाहारी पद ही है। इस आदर्श को प्राप्त करने आहार का, रस क्रमशः त्याग जरूरी है, किंतु ये तो ऊपर के चरण है, अतिम चरण भी कहे तो उपयुक्त है, ऐसी उच्च भूमिका है यह। इस उच्च भूमिका को प्राप्त करने के लिए आरम्भिक चरण पर चढ़ना ही होगा। आहार शुद्धि के विना प्रारम्भिक चरण पर पैर टिक ही नही सकते इसलिए मुक्ति द्वार खोलने की चरित्र चावी प्राप्ति की प्राथमिक शर्त है-आहार शुद्धि। आहार के असर से तन-मन-जीवन मे उठते आंदोलन के तो हम सब साक्षी है ही। अनुभवगम्य इस बात को अधिक समझाने की जरूरत नहीं है। भोजन जैसा वन, मन जैसा मनन, और मनन की भांति जीवन यह लगभग अनुभव सिद्ध बात है। आहार यदि शुद्ध है तो इस शुद्धता का प्रभाव चित्त मे भी पड़ता है। चित्त की शुद्धता चिंतन को शुद्ध बनाती है। सुन्दर चिंतन से शुद्ध व्यवहार का पौधा विकसित होता है, और इस पौधे पर समयानुसार सुविशुद्ध व्यवहार का फूल विकसित होने मे समय नही लगता है। इस फूल से प्रसारित होती चारित्र की महक वातावरण मे पवित्रता की सुवास को प्रसारित

करती है। इस प्रकार आहार शुद्धि जीवन के सर्वतोमुखी विकास का पाया है।

आहार शुद्धि एक ओर तो हृदय की शुद्धि प्रतिना प्रदान करता है तो दूसरी तरफ देह की शुद्धि (रोग मुक्ति) के लिए यह सहायता प्रदान करता है। रोग का मूल जीभ की लालसा है। आहार शुद्धि इस लालसा पर अंकुश लगा करके इसे नियंत्रण में रखती है। यह लालसा नियंत्रण में आने के बाद रोगों की संभावना कम रहती है। मानसिक वाचिक कायिक विकास की त्रिवेणी का उद्गमधाम आहार शुद्धि है। ऐसी आहार शुद्धि का आचरण ही परम और चरम सफलता का वरण करता है। यदि हम इस तालीम से प्राप्त शक्ति को तप युद्ध के मैदान में छोड़ दें तो विजय की वरमाला पहनेंगे।

विज्ञान के द्वारा वृद्धिगत सुविधाओं ने इतनी अधिक दुविधाएं उत्पन्न कर दी है कि आज का मानव एक आंधी की भांति हिम सहने की अपेक्षा अधिक से अधिक कायर सिद्ध हो रहा है। इस कायरता की कतार को तो देखो।

होटल रेस्तरां में पदार्थों के लटकते बोर्डों को देखकर ही उसकी भूख भभक उठती है। और कोका-कोला जैसे पेय पदार्थों की प्याली को देखते प्यास ही असह्य बन जाती है।

भक्ष्य अभक्ष्य के बीच की भेदरेखा को ऐसे इस युग में "एक जाओ" की ताल बजाती हुई आहार शुद्धि प्रकाश का यह प्रकाशन अनेक दृष्टिकोणों से प्रशंसा योग्य है। जनता इस प्रकाशन का अंतर से सत्कार करती है। अति अल्प समय में गुजराती और हिन्दी में इसके अनेक संस्करणों का प्रकाशन इसकी ख्याति का सबूत है।

पश्चिम की हवा से प्रभावित हुआ एक वर्ग आज बात बात में वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ही देखने की अर्थदा में डूबा हुआ है। इस वर्ग को भी विचार करने का अवसर प्राप्त हो, इस हेतु भक्ष्याभक्ष्य विषयक अपनी मान्यताओं की पुष्टि करने वाले वैज्ञानिक दृष्टिकोण भी इसमें संग्रहित है।

वर्धमान तपोनिधि प्रभावक प्रवचनकार पू० आचार्य श्रीमद् विजय भुवन भानु सूरिश्वर जी महाराज के सफल निर्देशन व निश्रा मे सम्पन्न सं. २०२१ सन् १९६५ मे पाटण के ज्ञान पर्व मे शांतमूर्ति पू० मुनिराज श्री राजेन्द्र विजय जी महाराज ने दोपहर के समय भक्ष्याभक्ष्य विषय पर वाचना दी। इस वाचना का अनेक ग्रथो के आधार पर सकलन ही यह पुस्तक है।

आहार की अशुद्धि के अंधकार मे भटकता आदमी आहार की शुद्धि प्रकाश मे धीरे धीरे प्रवास आरम्भ करे, इसी पुण्य-प्रतिक्षा के साथ पूर्ण विराम।

भोजनिक नहीं, भजनिक बनों

- भोजन जितना कम, उतना भजन अधिक, भोजन भजन को भुलाने वाला न हो।
- भोजन जितना सादा उतना जीवन अच्छा।
- भोजन अधिक अच्छे भजन के लिए है।
- भोजन देह के लिए और भजन आत्मा के लिए है।
- शरीर का स्वास्थ्य भोग का कारण न हो, किंतु जो योग का कारण हो तो वह आत्मा के सुख का प्रसाद रूप है।
- शरीर में अल्प से अल्प सुख वृद्धि का भाव रहता है। तब तक सर्वथा मोह नाश सम्भव नही है ।
- जैसा अन्न वैसा तन और जैसा तन वैसा मन।
- देह सुख यह भोग साधना है।
  आत्म सुख यह योग साधना है।
- तप मात्र विशुद्धि का ही मार्ग नही है अपितु सिद्धि का मार्ग भी है।

वासना विजय के लिए तप आवश्यक

—जे० वान० लीट

अमेरिकी तत्वचिंतक स्व. सा जे. वान लिट ने "कान्कवेस्ट आफ दी माइंड" नामक अति प्रेरक व चिंतनात्मक पुस्तक लिखी है। इस शीर्षक का अनुवाद वासना विजय या काम विजय होता है। कामवासना पर कैसे विजय प्राप्त कर, इसका सुन्दर निरूपण इस पुस्तक में किया गया है। इस पुस्तक के "शुद्ध खुराक" नामक प्रकरण में लेखक लिखते हैं कि —

शाकाहार का एक महत्वपूर्ण लाभ यह है कि जीव की स्वाभाविक वृत्तियों की तीव्रता कम करने में यह मदद करता है। अनेक प्रकार से इस विषयमें सिद्ध हो चुकी जो एक हकीकत प्रकट हुई है कि मांस और वैसे ही प्राणियों से प्राप्त अधिकांश आहार विशेष रूप से विकारोत्तेजक गुणों से युक्त होते हैं। जीव के आवेगों को काबू में लेने के आदर्श के प्रति सहानुभूति रखने वाले सभी व्यक्तियों को अपने नित्य आहार से प्राणीजन्य पदार्थों को छोड़ देना चाहिए।

दूसरे आहार के शुद्धिकरण हेतु पेट पूजा को महत्व देने से दूर रहना भी जरूरी है। इसी प्रकार शुद्धिकरण के लिए कृत्रिम रूप से बनाई गई चटपटी वस्तुएँ पाक कला में स्वाद को विकृत करने वाली जीभ और तलुओं को बहकाने वाले मसालों शरीर की पाक क्रिया का जरूरी हो उसमें अधिक स्नान प्रजनन ग्रंथियां पर अनावश्यक दबाव न लाने के लिए अंतडियों के अग्रभाग को ठूंस ठूंस कर खाकर अवरोधित करने से भी दूर रहना जरूरी है।

ऊंघ के समय प्रजनन ग्रंथियों पर पड़ते दबाव को रोकने, काम विषयक स्वप्न टालने के लिए सोने के कुछ घंटे पहले तक कुछ भी खाना अथवा पीना छोड़ देना उचित है।

एक साथ दो दिनों के मिश्र फल और शाक भाजी पर निर्भर रहकर तथा बीच बीच में एक दिवस का निराहारी उपवास करना अनेक प्रकार से कीमती साबित होगा।

पर्व तिथियों पर उपवास करने की बात का उक्त वर्णन समर्थन करता है। उणोदरी, वृत्ति संक्षेप, रस त्याग के तप की सार्थकता को सिद्ध करता है।

परिशिष्ट

लेखक—कुमार पाल वि. शाह, बम्बई

प्रिय मित्र,

सस्नेह आत्म स्मरण। तुम्हारा पत्र मिला। तुम लिखते हो, कि मुझमे जैसी चाहिए, वैसी स्फूर्ति और ताजगी नही है। बेचैन और बेदिल रहता हूं। प्रत्येक बात मे ऊब अनुभूत होती है। न तो मुझे ताप है, न खांसी है और न ही कोई बिमारी है, फिर भी जीवन अनिच्छा से जी रहा हूं। ऐसा हमेशा लगता है, इसका क्या कारण है?

मेरे मत मे एक ही मुख्य और महत्व का कारण अजीर्ण अथवा अकाल भोजन अथवा ये दोनो है।

तुम्हे याद दिलाता हूं, कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचद्राचार्य महाराज ने गृहस्थ धर्म का एक सामान्य स्वरूप समझाया है, इसमे वे लिखते हैं कि **"अजीर्ण भोजनं काले भुक्ति सात्म्यादलौल्यत"** अर्थात्

अजीर्ण हो, पेट मे कब्जियत हो, मल शुद्ध और बराबर न होता हो, पतला होता हो, मल गधाता हो, शरीर टूटता हो, भोजन की रुचि न लगती हो, डकार खट्टी आती हो, पाद गधाती हो तो भोजन नहीं करना चाहिए।

तुम्हे इस प्रकार का कुछ तो नही हुआ न? इनमे से एक या एक से अधिक कुछ हुआ हो तो, तुझे अजीर्ण है। प्राचीन तथा अर्वाचीन, पूर्व तथा पश्चिम के सभी डाक्टर, वैद्य, हकीम और सत तथा ज्ञानी कहते हैं कि अजीर्ण हो तो भोजन करना अनेक रोगो को नियत्रण देने जैसा है।

इसलिए **'काले भुक्ति सात्म्यादलौल्यत.'** अर्थात् योग्य काल मे स्वाद की लालच बिना, स्वयं की प्रकृति के अनुरूप, हितकर, पथ्य और परिमित भोजन करना चाहिए। मै यहां तुझे मार्गानुसारी के दो महत्व के गुणो के विषय मे लिख रहा हूं।

मेरे मित्र ! इन दो सूत्रों को बारम्बार पढ़ और विचार कर। इन सूत्रों में आरोग्य और तंदरुस्ती ने अपने हस्ताक्षर किए हैं। साथ ही यह भी नोट कर कि आहार आरोग्य को आधार मिला है। आहार और आराधना का भी घनिष्ठ संबंध है। भव मुक्ति के लिए आरोग्य और आराधना दोनों आवश्यक हैं इसलिए आहार के विषय में यथा योग्य ज्ञान हो और उसे जानने के अनुसार आचरण होना अनिवार्य है।

आहार का विषय अत्यधिक विस्तृत है। इस मुख्य विषय के अन्दर अनेक उपविषय हैं, जैसे शाकाहार, मांसाहार, रात्रि भोजन, अभक्ष्य द्विदल पौष्टिक आहार, सात्त्विक आहार आदि। पत्र के आकार की मर्यादा होने से पत्र में स्वास्थ्य के सम्बन्ध में आहार के विषय थोड़ा इशारा ही करता हूँ।

प्रथम तो यह जान ले कि स्वस्थ किसको कहते हैं। स्वास्थ्य क्या है? इस विषय में एक कवि ने लिखा है।

समदोषः समधातुः समाग्निश्च मलक्रिया।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थः इत्यभिधीयते ॥

कवि कहते हैं कि जिसके वात पित्त और कफ ये तीन दोष सम हों, अग्नि सम हो धातु क्रिया और मल क्रिया सम हो, और जिसका मन, इन्द्रिय और आत्मा प्रसन्न हो, वह स्वस्थ है।

सम दोष सम अग्नि सम धातु क्रिया और सम मल क्रिया ये सभी शरीर सापेक्ष हैं, परन्तु स्वास्थ्य मात्र इतने से ही नहीं प्राप्त हो जाता। स्वास्थ्य के लिए अनिवार्य है कि अपनी इन्द्रिय मन और आत्मा तीनों प्रसन्न हों, यह स्वास्थ्य का विधायक स्वरूप है।

स्वास्थ्य अच्छा हो तन मन और आत्मा प्रसन्न हों, तो धर्म साधना भी अच्छा होगा। साधना के लिए स्वास्थ्य रक्षा जरूरी है, स्वास्थ्य रक्षा के लिए शरीर रक्षा भी जरूरी है। शरीर की संभाल के लिए आहार की संभाल भी जरूरी है। इस प्रकार आत्मा को परमात्मा बनाने में आहार मास्टर की का काम करता है। आहार के आधार पर अनाहारी बनना है। आहार के विवेक और क्रमवश त्याग से अनाहारी बनना है।

अनाहारी या अरिहंत बनने का प्रथम चरण है—भूख लगे तभी खाओ।

को जो रुचिकर लगे खाते उसी को है। रस और स्वाद के लिए नहीं खाना है, अपितु पेट का भाड़ा देने के लिए खाना है। यह देह किराए का घर है आत्मा जब तक इसमें है तब तक किराया चुकाना है। यह तो अनिश्चित मत है कि मात्र सांकेतिक किराया ही देना है। फिर भाण पर बढ़कर स्वादिष्ट घी से लथपथ मिठाईयाँ खाना चटाकेदार शाक और आचार खाना, दाल और खीर को सबड़ना यह तो आत्मा का अपराध है। रस लोलुप बनकर खाने से हम स्वयं अपने जीवन के प्रति अन्याय कर रहे हैं। इसीलिए एक डाक्टर ने व्यंग्य में कहा है— अधिकांश लोग आधा अपने लिए खाते हैं और आधा हमारी जेब भरने के लिए।

पथ्य खाना अर्थात् पचे वही तथा जितना पचे उतना ही खाना। प्रत्येक की शारीरिक प्रकृति एक सम न नहीं होती। खाया हुआ सब कुछ पच जाता है ऐसा नहीं मानना है। भारी खुराक को पचने में समय लगता है, और हल्की खुराक जल्दी पच जाती है। खाया हुआ पदार्थ पचे नहीं तो शरीर बिगड़ता हैं, शरीर भारी लगता है। बेचैनी महसूस होती है अतः उपयुक्त तो यह है कि जिस पदार्थ के खाने से शरीर के सम रस हो जाए। खाने के बाद अकुलाहट न हो ऐसा ही पथ्य आहार लेना चाहिए। क्योंकि भोजन जितना सादा और सात्विक होगा जीवन भी उतना ही अच्छा होगा।

भोजन परमित होना चाहिए। खिलाने वाला तो आग्रह पूर्वक अधिक से अधिक खिलाता है। भोजन तैयार करने के लिए अच्छा रसोइया रख लिया किन्तु खाने में तो सिर्फ दो प्रकार के ही व्यंजन आयेंगे। किन्तु उससे ऐसा समझने या लेमाग्रह वश होकर बगैर पेट भर जाए ऐसा ठसाठस नहीं खाना है जो तक आहार करता नहीं है। खाने में भी मात्रा का ध्यान रखना है। यही मैं उणोदरी तप की ओर तुम्हारा ध्यान आकर्षित करता हूं। भोजन घटाना है, पेट घटाना नहीं भूख की तुलना में चार पांच कवल कम खाना। भूख मरने से मृत्यु हो सकती है ऐसा अनेक स्थानों पर लिखा है किन्तु कम खाने से मृत्यु के विषय में कहीं नहीं लिखा है। स्वास्थ्य रक्षा और उसी प्रकार धर्म साधना के लिए भूख से कम खाना अनिवार्यता है।

इस संदर्भ मे एक अनुभव की बात कहता हूँ, हम दो मित्र एक मित्र के व्यावहारिक प्रसग पर भोजन हेतु गए, यजमान मित्र ने प्रेम और आग्रह से जिमाया। मेरे साथ के मित्र ने यजमान मित्र के आग्रह से अच्छा खाया। यजमान मित्र जाते समय पूछता है 'क्यो ? भोजन कैसा लगा ?'

यजमान मित्र ने जीमन मे विविध प्रकार के पकवान और खाद्यान्न बनाये थे। अनेक प्रकार की चटनी और आचार भी बनाये थे। इन पदार्थों की प्रशंसा उसने सुनी थी। किंतु मेरा साथी मित्र खा कर ऐसा हो गया कि कुछ भी बोल नही सकता था। मैने कहा—आने वाले सप्ताह मे तुम मेरे यहाँ भोजन करने आओ, तब तुमको जवाब मिलेगा।

अगले रविवार मेरे यहाँ ये मित्र जीमने आये। मेरे यहाँ सादी रसोई ही बनी थी, कोई मिठाई नही, कोई खारा नहीं। रोटी, साग, छाछ, सभी जीम रहे थे, तब पहले मित्र ने अपना जवाब मांगा।

मित्र ने कहा—जवाब तो आपको अपने आप ही मिल गया है। तुम्हारे यहाँ से आने के बाद मुझे पाचन की गोली लेनी पड़ी, और दो–चार घंटे लेटना पड़ा। जबकि तुम यहाँ से दौडकर आफिस भी जा सकते हैं।

वह मित्र भूख से अधिक खाया था, रस लोलुप बनकर ठूंस कर खाया था, इससे परेशान हुआ था। तन मन की स्वस्थ्यता उसने गुमा दी, मेरे यहाँ सात्विक भोजन लिया, भूख से कम खाया, इसलिये हँसते-हँसते वह मेरे यहाँ से गया।

भूख से कम खाने को उणोदरी तप कहा गया है। यह तप सदैव करना चाहिये। पेट हल्का रहने से धर्मसाधना मे स्फूर्ति और ताजगी रहती है, आत्म ध्यान मे मन को एकाग्र करने मे सरलता रहती है। सादे भोजन से विचार सात्विक रहते है, विगई का जीमन विचारों का भ्रमण कराता है, जीमन आत्म रक्षण करने वाला होना चाहिए।

प्रिय मित्र ! यह तो तुझको सिर्फ तन के खुराक की बात कही है, मुह से लिये जाने वाले आहार की बात कही है, किंतु तुझे यह जानकर आश्चर्य होगा

कि हम आँखों से भी खाते हैं, नाक से भी खाते हैं, कान से भी खाते हैं, और चमडी तथा त्वचा से भी खाते हैं।

आहार के विषय में यह भी नोट कर ले कि रूप सौंदय, यह आँख का आहार है। मीठा मधुर संगीत कान का आहार है सुवास और सुगंध यह नाक का आहार है, चिकना और मुलायम स्पश यह त्वचा का आहार है, शरीर के रोम रोम से आहार लिया जाता है।

मैं तो 'खाते खाते मर गया' खाने के बाद के ये उद्गार क्या सूचित करते है। यही कि भोजन की तृप्ति हो गई। भोजन न करें या न भाता हो वह खाये तो आकुलता प्राप्त हो जाती है, इस दृष्टि से सभी इंद्रियों का विचार करना है। आंख को रूप देखना रुचिकर लगता है, रूप देखकर ये तृप्त हो जाता है नाक को सुवास सुखकर प्रतीत होती है फूल और इत्र सूंघकर ये तृप्त होती है। इंद्रियो को मनानुकूल पदार्थ न मिले तो ये आकुल हो उठती है। मन व्याकुल हो तो हम स्वस्थ्य है ऐसा कैसे कहा जा सकता है।

आरम्भ में स्वस्थ और स्वास्थ्य किसे कहे यह बताया है तो यदि खाने देखने स्पर्श करने से आत्मा प्रसन्न न बने तो समझना चाहिए कि हम न लेने योग्य आहार ले रहे हैं। आत्मा के आरोग्य, प्रसन्नता के लिये आहार लेना है आत्मा की शांति और शुद्धि के लिए आहार लेना है।

तन से आहार लेना है, मन से आहार लेना है आत्मा से आहार लेना है। विविध खाद्य पदार्थ तन के आहार है विविध विचार ये मन के आहार है। विविध भावनाएँ ये आत्मा का आहार है।

बिमारी और रोग न होने पर हम मानते हैं कि हम स्वस्थ्य हैं। हमारा स्वास्थ्य अच्छा है। बिमारी के अभाव के अनुभव को ही स्वास्थ्य न मानिए स्वास्थ्य की उपस्थिति और उसकी सत्यता का अनुभव कीजिए।

स्वास्थ्य की स्वस्थ्यता के अनुभव हेतु आवश्यक है कि हम तन को सम्यक शुद्ध और सात्विक आहार प्रदान करें मन को विमल और विशुद्ध सत्यपूत तथा शिवपूत विचार का आहार दें। आत्मा को हम उच्च और उम्दा, पवित्र

और पावन भावनाओं का ही आहार देवें। तन, मन और आत्मा को जब ऐसा सम्यक आहार हम देंगे। तब ही हम स्व में स्थित हो सकेंगे। सच्चा और शाश्वत स्वास्थ्य यही है, कि हम अपने स्व स्वरूप में और स्व-स्वभाव में ही रहें, स्थिर हो जाए।

आशा करता हूँ कि इस पत्र द्वारा मैंने तुझे विचार का जो 'लच बाक्स' दिया है, उसका उपयोग करके तू स्वस्थ बनने का प्रयत्न करेगा। तेरे ऐसे प्रयास में शासन देव तुझे सारी अनुकूलताएँ प्रदान करे ऐसी प्रार्थना है।

तुम्हारा हित मित्र

॥ नमो जिणपवयणस्स ॥
॥ नमो नम गुरु श्री प्रेमसूरये ॥

आहार शुद्धि प्रकाश

जन शास्त्रकारो ने भक्ष्य और अभक्ष्य आहार के विषय पर ही नहीं, इसम भी आगे बढकर उसकी शुद्धि और अशुद्धि के विषय म विचार व्यक्त किए हैं। आहार का सबध सिर्फ शरीर से ही हो ऐसी बात नही अपितु शरीर म व्यापक रूप म व्याप्त मन के साथ भी इसका गहरा सम्बन्ध है जो आत्मा स सबधित है इसलिए आहार के शुद्ध और अशुद्ध होने का प्रभाव मन और आत्मा पर पडता है तदनुसार जीवन बनता है। हमारे परम हितैषी महर्षियो ने अपना बुद्धि शक्ति और ज्ञानिक प्रतिभा स परिस्थितियों को जानकर सात्विक और उच्च सस्कारमय जीवन जीने हेतु क्या खाना ? और क्या न खाना ? इस सबध म विधि निषेधो का ज्ञान कराया है। इनम भी जन महर्षियो ने तो सिर्फ शारीरिक दृष्टि से ही नही अपितु आत्मा को दुख पहुँचाने वाला हिंसा, पाप आसक्ति आरम्भ-समारम्भ, मानसिक प्रसन्नता आत्मिक स्वस्थता शारीरिक निरोगता हृदय की कोमलता इहलोक परलोक सुधार आदि अनेक दृष्टिकोणों स आहार शुद्धि के विषय म गम्भीरता व विस्तार पूर्वक हृदय स्पर्शी विचार करके अभक्ष्य त्याग परम सुखकर है, यह सत्य जगत के सम्मुख प्रस्तुत किया है।

मानव को उत्तरोत्तर आत्म सयम की शिक्षा देकर अनादि कालीन आहार सज्ञा पर तप और त्याग बल स विजय प्राप्त करना है जिसम अणाहारी पद स्वरूप मोक्ष की प्राप्ति हो, जिसम शरीर और आहार का प्रश्न ही सदा काल के लिए समाप्त हो जाय। एक उक्ति बहुत ही प्रसिद्ध है जैसा खाए अन्न, वैसा होए मन। इससे सिद्ध होता है कि शुद्ध आहार स मन निरोगी सयमी पवित्र, शांत-स्वभावी और धर्म भावना वाला बनता है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि आर्य भूमि के मानव के लिए आर्य भूमि का अन्न अनुकूल है न कि अनार्य भूमि का तामस भोजन। मत्स्य आदि आर अनार्य म प्राप्त वनस्पति और खाद्यान्न खाने स अनेक प्रकार के मानसिक शारीरिक रोग अनिष्ट विचार, दुराचार आदि पनपने की सम्भावना का जन्म नहीं होता है। जिस

प्रकार शुद्ध आहार गुणकारी है, वैमी नीति, मत्यता तथा न्याय उसके लिए आवश्यक है, अन्यथा उसका असर भिन्न प्रकार का ही होगा, अत. धन न्याय सम्पन्नता से अर्जित करना जरुरी है। यह शुद्धि का मूल आधार है।

भोजन का सवध मन और आत्मा के साथ होने के कारण आहार का महत्व वहुत अधिक स्वीकृत किया गया है। जैन शास्त्रकारो ने भोजन संवधी विचारणा के केन्द्र मे मन और आत्मा को स्थान प्रदान कर इस जीवन को सुख शाँति और समाधिमय वनाने एव पारलौकिक हित को लक्ष्य मे रखकर आहार विपयक आदेश अथवा विधि निषेध वतलाते हैं।

जैसा अन्न वैसा मन, जैमा मन वैसा विचार।
जैसा विचार वैमी क्रिया, जैसी क्रिया वैसा फल ॥

आहार शुद्धि और आरोग्य

आहार का सवध शरीर के साथ ही नही अपितु मन के माथ भी है। आहार शुद्धि मानव जीवन मे सुमस्कार लाने हेतु आधारभूत आवश्यकता है।

हम सवको शरीर का भरण पोपण करने हेतु आहार लेना पडता है, इस लिए हम जो आहार करते है, वह शुद्ध हो, दोष रहित हो, अभक्ष्य न हो तो उसका परिणाम अच्छा होता है और वह अशुद्ध तथा दूपित हो तो उसका परिणाम खराव होता है। इमलिए आहार की शुद्धि-अशुद्धि पर विशेष विचार करने की आवश्यकता है।

अनेक व्यक्ति कहते है कि "अपना काम पेट भरने का है अत जो मिले वह खा लेना चाहिए, इसमे वाल की खाल उतारने वाली वात क्यो ?" ये विचार मूर्खतापूर्ण है, अधिक स्पप्ट कहे तो ये मनुष्य का अहित करने वाले विचार है। पेट कागज की थैली, जूट की वोरी या लकडी की पेटी तो नही है कि जिसमे चाहे जो वस्तु, चाहे जैसे डाल दी जावे। यह तो जीवित शरीर का एक महत्वपूर्ण भाग है, जिसमे कोई भी वस्तु चीज या पदार्थ डाले, तो उसकी प्रतिक्रिया होती है। इतना ही नही सम्पूर्ण देह तथा मन पर भी उसका अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। अतः पेट मे कोई चीज डालने के पूर्व पूर्णत विचार करना जरुरी है।

जा नोग विना विचार किए कुछ भी खा लेते हैं वे अनेक प्रकार की व्याधियो के शिकार बनते हैं उनकी अकाल मृत्यु भी हो जाती है। हम समाचार पत्रो म अनेक बार पढते हैं, कि भोजन म किसी अभक्ष्य पदार्थ के मिल जाने स किसी व्यक्ति की मृत्यु हो गई किसी को दस्त, किसी को वमन होने लगी, या किसी की दशा गम्भीर हो गयी है। बहुत-सी एसी घटनायें हम स्वय देखते हैं। क्या य सब हम इस बात की चेतावनी नहीं देता है कि हमें आहार क विषय म सावधानी और विवेक रखना चाहिए।

चेतावनी का सायरन बजने पर भी हम सावधान न होवे, अपनी राह न बदलें और आँखें मूद कर दौडते ही चले तो उसका परिणाम गड्ढे म गिरने अथवा हाथ पाव या मस्तक फोडने के अतिरिक्त और क्या हो सकता है?

जिन्हे हम पशु कहते हैं और अपने स निम्न कोटि का समझते हैं, वे भी सब सब्ज पदार्थों को सूघते हैं जाँचते हैं और अपने अनुकूल प्रतीत होने पर ही उसे खाते है तब विवेक गुण स विभूषित हम मानव पूरा विचार, पूरी जाँच पडताल, गुण दोष का विचार किए बिना किसी भी वस्तु को कैसे खा सकते हैं।

आहार का सर्वप्रथम सम्बन्ध आरोग्य के साथ है अत हम इस सम्बन्ध म कुछ विचार करें।

आरोग्य दो प्रकार के होते हैं—१ स्वाभाविक आरोग्य
२ कृत्रिम आरोग्य।

प्रकृति क नियमो का पालन करते हुए नियमित रूप से जीना तथा रोग मुक्त रहना स्वाभाविक आरोग्य है रोग उत्पन्न होने के बाद डाक्टरो और वैद्यो की सहायता स रोगो स छुटकारा पाना कृत्रिम आरोग्य है।

भाव प्रकाश नामक ग्रथ म स्वाभाविक आरोग्य के विषय म वर्णन करते हुए बताया गया है कि—

समदोष समाग्निश्च समधातुमलक्रिय।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमना स्वस्थ इत्यभिधीयते।

'जिसके शरीर म वातादि दोष, जठराग्नि रसादि धातु तथा मल मूत्र की क्रिया समान होती है अर्थात कोप को प्राप्त नहीं होती जिसकी आत्मा,

इन्द्रिय और मन प्रसन्न हो वह मनुष्य निरोग कहलाता है।" यदि ये सब असमान अथवा विषम स्थिति को प्राप्त हो, तो शरीर मे रोग का उपद्रव रहता है। इस रोग के निवारण के लिए औषधि का सेवन करके आरोग्य प्राप्त करना कृत्रिम आरोग्य कहलाता है। इससे समझा जा सकता है कि स्वाभाविक आरोग्य के लिए प्रयत्नशील रहना ही श्रेयस्कर है। अंग्रेजी भाषा मे भी इसी प्रकार की एक लोकोक्ति है—

An aunce of precavtion is worth a Pound of cure

परहेज का एक औंस दवाई के एक पौंड के समान है।

जो लोग आहार विहार मे नियमित नही रहते, वे रोगो का शिकार बन जाते है। रोग के सम्बन्ध मे माधव निदान मे लिखा है—

सर्वेषामेव रोगाणा निदान कुपिता मला।
तत्प्रकोपस्य तु प्रोक्तम् विविधाहित सेवनम्॥

प्राय. समस्त रोगो का कारण कुपित मल ही है। उसके प्रकोप का कारण अनेक प्रकार के अहित (अभक्ष्य) का सेवन है। आहार मे समुचित सावधानी और ध्यान न रखा जावे तो उसके परिणाम स्वरूप शरीर मे मल का प्रकोप होकर ही रहता है।

इस विषय मे सुश्रुत मे भी उल्लेख है—

व्याधिमिन्द्रिय दौर्बल्य मरण चाधिगच्छति।
विरुद्धरसवीर्यादिन भुञ्जानो नात्मवान्नर॥

हमे जो न पचे ऐसे रस और वीर्ययुक्त पदार्थ खाने वाले अजितेन्द्रिय मनुष्य व्याधि, इन्द्रियो की दुर्बलता तथा मृत्यु को प्राप्त होते है।

शरीर के आरोग्य की रक्षा के लिए मिताहारी बनना आवश्यक है, मित आहार का अर्थ है, परिमित नपा-तुला आहार। इस सबध मे चरक ऋषि का यह सिद्धात "हितभुक्, मितभुक्, ऋतभुक्, अरुक" प्रसिद्ध है, इसका आशय यह है कि हितकारी, परिमित तथा ऋतु के अनुसार सात्विक भोजन करने वाला स्वस्थ्य होता है।

शरीर मे उत्पन्न होने वाले अनेक रोगो के कारणो की सूक्ष्मता पूर्वक जाँच करने मे ज्ञात होता है, कि बासी अथवा द्विदल, तुच्छ अथवा अज्ञात फल

चनित रस अथवा बाल अचार (बाल गुजराती गानी [कटियावाड प्रदेश] में आचार का पारिभाषिक शब्द है। गानी के अंतिम अक्षर का द्योतक व्य नागरी में भी नहीं मिलता यह शब्द उस अचार के लिए प्रयुक्त होता है जिसमें खमीर उठ गया हो या मक्खी मिली हुई हो। यह अभक्ष्य है।) मांस अथवा मदिरा मधु अथवा मक्खन, बरफ अथवा आम, बहुबीज अथवा अनन्त काय रात्रि भोजन अथवा जमीकन्द आदि का भक्षण अनेक प्रकार के रोगों को जन्म देता है। विशेषतः अभक्ष्य का भोजन अनेक प्रकार की बिमारियों का जनक है मानसिक स्वास्थ्य की हानि करता है, विकार और वासना को उत्तेजित करता है शरीर के राजा वायु को नष्ट करता है, कलुषित भावों तथा क्रोधादि को उत्तेजित करता है आत्मा को धर्म विमुख और कठोर हृदय वाला बनाता है। दुर्बुद्धि के कारण परलोक में पशु अथवा नरक की गति सुलभ हो जाती है, जहाँ पराधीनता वश कर्म की वेदना को अपार अनुभव असह्य करोड़ों वर्षों तक करना पड़ता है। जीवन में आहार की शुद्धि का महत्व जानने के पश्चात भी हम आहार शुद्ध न करें तो यह उजाले में भी कुएँ में गिरने जैसा हो है।

तामसी भोजन में प्याज, लहसुन मांस मछली, मदिरा, मक्खन इत्यादि उत्तेजना पूर्ण युद्ध के भावों को जागृत करते हैं। इससे राष्ट्र के भविष्य पर बहुत प्रभाव पड़ता है। उदर में पहुँचा हुआ भोजन शरीर मन और धार्मिक मान्यता को प्रभावित करता है। फ्रांस के साम्राज्य की प्रगति में परिवर्तन होने का कारण यह था, कि जब मस्तिष्क को संतुलित रखकर उचित भाव दशा अथवा गुप्त परामर्श करने की आवश्यकता थी, तब नेपोलियन ने प्याज खाया था प्याज खाने के पश्चात आवेश के महान प्रभाव के कारण उसने सेना का मार्गदर्शन करने में बड़ी भारी भूल की। फलतः ल्यूजन (LUTZEN) के महत्वपूर्ण युद्ध में उसे पराजय का सामना करना पड़ा।

दैनिक समाचार पत्रों में साधारण सी बात पर छुरी और चाकू के घाव, लाठी चलना, लड़ाई, झगड़ा और बड़े रोमांचकारी रक्त पात की घटनाएं, बलात्कार, अग्नि दाह, कुएं में डूबने आदि की कहानियाँ पढ़ने में आती हैं इनकी पृष्ठभूमि में प्याज, लहसुन, मांस, मदिरा जैसे तामसिक भोजन साध का सेवन ही कारण होते हैं। मन के क्रोध में आकर उन पर अनुचित पग उठाने में देर नहीं लगती, बाद में पश्चाताप का भी पारावार नहीं रहता कि मैंने मूर्ख ने ऐसी गम्भीर भूल क्यों की है?

अनुभवी वैद्य तथा डाक्टरो का यह निष्कर्ष है कि अधिकतर शारीरिक रोग अनुचित खान-पान के परिणाम है, अत. भोजन मे भक्ष्य अभक्ष्य का विचार आवश्यक है।

★ आहार शुद्धि द्वारा आत्म शुद्धि ★

तदरुस्ती के निमित्त जैसे शुद्ध आहार की आवश्यकता है, वैसे ही शुद्ध व्यवहार भी जरुरी है। व्यवहार के लिए आरोग्य शास्त्र मे विहार शब्द का प्रयोग किया गया हैं। हितकारी आहार के साथ हितकारी विहार का सेवन करने वाले ही आरोग्य का सुख प्राप्त कर सकते है। अमृत के समान भोजन भी अयोग्य विहार के कारण विष बन जाता है। आहार के पथ्य होने पर भी जिह्वा के लोभ के वश मे होकर पेटू बनकर भोजन किया जाए तो उसके परिणाम स्वरूप अम्लता और अजीर्ण उत्पन्न होते हैं। आरोग्य शास्त्र के नियमो के अनुसार अनियमित आहार, असमय मे भोजन (रात्रि भोजन) रात्रि जागरण, चिता, आवेश, अत्याधिक गरम अथवा अत्यधिक ठण्डा पीना, मादक द्रव्य पीना, बहुत कम पानी पीना, दूषित वातावरण मे रहना, बिना परिश्रम किए बैठे-बैठे खाना, तामसिक अयोग्य पदार्थो का सेवन करना ...ये सभी अहितकारी आहार विहार के विविध रूप है, इसलिए इनका खराब असर शरीर पर पडे बिना नही रहता, अर्थात् इससे अस्वस्थता का भय बना रहता है।

आहार का सबध जितना शरीर के साथ है, उतना ही मन के साथ भी है, इसलिए "जैसा अन्न वैसा मन" यह कहावत कही जाती है। दूषित आहार खाने से मन मे दूषित भाव आते है, और सयम भी भग हो जाता है।

नित्य हिताहार–विहार सेवी, सभीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्त:।
दाता सम सत्यपर: क्षमावानाप्तोपसेवी च भवत्य रोग:॥

प्रतिदिन पथ्य आहार और विहार का सेवन करने वाला, विचार पूर्वक काम करने वाला, इन्द्रियो के विषय मे आशक्ति न रखने वाला, दान देने वाला, समता रखने वाला, सत्य निष्ठा वाला, क्षमा करने वाला तथा दुखीजनो की सेवा करने वाला निरोगी कहलाता हैं।

बहुत से लोग कहते है कि शरीर अनित्य, क्षणिक और नाशवान है, मल मूत्र के पात्र जैसा है इसके लिए प्रयत्न करने से लाभ क्या? किंतु शरीर को समझने का दूसरा दृष्टिकोण भी है। हीरे तथा सोने की खानो मे कोयला

तथा मिट्टी के अतिरिक्त दूसरी क्या चीज होती है ? तो भी इन खानों में हीरा और सोना निकलता है और इसीलिए मनुष्य इनके पीछे लाखों रुपयों का व्यय करता है, इसी प्रकार शरीर मल का कितने ही अशुद्ध और दुर्गंधयुक्त पदार्थों से निर्मित हो फिर भी वह आत्मा का मंदिर आत्मा का निवास स्थान है अतएव मनुष्य मात्र यत्न पूर्वक इसकी रक्षा कर और आत्मा का कल्याण करने का काम करे।

मनुष्य देह की प्राप्ति सरल नहीं है। शास्त्रकारों ने इसके दुर्लभ होने के अनेकों दृष्टांत परिभाषित किए हैं। इस देह का उपयोग क्षणिक-नश्वर विषय भोगों के लिए नहीं, अपितु मोक्ष अथवा निर्वाण की साधना के लिए करना चाहिए। इस निर्वाण साधना का आधार संयमादि धार्मिक अनुष्ठानों पर है। संयम आदि धार्मिक अनुष्ठान आहार शुद्धि के आचरण से सिद्ध होते हैं इसलिए आहार की शुद्धि मूलाधार के रूप में अत्यन्त आवश्यक है।

हम जीने के लिए खाते हैं अथवा खाने के लिए जीते हैं ? अनेकों व्यक्तियों को इस बात का स्पष्ट ज्ञान नहीं है। उनसे यह प्रश्न किया जावे तो शायद ही विवेक से यह उत्तर देंगे कि 'हम जीने के लिए खाते हैं।' किंतु उनका व्यावहारिक जीवन देखकर यह प्रतीत होगा कि वे खाने के लिए ही जीते हैं।

इस प्रकार यदि सारा जीवन आहार व भोजन पर ही केन्द्रित हो जायगा तो यम, नियम, संयम अथवा योग की आराधना या ज्ञान की साधना कैसे हो सकेगी।

स्वाद विजय के बिना विषयों पर विजय प्राप्त करना असम्भव है। डॉ० काउएन अपनी Science of a new Life नामक पुस्तक में बताते हैं कि "काम वासना को उत्पन्न करने के कारणों में दूषित भोजन (मांस, मदिरा, मधु, मक्खन, अण्डा आदि) मुख्य है। डा० लोव का कथन है कि मिठाईयों की रुचि और कुप्रवृत्तियों का घनिष्ठ सम्बन्ध है। जो बालक मिठाई के बहुत शौकीन होते हैं, उनके पतन की बहुत संभावना रहती है। डॉ० किलाग अपनी पुस्तक Plain facts में लिखते हैं—अनेक व्यक्तियों का कथन है कि भोजन एक साधारण कार्य है, किंतु यह अत्यन्त भ्रामक विचार है। शरीर क्रिया विज्ञान के अनुसार मनुष्य के विचार भोजन से ही बनते हैं। जो मनुष्य अचार मैदे की रोटी, मिठाई मांस मछली आदि खाते हैं या काफी-चाय आदि पी

है और तम्बाकू का उपयोग करते है, उनके लिए अपने विचारो को शुद्ध और पवित्र रखना, वायुयान की सहायता बिना आकाश मे उडने जैसा असम्भव है। इस प्रकार का दूषित भोजन करने वाला अपना व्यवहार पवित्र रख ले तो यह एक चमत्कार ही होगा, किंतु उसके लिए मानसिक रूप मे पवित्र रह पाना सर्वथा असम्भव है। अयोग्य खान-पान तो पवित्रता का दुश्मन है। इसकी परछाई भी ग्रहण करने योग्य नही है।

डॉ० काउएन अमेरिका के सुप्रसिद्ध एम डी. है. जिन्होने अमेरिका मे विज्ञान की दृष्टि से ब्रह्मचर्य के अनेक लाभ प्रमाणित कर, इसके प्रचार का भागीरथ प्रयास किया है। वे ब्रह्मचर्य साधक के लिए आहार के विषय मे निम्नानुसार परामर्श दिया है—

(१) मिताहारी होना व यथा सम्भव सात्विक भोजन करना सिर्फ जीने के लिए ही खाइये, स्वाद के लिए एक कौर भी अधिक नही खाना। विकार-वासना, तामस-भाव जगाने वाला (अभक्ष्य) भोजन नही करना।

(२) तेल, मिर्च, मसाला, राई, अचार आदि पदार्थ शरीर मे आलस्य उत्पन्न करते है, पसीने मे दुर्गन्ध लाते है, और कामोत्तेजक है, अतः इन्हे छोड देना चाहिए। मीठा व नमक को भी यथा सम्भव नही उपयोग करना चाहिए। प्रत्येक प्रकार का तामसिक आहार, वहुत खट्टा, वहुत तीखा, वहुत कडवा और वासी पदार्थ भी त्याग देना चाहिए।

(३) शराव और तम्वाकू जेसी मनुष्य को भ्रष्ट करने वाली दूसरी कोई वस्तु नही है। इसलिए ब्रह्मचर्य साधक को इसका सदैव के लिए त्याग कर देना चाहिए। जो मनुष्य इन बुरी आदतो मे लिप्त रहते है, वे ब्रह्मचर्य पालन करने मे कमजोर रहते है।

(४) हलवाई को दुकान पर विकने वाली और इसी प्रकार बाहर की सभी मिठाईयो, भजिया और तले पदार्थों का हमेशा के लिए त्याग करना चाहिए।

इस प्रकार पूर्व के महर्षियो के साथ-साथ आधुनिक विचारक भी आहार शुद्धि की आवश्यकता को स्वीकार करते है। अत. अभक्ष्य का त्याग करना और भक्ष्य वस्तुओ मे सतोप करना बुद्धिमान मनुष्यो का कर्त्तव्य है, जीवन शुद्धि का सोपान है।

स्वाध्याय

आहार शुद्धि और आरोग्य के प्रश्न

१ देह में होने वाली आहार की प्रतिक्रिया को स्पष्ट करो।
२ पशुओं के आहार की पद्धति किस प्रकार की है ?
३ आरोग्य के कितने प्रकार हैं ? उनमें से कौन सा अपनाया जाय ? चर्चा कीजिए।
४ सुश्रुत के अनुसार आहार के सम्बन्ध में क्या सावधानी आवश्यक है ?
५ युक्ति व तर्क से यह समझाइये कि तामस भोजन का अन्य क्षेत्रों पर क्या प्रभाव पड़ता है।
६ 'शरीर आत्मा का मन्दिर है।' किस प्रकार ?
७ प्राचीन व आधुनिक विचारक किस विषय में एकमत है और किस प्रकार ?

जीवन की सुन्दरता के सच्चे विटामिन तथा शुद्ध आहार

ज्ञानियो का कथन है कि इस अनमोल जीवन को सुधारने का प्रयत्न किया जावे तो विकास दूर नही है। किंतु इस जीव ने आत्मा और मन के मूल्य को नही समझा है, जितना कि शरीर के मूल्य को समझा हैं। अभक्ष्य पदार्थो से शरीर-मन-जीवन विगडते है, जिसमे सारी व्यवस्था अव्यवस्था में परिवर्तित हो जाती है, दैनिक जीवन मे परिवर्तन हो जाता है अत. जीवन को स्वस्थ और सुन्दर व प्रसन्न बनाने के लिए वास्तविक, विश्वसनीय विटामिनो का ज्ञान प्राप्त कर खान-पान के अनर्थ से बचना आवश्यक है।

विटामिन A अर्थात् ABILITY=शक्ति

स्वास्थ्य की सुरक्षा से शक्ति प्राप्त होती है। स्वास्थ्य तीन प्रकार का है—(१) शारीरिक (२) मानसिक (३) आध्यात्मिक। वर्तमान समय में शरीर की चिन्ता करने वाले अनेक है, शरीर के विकार ग्रस्त होने का कारण है, धर्म विरुद्ध अभक्ष्य पदार्थो का अनियमित व स्वास्थ्य बाधक सेवन। यदि शरीर को स्वस्थ्य और निरोगी रखना हो तो अभक्ष्य पदार्थो का नियम पूर्वक त्याग करना चाहिए, भोजन मे विवेक और सयम का अभ्यास करना जरुरी है। इससे शरीर पूर्णत. स्वस्थ्य रहेगा तथा रोगो को शरीर में स्थान नही मिल सकेगा।

दूसरी स्वस्थ्यता मानसिक है। प्रसन्नता, स्थिरता और शांति इन तीन बातो पर मन की स्वस्थ्यता आधारित है। जिसके हृदय में काम वासना की आग बलती हो, जो भयभीत हो, जिसके मस्तिष्क मे चिन्ता के जाल बुने हो, वे कभी भी प्रसन्नता का अनुभव नही कर सकते है। जिसके जीवन मे शोक और वासना है, वह कभी स्थिर भी नही रह सकता है और जिसके हृदय मे लोभ और तृष्णा है. वह कभी भी शांति की अनुभूति नही कर सकता है। अतः काम क्रोधादि को उत्पन्न करे, ऐसे अनुचित मद्यपान, माँसाहारी, कन्द-मूल, रात्रि भोजन, वेगन आदि अभक्ष्य पदार्थो का त्याग करना चाहिए, अन्यथा मन की शांति सकट में रहेगी। विश्व मे जितनी भी वस्तुएँ है, वे सीमित है, आयुष्य भी सीमित है। जबकि प्राणी की इच्छाएँ अनन्त है। तृष्णा रहित अवस्था

की प्राप्ति कठिन अवश्य है किंतु असम्भव नहीं। मनुष्य वृद्ध हो जाता है, किंतु बाल्यपन में पड़ी हुई बुरी आदतों और वासनाओं का परित्याग नहीं कर पाता है। वृद्ध हो गया दांत टूट गए पेट में डाला गया पदार्थ पचता नहीं है, फिर भी अनेक न पचे ऐसे पदार्थों को खाने की इच्छा जागृत रहती है, जिनके उपभोग के कारण अनेक पीड़ाओं को भोगना पड़ता है। इसलिए ज्ञान दृष्टि से विवेक पूर्वक वृत्तियों की दिशा बदलना सीखो, भोजन में सुधार करो व ऐसे तप त्याग का दिन प्रतिदिन अभ्यास करो जिससे इच्छाओं का निरोध हो सके। इससे इन्द्रियाँ और मन नियमित होगा मानसिक स्वस्थता का अनुभव होगा यही जीवन विकास की सच्ची शक्ति है।

विटामिन-B अर्थात BEAUTY = सुन्दरता

जीवन के विकास के लिए विटामिन B आवश्यक है। आपको उद्यान में जाना रुचिकर लगता है, क्योंकि वहाँ स्वच्छ हवा है सुन्दर हरियाली है, स्वच्छता युक्त व्यवस्था है खिली हुई वनस्पति है रंग बिरंगे फल हैं पानी डालकर भूमि की गरमी को शांत करने से शीतलता है सुन्दर बेल कुंजों और वृक्षों की बहुलता है। पक्षीगण वहाँ आनन्द पूर्वक उड़ते हैं। हम भी अपने जीवन को एक उद्यान बना सकते हैं। मनुष्य का जीवन चैतन्य मय है, इस मनुष्य जीवन में जो अद्भुतता है वह बगीचे में नहीं है। अपने जीवन के उद्यान को हमें वीरान नहीं बनाना है अपितु विकसित करना है। सुन्दर-सुन्दर विचारों और सद्ग्रंथों के पठन से हम उसे खिला दें। मन, वचन और बुद्धि को निर्मल बनाएँ तो हम अवश्य ही सुन्दर बन सकते हैं। इसके लिए आधार भूत बात यह है कि भोजन सात्विक शुद्ध और विकार रहित हो। अभक्ष्य भोजन सौंदर्य अथवा लावण्य का शत्रु है अतः आत्म ज्ञानियों ने इसके त्याग का जो आदेश दिया है वह युक्ति युक्त है।

विटामिन C अर्थात CHARACTER = चरित्र

चरित्र जीवन का अमृत है, जीवन में जब तक सदाचार नहीं है तब तक जीवन व्यर्थ है।

If Wealth is lo t nothing is lost If Health i lost something is lost, But character is lost everything is lost

शरीर धर्म करने का साधन है। शारीरिक तदरुस्ती के अभाव में मनुष्य धर्माराधना मे एक कदम भी आगे नही वढ सकता अत स्वास्थ्य का नाश करने से कुछ हानि होती है परन्तु जिसने चरित्र खो दिया उसका सर्वस्व खो गया। जीवन की शोभा सदाचार से है, चरित्र मे अनेक सद्गुण और शक्तियाँ है।

मनुष्य मे रात-दिन दो प्रकार की क्रियाये होती है, एक शक्ति वढाने की तथा दूसरी शक्ति कम करने की। मनुष्य को पतन से वचाने और विशेष रूप से उत्थान की ओर ले जाने वाला एक ही तत्व है, चरित्र। जिनमे चरित्र बल है, वे खोटी क्रिया और खोटा विचार नही करते है, अपितु सही क्रिया और सुन्दर विचार करने मे आग्रह और ममत्व रखते है। चरित्र मनुष्य जीवन का निर्माण करने वाला शिल्पी है, जो मनुष्य को सर्वोत्तम वनाता है। चरित्र मनुष्य जीवन को देव्य जीवन व ईश्वरीय जीवन मे रूपान्तरित करता है। इसी प्रकार यह अत्यन्त सुन्दर सामर्थ्य भी प्रकट करता है विटामिन (C) से हमारी आत्मा का विकास होगा। ओज, तेज व काति ये सभी वीर्य शक्ति के चमत्कार हैं। वीर्य से जीवन का सृजन होता है, सुरक्षित वीर्य मन में धीरता, शाँति और गम्भीरता को स्थायित्व प्रदान करता है। इसलिए वीर्य नाशक कामोत्तेजक, पान, मदिरा, अश्लील दृश्य, सिनेमा, टी०वी० तथा सस्ते व गन्दे पठन-पाठन से हमेशा दूर रहना चाहिए। वीर्य तो शरीर का राजा है, जवकि अभक्ष्य पदार्थ उसके कट्टर शत्रु है, ये वीर्य का शीघ्र नाश करते है, शरीर के साथ-साथ आत्मा भी मृतक स्वरूप वन जाती है, इसलिए इनसे सावधान रहते हुए चरित्र को शुद्ध और उन्नत वनाते हुए, जीवन का सच्चा आनन्द अनुभूत करो, यही विटामिन C का रहस्य है।

विटामिन D अर्थात् DISCIPLINE=अनुशासन

जब मनुष्य के जीवन मे अनुशासन का अवतरण होता है, तब जीवन उन्नत और श्रेष्ठ वनता है। क्या आज अनुशासन का अभाव नही दिखाई देता है ? जहाँ पर पू० गुरु महाराज उत्तम तत्व समझाते हैं, वहाँ पर श्रोता गण आपस मे वाते करते है, शोर करते है। चाहे जो कोई समाज हो अनुशासन सवके लिए अनिवार्य है। अनुशासन तो जीवन का महत्वपूर्ण व उपयोगी अग है। जीवन सग्राम मे या आध्यात्मिक विकास मे अनुशासन होने पर ही नूतन

प्रकाश प्राप्त किया जा सकता है। अतः हमारा आहार ऐसा उन्मादक न हो जो अहंकार की वृद्धि करे, अभिमानी बनावे, तामसिक भाव उभारे। जीवन में अनुशासन न हो तो शेष गुणों की महत्ता भी कम हो जाती है। अनुशासन व विनय होने से सभी गुणों की प्राप्ति सरल हो जाती है, इसीलिए तो विनय को धर्म का मूल कहा गया है।

नशीले पदार्थों का सेवन तथा व्यसनों का त्याग कर दीजिए। अनुशासन प्राप्ति के लिए विटामिन D आवश्यक है।

विटामिन E अर्थात EDUCATION=ज्ञान (शिक्षा)

ज्ञान दो प्रकार के हैं--बौद्धिक तथा आत्मिक। सिर्फ जानना यह बौद्धिक ज्ञान है इस प्रकार के ज्ञान की खूब अभिवृद्धि हुई है। शिक्षा के साथ साथ अनुभव और आचरण निर्माण होना चाहिए, जिसका आज बहुत अभाव है। ज्ञान अमृत है अमृत की प्राप्ति तो समुद्र मंथन से हुई थी, किंतु ज्ञान तो समुद्र के बिना ही उत्पन्न हुआ अमृत है। यह ज्ञान मृत्यु विजेता बनाने की क्षमता रखता है।

ज्ञान आत्मा का ऐसा ऐश्वर्य है जिस संसार के अन्य किसी बाह्य पदार्थ की आवश्यकता नहीं रहती है। ज्ञानवान् को किसी प्रकार मद नहीं होता। ज्ञान जस जस दौ जाते हैं ... कम करता है। यह जीवन को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करने वाला प्रकाश है। सन्मार्ग पर चलने वाली आत्मा उत्तरोत्तर सुख प्राप्त करती है। इसके लिए जीवन में जड़ता लाने वाले कन्दमूलादि मांस मदिरा मधु मक्खन, अण्डा आदि अभक्ष्य पदार्थों का त्याग करना आवश्यक है। आलू गाजर, शकरकन्द, अरबी, प्याज, लहसुन आदि के कण-कण में अनंता नन्त जीव है इनका आहार जीवन में जड़ता, मन्दता और प्रमाद लाता है।

जड़ता आने से आत्मा अधिक प्रमादी और विषय विलासी बनती है, इससे आत्मा का ओज व गुरुता समाप्त हो जाती है। इसलिए इस विटामिन को स्वीकार कर, सच्चे ज्ञान का सम्पादन करते हुए, आत्मा को अधिक से अधिक निर्मल बनाने, प्रकाशवान बनाने के लिए विकार विषय वासना रूपी कचरे को दूर करो, यही विटामिन E का रहस्य है।

विटामिन F अर्थात् FEDELITY=स्वामी भक्ति

जब किसी सेठ के यहाँ नौकरी करते हो, तो वफादारी या स्वामी भक्ति पूर्वक कार्य करते हो ना? सरकारी ठेको के काम मे व्यक्ति पूरे पैसे लेकर पुल, सडक आदि बनाते है। जिनमे आधे पैसे अपने घर मे रखकर निम्न कोटि की सामग्री का प्रयोग करते है, जिससे थोडे ही समय मे सडकें खराब हो जाती है, पुल टूट जाते हैं।

मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ और बुद्धिशाली प्राणी माना जाता है, अत मनुष्य जीवन मे वफादारी का होना प्रथम आवश्यकता है। कुछ पशुओ मे वफादारी का गुण अत्यन्त विकसित रूप मे देखा जा सकता है, कुत्ते को रोटी का टुकडा देते है, वह रात दिन घर की चौकीदारी करता है।

न्यायोपार्जित धन के सादे और शुद्ध भोजन से स्वामी भक्ति का गुण भी बढता है, अनीति से उपार्जित धन के भोजन और अण्डा, मांस, मछली, शहद, मक्खन, मदिरा के विकृत भोजन से स्वामी भक्ति का धन नष्ट होता है, क्रूरता प्रकट होती है, वफादारी विस्मृत होती है, तत्पश्चात् विश्वासघात करने मे समय नही लगता है। मनुष्य मे अन्य जीवो की भाँति वफादारी दिखाई देना जरूरी है, इसीलिए शुद्ध व भक्ष्य आहार से वफादारी का धन बढाने के लिए F विटामिन को उपयोगी कहा गया है।

विटामिन G अर्थात् GENEROSITY=उदारता

जब हृदय उदार बनता है, तब दूसरो की तन, मन व धन मे सहायता करने की भावना जागृत होती है। परहित की भावना सर्वोच्च भावना है। हृदय मे कोमलता के अभाव में सच्ची करुणा का भाव जागृत नही हो सकता है। अभक्ष्य खान-पान आत्मा की कोमलता के नाशक है, विरोधी है। अभक्ष्यो के सेवन से आत्मा कठोर और निष्ठुर बन जाती है, जिससे किसी की हत्या करना एक खेल बन जाता है, किसी की रक्षा करने या बचाने की भावना अकुरित ही नही होती है। तामसिक शक्ति से दूसरो को मारना काटना सहज हो जाता है, दूसरो को मार कर स्वत को सुखी बनाने का स्वप्न अधिक समय तक स्थायी नही रह सकता है, परन्तु दूसरो का वध करके बाँधे गए अशुभ कर्म इसी जीवन मे मृत्यु से पूर्व गम्भीर रोगो का दर्शन करा देते है।

काल सौकरिक कसाई प्रतिदिन ५०० भैंसों की हत्या करता था, राजा के हुक्म से एक दिन के लिए भी दया पालने को तैयार नहीं था। उसे जबरदस्ती कुए में रखा गया, वहाँ भी उसने मिट्टी के भैंस बनाकर उन्हें हाथ से मारने का प्रयास किया। वस्तुतः कठोर और निर्दयी व्यक्ति को सुधारने का कार्य अत्यन्त कठिन है। कर्मों के भार से लदा हुआ काल सौकरिक मृत्यु के समय अनेक भयंकर रोगों से पीड़ित था। पुत्र सुलस के द्वारा शरीर और पाँचों इन्द्रियों को सुख पहुँचाने के लिए विपुल धन व्यय करने पर भी एक क्षण उसे आराम नहीं मिलता था। असह्य वेदना के कारण वह चिल्लाता रहता था, वास्तव में दूसरे जीवों को भयंकर वेदना देने के पश्चात् स्वयं वेदना अनुभव करने का अवसर आता है, तब मन में यह विचार आता है—भाई! ऐसा दुःख किसी को नहीं देता। इसीलिए ज्ञानी पुरुष हमें पहले ही चेतावनी देते हैं कि अनंत जीवों और असंख्य त्रस जीवों की हिंसा हो, उन्हें मारना पड़े ऐसे अभक्ष्य पदार्थ भोजन के योग्य नहीं है। कर्म का नियम अटल है समय समय पर आत्मा कर्म बाँधती है, अनंत जीवों को पीड़ा प्रदान करने के बाद सुख कैसे मिल सकता है? दूसरों को पीड़ा देकर बाँधे गए निकाचित कर्म अनेकों बार दुःख प्राप्त किए बिना नहीं छूटेंगे।

काल सौकरिक कसाई को शांति प्राप्त हो, इसके लिए अभय कुमार ने विचार पूर्वक उपाय निकाल कर उसे रेशम की मुलायम शय्या से हटाकर, तीक्ष्ण काँटों की शय्या पर सुलाया, मीठे फलों के रस के बदले उसे गंदे नालों का दुर्गंध युक्त पानी पिलाया। सुवासित पदार्थों के स्थान पर विष्ठा से उसके शरीर का लेपन करवाया, शीतल वायु से दूर हटाकर उसे ग्रीष्म से तप्त वातावरण में रखा जाता था। प्रिय मधुर संगीत के स्थान पर गधों एवं ऊँटों की भयावह कर्कश आवाज सुनवाई, तब उसे कुछ शांति प्राप्त हुई और उसने संतोष की श्वास ली, उस जीव की ऐसी दुर्दशा हुई—वह मरकर नरक गया। ऐसी दुरावस्था से बचने के लिए हमारे महान ज्ञानियों ने अभक्ष्य पदार्थों से दूर रहने का जो उपदेश दिया है वह सर्वथा युक्ति पूर्ण है।

आध्यात्मिक विटामिन संबंधी प्रश्न—

१ संसार में अनेक पदार्थ सीमित है अतः क्या करना चाहिए?

२. सिद्ध कीजिए कि अभक्ष्य आहार सौंदर्य का शत्रु है ।
३. चरित्र में विद्यमान सद्‌गुणों की व्याख्या कीजिए ।
४. अनुशासन के अभाव में उत्पन्न स्थिति की चर्चा करो ।
५. ज्ञान का उपयोग सही रीति से किस प्रकार करोगे ?
६. आहार के साथ नीति अनीति के विचारों का क्या संबंध है ?
७. शुद्ध आहार से जीवन में उदारता आती है, इसे समझाइये ।

अनाहारी पद के लिए मानव जीवन

जीवन का उद्देश्य क्या होना चाहिए ?

इस जीव को आहार संज्ञा के संस्कारों के कारण अनेक प्रकार के आहार के रसास्वादन की तीव्र इच्छा होती है। आहार ग्रहण करने के पश्चात उसकी अच्छी खराब प्रतिक्रिया भी जीव अनुभूत करता है।

जैन दर्शन में अनाहारी पद पर विशेष जोर दिया गया है। हमारा यह शरीर तो धर्म क्रियाओं का वाहक है उसकी कुशलता के लिए या इसे स्थिर रखने के लिए आहार की आवश्यकता होती है, इस दृष्टि से इसका पोषण करना अनिवार्य है किंतु यह पोषण विरक्त भाव से होना चाहिए, शरीर की ममता की भावना न रहे। यह शरीर एक वाहक या वाहन वत है, जिससे हमें आत्म शुद्धि का लक्ष्य सिद्ध करना है इसीलिए इसे आश्रय देना चाहिए।

जो आत्मा शरीर रूपी घर में निवास करती है उसे पूर्णत शुद्ध करने के लिए और सदा के लिए शरीर का दुखदायी बंधन तोड़ने के लिए भोजन संबंधी विवेक आवश्यक है। उत्तरोत्तर भोजन की इच्छा भी नहीं रहने पाए ऐसी उच्चकोटि की समाधि अवस्था की प्राप्ति कर मानव जीवन में रत्नत्रयी के पुरुषार्थ बल से हमें मोक्ष फल की प्राप्ति करनी है। इसके लिए त्रिविध हिंसा से रहित मुनियों का निर्दोष आचार सर्वोत्तम है जिसमें आहार विषयक सावद्य पाप युक्त क्रियाएँ न की जाती हैं, न कराई जाती हैं और न ही उनका अनुमोदन किया जाता है। ऐसी उत्कृष्ट चर्या का पालन संयमी वर्ग के लिए है।

अब धर्म पर श्रद्धा रखने वाला गृहस्थ वर्ग रह जाता है इन्हें भी जैसा बने वैसा आहार संबंधी कम से कम आरम्भ समारम्भ, अधिक हिंसा युक्त अभक्ष्य आहारों का त्याग व रस की आसक्ति को वश में करने के लिए तप, त्याग इत्यादि का अभ्यास करना जरूरी है। शरीर में जैसा आहार डाला जावेगा उसी के अनुसार रस और रक्त का निर्माण होगा। तदनुरूप मन की विचार पद्धति और आत्मा की प्रकृति विकृति का निर्माण होगा। आत्मा के मूल स्वरूप को प्रकट करने के लिए अनंत ज्ञानी सर्वज्ञों ने प्रथम चरण में अभक्ष्य पदार्थों के खान पान के त्याग तथा आहार संज्ञा पर विजय प्राप्त कर अहिंसा, संयम और तप का अभ्यास करने का उपदेश दिया है।

शरीर आत्मा का शत्रु न बन जाए। इस विषय मे विशेष सावधानी की आवश्यकता है अन्यथा अनुपयुक्त आहार से नाशवान शरीर तो छूटेगा ही, साथ-ही साथ कर्म का कटा दण्ड दीर्घ काल तक आत्मा को नए-नए शरीर मे भोगना पडेगा।

शरीर की सार सम्भाल के लिए कैसा विवेक आवश्यक है, इसे देह और आत्मा के संबध मे ज्ञाता धर्म सूत्र के इस उदाहरण से समझा जा सकता है–

—. एक बेड़ी में जकड़े दो कैदी :—

राजगृह नगर मे धन्य नामक एक महान सार्थवाह रहता था। उसकी धर्मपत्नी का नाम था, भद्रा। बडी आयु मे उसे एक पुत्र की प्राप्ति हुई। उस पुत्र की देख-भाल करने के लिए उन्होने अपने यहाँ पंथक नामक एक नौकर रखा। वह नौकर सौपे गए सभी कार्य भली-भांति करता था, इसलिए सेठ का विश्वास पात्र नौकर बन गया।

उसी नगर मे चॉडाल के समान क्रूर हत्यारा, भयकर विश्वासघाती, निर्दयी विजय नामक चोर रहता था। वह तीर्थ स्थलो को लूटने मे भी संकोच नही करता था, तो अन्य स्थानो की बात ही क्या?

धन्य सार्थवाह ने अपने पुत्र का नाम देवदत्त रखा। वह अपने माता-पिता की एक मात्र संतान थी, उसका जन्म भी माता-पिता की प्रौढावस्था में हुआ था, इसलिए वह बहुत अधिक लाडला था। माता भद्रा ने उसके लिए अनेक प्रकार के आभूषण तैयार करवाये थे। एक बार पंथक सायकाल आभूषण पहने देवदत्त को लेकर उद्यान मे भ्रमणार्थ गया, वहाँ उस बालक और उसके द्वारा पहने गए आभूषणो पर विजय चोर की नजर पडी। उसने मौका पाकर बालक को पकड लिया और बगीचे से भाग गया।

रोते-रोते पंथक थोडी देर मे घर पहुँचा, और बालक के अपहरण का समाचार बताया। यह सुनते ही धन्य सार्थवाह और उसकी पत्नी भद्रा मूर्छित हो गए। देवदत्त की खोज के लिए चारो दिशाओ में आदमी भेजे गए, परन्तु कही भी उसका पता नही लगा। अन्त मे शहर के कोटवाल ने अपने सैनिको की मदद से देवदत्त की खोज शुरू की। शहर के पुराने कुएँ से उसकी मृत देह प्राप्त हुई, तत्पश्चात् विजय चोर की खोज आरम्भ की गई, और उसे महत्व-पूर्ण माल के साथ गिरफ्तार कर लिया गया। उसे कारावास का दण्ड दिया गया।

समय बीतने पर भद्रा और धन्य का शोक विस्मृत हो गया और वे शांति पूर्वक रहने लगे।

एक बार धन्य सार्थवाह ने कोई राज्य अपराध किया, और राजा ने उसे विजय चोर के साथ जेल में रखने का आदेश दिया। इस प्रकार धन्य सेठ और विजय चोर एक ही बेड़ी में बाँधे गए।

धन्य सेठ के लिए भद्रा सेठानी घर से भोजन भेजती थी। एक दिन विजय चोर ने सेठ से याचना की, कि भोजन का कुछ अंश उसे भी देवे। विजय चोर सेठ के पुत्र का हत्यारा था इसलिए उस सेठ ने कुछ भी नहीं दिया। अब भोजन के बाद सेठ को शौच की हाजत हुई तो उसने विजय चोर से उठकर साथ चलने के लिए कहा। परन्तु जब तक सेठ ने प्रतिदिन भोजन प्रदान करने की स्वीकृति नहीं दी तब तक विजय ने उठने से इन्कार कर दिया। आखिर निदान हालत में अतीव पीड़ित धन्य ने भोजन देने की बात अनिच्छा पूर्वक स्वीकार कर ली तत्पश्चात् प्रतिदिन वह भोजन का कुछ अंश विजय चोर को देने लगा।

धन्य सेठ के लिए हमेशा भोजन लाने का कार्य उसका पुराना नौकर पंथक करता था उसने सेठ का यह व्यवहार अपनी नजरों से देखा और घर जाकर भद्रा से कहा। यह सुन कर भद्रा बहुत क्रुद्ध हुई।

कुछ दिन पश्चात जब सेठ जेल से मुक्त होकर घर आया, तब भद्रा सेठानी ने उसके साथ बात तक नहीं की। कारण पूछने पर सेठानी ने कहा— जिसने मेरे पुत्र के हत्यारे को हमेशा अपने भोजन का भाग दिया हो, उससे बात करने में क्या लाभ? तब धन्य सेठ ने कहा—यह सच है कि मैंने विजय चोर को अपने भोजन का अंश दिया किंतु यह कार्य उसके प्रति राग अथवा मित्र भाव से नहीं किया। मैं और वह एक ही बेड़ी में बंधे थे। अपने स्वास्थ्य की रक्षा के उद्देश्य से मैंने भोजन का भाग दिया, ऐसा करने के अतिरिक्त दूसरा और कोई मार्ग ही नहीं था। लघु शंका और शौच की हाजत के समय वह उठे नहीं तो मैं भी किस प्रकार जा सकता था। पहले मैंने उस भोजन देने से इन्कार कर दिया था तब उसने उठने से इन्कार कर दिया, अतः विवश होकर उसे भोजन का अंश देना पड़ा।

इस स्पष्टीकरण से भद्रा का मन शांत हुआ। इस कहानी का सार यह है कि विजय चोर धन्य का कार्य सिद्ध करने वाला था, इसीलिए उसे भोजन कराया गया। इसी प्रकार से हमें जो शरीर प्राप्त हुआ है, वह संयम, अहिंसा, सत्य, त्याग और तप की साधना का अनिवार्य हेतु है, साधन है। अत. इससे कार्य लेने के लिए उचित व शुद्ध भोजन देना आवश्यक है।

शरीर विजय चोर की भाँति महा भयंकर है। जिस प्रकार धन्य सार्थवाह ने अपने पुत्र के हत्यारे को भोजन देकर अपना स्वार्थ सिद्ध किया, उसी प्रकार इस शरीर का भी संयमादि के निमित्त सदुपयोग करने हेतु उचित पोषण करना है और अणाहारी पद प्राप्त कर सदा के लिए शुद्ध होना है।

आहार सिर्फ शरीर निर्वाह के लिए ही ग्रहण करना है, शरीर के रूप, रंग, बल अथवा विषय-वासना की तृप्ति के लिए भोजन नहीं ग्रहण करना है, अन्यथा शरीर पाप का, विलास का साधन बन जाएगा और अनेकानेक भवों तक कर्म बंधन की पीडा भोगनी पडेगी।

चिंतन

प्रश्न—१. एक ही बेडी में बँधे दो कैदियों के दृष्टांत को इस प्रकार लिखो कि शरीर और आत्मा के संबंध का ज्ञान हो।

२. अनाहारी पद प्राप्ति हेतु शरीर की कैसी संभाल करनी चाहिए।

३ शरीर कैसे आत्मा का शत्रु बनता है।

★ शुद्ध आहार–पानी–हवा जीवन है।

★ अशुद्ध आहार–पानी–हवा मृत्यु है।

अहिंसा से रक्षा और हिंसा से युद्ध

जीवन का उद्देश्य तो अणाहारी पद प्राप्त करने का है परन्तु यह तब तक नहीं हो सकता, जब तक सभी में अहिंसा का पालन न हो। सात्विक जीवन जीने के लिए आहार का विवेक जरूरी है। अणाहारी और शाकाहारी जीवन के पीछे करुणा होती है दया का झरना होता है जबकि माँस, मछली आदि अभक्ष्य पदार्थों के आहार के पीछे कठोरता क्रूरता और तामस भाव की वृद्धि रहती है। बम की खोज व अणु विज्ञान में हुई है तो अहिंसा की खोज आत्म ज्ञान में हुई है भौतिक प्रयोगशाला में अणु शक्ति का दर्शन हुआ है, तो आध्यात्मिक प्रयोग शाला में अहिंसा का अनंत शक्ति का दर्शन हुआ है। श्रमण भगवान महावीर ने कहा है—

'आत्मवत्त सव भूतेषु सुख-दुःखे प्रियाप्रिय

स्वयं की भांति सभी प्राणियों को देखो जिसके पास ऐसी आँख है ऐसी दृष्टि है, वह सच्चा मनुष्य है। संसार को रक्त की धारा से रंजित न करते हुए मनुष्य को सच्चा मानव बनना है, इसलिए प्राणी प्रेम, प्राणी बन्धुता की ओर मुड़ना है। एक ईसाई भाई ने यह कहा—भगवान ने विश्व के प्राणियों को मनुष्य के लिए बनाया है मानव सबसे बड़ा है इसलिए मनुष्य किसी को भी खा सकता है। तब ज्ञानी विचारक ने कहा संसार के सभी प्राणियों में मानव बड़ा है, यह तो आप मानते हैं न। तो बड़े भाई का कर्तव्य क्या है? छोटे भाइयों को खाने का या बचाने का। बड़े भाई को छोटे भाईयों का भक्षक नहीं रक्षक बनना है। खावें नहीं अपितु उन्हें खिलावें। यही उनका फर्ज और कर्त्तव्य परायणता है। इससे वे मानव कहलाने लायक रहेंगे, नहीं तो शैतान बन जावेंगे।

Vegetarianism यह केवल प्रचार नहीं है, अपितु एक विवेक पूर्ण विचार है। चिंतन करने से यह ज्ञात होता है कि आहार का उद्देश्य शरीर को स्थायित्व प्रदान करने का है और शरीर द्वारा सुन्दर विचार, सुन्दर भावना सुन्दर काम करना है। हमारी भांति प्रत्येक चैतन्य वंत प्राणी भी सुख की अभिलाषा होती है और वे दुःख से दूर रहना चाहते हैं। तब इन निर्दोष प्राणियों को मारकर पेट भरने से मन में सद्विचार कैसे आ सकते हैं।

बर्नार्ड शॉ के सम्मान में एक भव्य भोज आयोजित था, जिसमे भोजन मासाहार था। बर्नार्ड शॉ ने भोजन आरम्भ नही किया, सभी पूछने लगे—"आप भोजन क्यो नही कर रहे हैं।" प्रत्युत्तर मे बर्नार्ड शॉ ने कहा—My stomach is not a graveyard to bury them मेरा पेट मुर्दों को दफन करने के लिए नही है।" यदि आप पेट को कब्रस्तान बनाओगे तो प्रार्थना कैसे करोगे ? परमात्मा के साथ आत्मवत् कैसे बनोगे ? शाकाहार मात्र पेट भरने के लिए ही नही अपितु पवित्रता के विकास के लिए भी आवश्यक है।

बम सहारक है—अहिसा रक्षक। आज हम देखते है, बडे-बडे राष्ट्र शस्त्रो का सग्रह कर रहे हैं भारी मात्रा मे उन्हे एकत्र कर रहे हैं। उन राष्ट्रो से पूछे कि इस शस्त्र सग्रहण के पीछे उनका ध्येय क्या है, तो वे कहेगे "शाति के लिए, अहिसा के लिए, युद्ध विराम के लिए।" कल्पना कीजिए कि एक व्यक्ति के वस्त्र स्याही से खराब हो गए हैं, जिसे धोने के लिए कोई स्याही भरा लोटा लावे, तो यह मूर्खता पूर्ण, अविवेक पूर्ण बात ही होगी, प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह बात हास्य का कारण बनेगी। स्याही से खराब वस्त्र स्याही से नही पानी से ही स्वच्छ हो सकेगा।

इसी प्रकार शस्त्रो से व्यथित इस विश्व को बचाने के लिए हम अहिसा नही, शस्त्र अस्त्र सग्रह का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं।

आचरण के साथ-साथ बुद्धि भी विपरीत हो गई है, इसका मूल कारण पेट है, जिसमे डाला गया पदार्थ अहिसक, निर्दोष और पवित्र नही है। हमारे महापुरुषो द्वारा कहा गया हे, अहिसा परमो धर्म। हम आज अहिसा के मार्ग को भूल तो नही रहे है ना ?

विदेशो से आने वाले विचारवान् शाकाहारी कहते है, कि उनके देश में धन है, समृद्धि है, किंतु बमो का डर है, हिसा का डर है, मन में अशाति और भय है। जिसे दूर करने के लिए अहिसा के अतिरिक्त दूसरा श्रेष्ठ मार्ग नही है। इसी भावना से उन विदेशी सुज्ञ प्रतिनिधियो ने Vegetarian diet स्वीकृत की। शाकाहार सिर्फ पेट भरने के लिए नही हे। अपितु इसका उद्देश्य रक्त की नदियाँ बद करना है, क्रूरता के सस्कार समाप्त करना है और हृदय को प्रेम, वात्सल्य और करुणा के भावो से, सस्कारो से नम्र बनाकर पूर्ण रूपेण दयालु बनाने का है।

आप एक सुन्दर फल को देखते हैं, तो आंखों में प्रेम उमड आता है, सूंघने पर सुगंधि प्राप्त होती है स्पर्श करने पर वह सरल और कोमल प्रतीत होता है जिह्वा पर वह स्वादिष्ट लगता है। किंतु मांस के टुकडे को देखते ही मन में घृणा के भाव आते हैं गंध से नाक में मचकाट आती है, हाथ से छूना अच्छा नहीं लगता फिर यह किस प्रकार पेट में जा सकता है? इस प्रकार की दूषित व गंदी वस्तु पेट में हो तो विचार भी कैसे स्वच्छ आयेंगे? दूषित ही।

युद्ध विराम तब तक सम्भव नहीं है, जब तक मांसाहार का प्रचलन है। युद्ध के मूल में प्राणी हिंसा का भाव ही है जो व्यक्ति प्राणियों के प्रति निष्ठुर होगा वह मानव के प्रति भी क्रूरता के विचार रखेगा। आज मनुष्य का शत्रु वनचर प्राणी नहीं अपितु स्वयं मानव ही मानव का शत्रु है। स्व जाति ही हमारी दुश्मन है। हिंसा की भावना की प्रबलता के कारण आज मारकाट, हत्या आदि बढ़ गई है। इन सबके पीछे मूल कारण है क्रूरता को उत्तेजित करने वाले पदार्थों का पेट में होना।

Vagetarianism is not a fanatical idea But it is avoid the world from war

एक बार एक मनुष्य चिड़िया घर देखने गया। वहाँ उसने देखा कि जंगली पशु गुर्रा रहे हैं—जोरों से भौंक रहे हैं, और हिंसक दृष्टि से देख रहे हैं। उसने विचार किया कि सैकड़ों वर्षों के व्यतीत होने के पश्चात् ये पशु वैसे ही क्रूर बने हुए हैं इनका बिल्कुल विकास नहीं हो पाया है। विकास की बात मनुष्य पर सोचा जाय—हम जानते हैं सांप बिच्छू आदि जहरीले प्राणी हैं, कुत्ता भी घातक है समुद्र में भी जहरीले जन्तु हैं किंतु इन प्राणियों से भी अधिक निकृष्ट व अयोग्य खान-पान करने वाले अमानव। मनुष्य के हृदय में ज्यादा जहरीलापन है, बिच्छू के डंक का जहर तो कुछ समय में उतर जाता है किंतु मनुष्य के मन का डंक तो ऐसा गहरा होता है, कि उस डंक का समाप्त होना कठिन हो जाता है।

मनुष्य और पशुओं की क्रूरता की तुलना करें तो ज्ञात होगा कि इन दोनों में कौन अधिक क्रूर है? पशुओं ने अधिक मनुष्यों का संहार किया है, अथवा मनुष्य ने पशुओं का। आज सम्पूर्ण विश्व के करने खाने के सबद्ध विनाश के साधनों के समय सिद्ध कर सकते हैं, कि जंगली पशुओं की तुलना में तो मनुष्य अधिक क्रूर और निष्ठुर बनता जा रहा है युद्धों में तो मनुष्य का संहार अविराम चल रहा है।

पशुओ का एक वड़ा वर्ग वनस्पति और घास पर ही जीविन है, जबकि आज मनुष्य में क्रूरता के संस्कार गर्भपात तक पहुँच गए हैं, आगे यह जीवित के वध तक पहुँच जावे तो कोई आश्चर्य नही है। वास्तव मे यह अनुचित व अयोग्य आहार, विहार का तामसिक और द्वेष भावो से पूर्ण कितना विषैला परिणाम है। अन्त. की निष्ठुरता को दूर करने तथा हृदय मे वात्सल्य भाव प्रकट करने के लिए शुद्ध आहार–विहार मूलत' आवश्यक है।

करुणावतार प्रभु श्री महावीर स्वामी के समवसरण मे जन्मजात एक दूसरे के वैरी–पशु, जैसे सिंह व हिरण, वाघ और बकरी, बिल्ली और चूहा, भी आपसी वैर भाव भूल जाते थे, यह प्रभु मे सिद्ध हो चुकी अहिंसा का प्रत्यक्ष प्रभाव था।

"अहिंसा सन्निधौ वैरत्याग" अहिंसक मनुष्य के हृदय मे वैर व दुश्मनी के भाव नही होते हैं। अधेरे मे दीपक लेकर चलने से स्वय को तो प्रकाश मिलता ही है, साथ-साथ सामने से आते व्यक्ति को भी प्रकाश मिलता है। इसी प्रकार से दुनिया मे विस्तारित मिथ्यात्व, राग व द्वेष के अधकार को दूर करने के लिए प्रेम-वात्सल्य का दीपक लेकर चले तो स्व पर को प्रकाशित कर सभी का जीवन उज्जवल करना आसान होगा।

आज विज्ञान द्वारा आविष्कृत Atom bomb विश्व के सहार के लिए हैं। यदि हम मे अहिंसा, दया, कोमलता के भाव रहेगे तो युद्ध का अन्त सभव है वास्तविक शाति स्थापित हो सकती हे, अन्यथा कठोरता और निष्ठुरता से विश्व का विनाश होने मे अधिक देर नही लगने वाली है।

चिंतन

★ मनुष्य को वडा भाई क्यो कहा गया है, बडे भाई के रूप मे इसके कर्त्तव्य समझाइये।

★ अहिंसा की आवश्यकता क्यो ? क्या करने से अहिंसा प्राप्त होगी ? हिंसा के क्या परिणाम है ?

★ वताइये कैसे आहार से बुद्धि मे विपरीतता आती है ?

★ युद्ध का मूल कहा है, इसे कैसे दूर करे ?

सयम का ताला

सयम रूपी ताले से उत्पन्न लाभ —

ताले औषधालय कारागृह और वकीलो के नाम पट हमारे सामाजिक पापों के चिह्न है।

मनुष्य ने तिजारियो के स्थान पर अपनी वासना को ताला लगाया होता तो आज जसी दुदशा नही होती। वासनाओ पर ताला लगने के बाद किसी अन्य स्थान पर ताला होना आवश्यक हा नही है, किन्तु मानव ने वासना को बेलगाम छोड दिया है और तिजारियों म ताला लगाया है इसी के कारण अनेकानेक प्रकार की विकृतिया उत्पन्न हो गई है।

तिजोरी बिना ताले की हो तो धन व आभूषणो की चोरी हो सकती है परतु वासना पर सयम का ताला न हो तो सारा जीवन धन, गुण, सस्कार, चरित्र आदि लुट जाते हैं। शरीर की सभी इद्रियो को एक तरफ रख दे और सिर्फ जीभ की चर्चा की जावे तो ज्ञात होगा कि केवल जीभ की वासना पर सयम का ताला न होने से अनेकानेक घटनाए हो जाती है। जीभ की वासना पर नियत्रण नही होने से स्वाद की लालसा बढती है, तथा विवेक शून्य होकर कुछ भी खाने पीने या जाने की आदत पड जाती है। स्वाद लालसा तन को तथा अनगल कथन की प्रवृति मन को विकृत कर डालता है। तन की विकृति ने दवाखाने उत्पन्न किए, मन की विकृति ने जल खाने और परिणामत वकीलो के नाम की तख्तियाँ अस्तित्व म आई। एकमात्र जीभ की वासना जब इतनी सारी विकृतिया को जन्म देती है, तो सभी इद्रियों की वासनाएँ सामूहिक रूप से क्या नहीं कर सकती? अत मनुष्य मात्र की वासना पर सयम का ताला लग जावे तो किसी भी तिजोरियो म ताला लगाने की आवश्यकता ही नही रहेगी। सयम के अभ्यासार्थ अभक्ष्य पदार्थों का खान-पान छोडना मूलत आवश्यक है। अभक्ष्य पदार्थ वासना व विकृति उत्पन्न करने वाले है और आत्मा की अवनति को निमंत्रित करते हैं। इसलिए आत्मा की सुरक्षा हेतु प्रतिज्ञा पूर्वक अभक्ष्यो का त्याग, निरकुश इद्रियो और मन पर सयम, प्रतिज्ञा का ताला लगाइये इससे आत्मा आर्त म गुण वभव सम्पन्न बन जाती है। शरीर रोग रहित मन प्रसन्न व आत्मा स्वच्छ बनेगी।

सद् असद् आहार का परिणाम

मन और आत्मा के आहार व उनके लाभ —

शरीर के पोषण द्वारा भले ही शारीरिक शक्ति का विकास हो जावे किंतु मानसिक और आत्मिक बल के लिए सूक्ष्म व शुद्ध आहार की ही आवश्यकता होगी। जिस व्यक्ति का मन सुदृढ नही है, उसकी आत्मा भी निर्बल है, वह शरीर से बलवान होते हुए भी वास्तव मे बल विहीन है।

सामान्यत. इस विषय मे कोई भी विचार नही करता है किंतु संत, साधक और जीवन के विकास की आकांक्षा वाले व्यक्ति मन तथा आत्मा के आहार के विषय मे सदा जागरुक रहते हैं। आत्म श्रद्धा, आत्म ज्ञान और आत्म रमणता विकसित होवे ऐसे विशुद्ध व निर्मल आचार-विचार द्वारा आत्मा और मन की तृष्णा पूर्ण करके इन्हे बलवान बनाते है। बियाबान अरण्यो व गहन गुफाओ मे तपस्या करने वाले ऋषीगण, महीनो तक उपवास करने वाले संतगण स्थूल शरीर के स्थूल आहार का परित्याग कर, मन और आत्मा को सात्विक तत्वचिंतन का, परमात्मा के प्रणिधान का शुभ आहार प्रदान करते हैं। भले ही उनकी देह शीर्ण हो जावे किंतु इनके मुख की तेजस्विता, प्रसन्नता, कांति, वाणी की निर्मलता व पवित्रता जन सामान्य को प्रभावित कर लेती है। इन सबके पीछे मन और आत्मा के शुभ ध्यान का बल कार्यरत रहता है।

मन और आत्मा का आहार क्या है? यह कैसा होता है, इसे किस प्रकार से प्राप्त किया जावे, यह जानना हमारे लिए आवश्यक है। मन का आहार सद्विचार और सद्चिंतन है। जिसकी प्राप्ति हमे उत्तमकोटि के साहित्य, सत्संग और महापुरुषो के प्रेरणा दायक विचारो से होती है। आत्मा का आहार सदाचरण एव सद्गुणो से उपलब्ध होता है। शरीर, मन और आत्मा तीनो मे बहुत घनिष्ठ संबंध है। मन के विचार शरीर की क्रिया के रूप मे व्यक्त होते हैं, इन विचारो व क्रियाओ का प्रभाव आत्मा पर उज्जवलता अथवा मलिनता के रूप मे प्रकट होता है। जिसका मन पवित्र है, विचार सात्विक है, उसकी क्रियाये भी पवित्र तथा सात्विक होगी और आत्मा भी उज्जवल होगी। इसके विपरीत जिसका मन कलुषित है, चिंतन मलिन है, उसकी क्रियाये भी कलुषित होगी और आत्मा भी तद्नुसार मलिन होती जावेगी। इसलिए अध. पतन से

अस्वाभाविक हो जाती है, शरीर के विविध रस सूख जाते हैं और अन्तः स्त्रावी पिडो मे कितनो की क्रियाएँ वेगवती हो जाती है, कितनो की मद। इन सबके परिणामत जीवन शक्ति का बहुत ह्रास होता है, आयु कम होती है, साराशतः अभक्ष्य खान-पान से शरीर रोगी बनता है, मन कलुषित होता है, आत्मा के परिणाम बिगडते है, असमाधि मृत्यु होती है, परलोक दुर्गतिमय बनता है, और यह जीवन यात्रा दीर्घकाल तक दु खदायी बनती है। इसलिए सर्व अभक्ष्यो का त्याग सभी प्रकार से सच्ची समझ का प्रतीक है, और सर्व प्रकारेण हितकारी है।

शुद्ध-भक्ष्य वनस्पति और फलाहार से प्राप्त होने वाले लाभ

शुभ विचारो, भावनाओ, सद्विचार, आत्म विश्वास, श्रद्धा भक्ति, धैर्य, आनद, स्नेह, वात्सल्य, क्षमा, आशा, उच्चाभिलाषा, शांत विचार प्रवाह, चित्त की प्रसन्नता, चेतनातंत्र तथा मन सस्थान की शाति आदि शुद्ध भक्ष्य पदार्थो के लाभ है। इससे मस्तिष्क और ज्ञान तंतु का शमन होता है, शरीर के रसो मे ऐसे रासायनिक तत्वो की उत्पत्ति होती है, कि जिनके द्वारा शरीर व मन की तुष्टि तथा पुष्टि होती हे, जीवन शक्ति संचित होती है, आयुष्य पूर्ण रहती है।

मनुष्यो के जीवन का सूक्ष्म अन्वेषण करके डॉ० रेमोन्ड पर्ल कहते हैं कि—चिता-फिकर से मुक्त, प्रसन्न चित्त स्वभावी, स्थित-प्रज्ञता जैसी जिनकी प्रकृति होती है, वे तपस्वी, ब्रह्मचारी और सयमी होते है, ऐसे मनुष्य अति दीर्घायु तक के बहुत संख्या मे पाए जाते है, यह सत्य तथ्य है, कि ये दौड-धूप, व्यग्रता, व्याकुलता रहित और समता युक्त जीवन जीते हैं।

इन सभी बातो से सार यह प्राप्त होता है कि दीर्घ और निरोगी जीवन के लिए मानव मात्र को शुद्ध आहार–विहार, यम–नियम–संयम, त्याग–तप तथा अनाशक्ति हेतु जीवन भर प्रयासशील रहना होगा।

शुद्ध आहार से—शरीर निरोगी, मन शात, आत्मा स्वस्थ्य, मृत्यु समाधिमय, परलोक सद्गतिमय बनता है, ये सभी शुद्धाहार के महान लाभ है।

ध्यान के साथ आहार का संबंध

ध्यान के लिए क्या क्या आवश्यक है –

ध्यान का संबंध मन व तन दोनों के साथ समान है। मस्तिष्क जितना हल्का होगा ध्यान भी उतना ही शुद्ध व अच्छा होगा। मस्तिष्क का भार मुक्त, हल्का होना आमाशय पाचनतंत्र और मल शुद्धि पर निर्भर रहता है इनकी शुद्धि के लिए योग्य आहार पर ध्यान देना अति आवश्यक है। जिन्हें ध्यान करने की इच्छा हो उन्हें पेट को हल्का रखना हल्का भोजन करना अखाद्य, अभक्ष्य तीखा तामसिक, चटपटे विकारी भोजन मादक पेय के प्रयोग को वर्जित करना आवश्यक है। आयुर्वेद के नियम के आधार पर पेट के चार विभाग होते हैं। दो भाग भोजन के लिए एक भाग पानी के लिए और शेष एक भाग भोजनोपरांत निर्मित होने वाली वायु के लिए छोड़ना चाहिए।

अधिक खाने से व्यक्ति की अपान वायु दूषित हो जाती है। इससे मानसिक और बौद्धिक निर्मलता नहीं रहती है अभक्ष्य पदार्थों और अधिक भोजन से पाचन नहीं हो पाता परिणाम स्वरूप वायु विकार व रोग बढ़ते है। मन की एकाग्रता में वायु विकार सबसे बाधक तत्व है।

ध्यान के लिए ब्रह्मचर्य भी बहुत अधिक आवश्यक है। माँस, मदिरा आदि महाविगईयों और दूध घी आदि विगईयों से वीर्य की मात्रा बढ़ती है इससे काम वासना जागृत होती है और मानसिक चंचलता रहती है। वीर्य स्खलन से वायु की दुर्बलता बढ़ती है व्यक्ति का मन संतुलित नहीं रहता है जिसके अभाव में ध्यान की साधना संभव नहीं है। इसलिए छः विगई का अधिक प्रयोग, महाविगईयां-मधु-मदिरा-मक्खन, माँस आदि अभक्ष्य पदार्थों का सेवन ध्यान अभ्यासी के लिए हितकारी नहीं है। अभक्ष्य पदार्थों की सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त कर उनका सर्वथा त्याग आवश्यक है।

रसों के परित्याग से स्वाद वृत्ति पर अंकुश हो जाता है। जिसका मन स्वाद लोलुपता से मुक्त होता है उसके लिए शुभ ध्यान कर पाना बहुत मुश्किल है। ध्यानावस्था में स्थिर रहने के लिए स्वादवृत्ति पर विजय करना, रस त्याग करना बहुत जरूरी है।

शिक्षण और संस्कार

संस्कार युक्त वाणी से जीवन परीक्षा—

आज प्रत्येक व्यक्ति को धर्म के फल की तो आवश्यकता है, किंतु धर्म उससे होता नही है। पाप के फल से सभी दूर रहना चाहते हैं, परंतु पाप छूटता नही है। ज्वार को खील बनने के लिए अग्नि मे सिकना पड़ता है, तभी वह श्वेत व सुन्दर खील बन पाती है तथा नेत्राभिराम बन पाती है। ज्वार का ढेर खील के ढेर से अधिक सुन्दर दिखलाई पडता है, नैनो को प्रिय व रुचिकर लगता है। मनुष्य के सबध मे भी यही बात लागू होती है। संस्कार विहिन मानव ज्वार की भाति है। जिनमे सस्कार नही होते है, उनका खान-पान, बातचीत का ढग, उठने-बैठने का रीति मे शिष्ठता नही होती है। आध्यात्मिक दृष्टि से तो सस्कार आवश्यक है ही, साथ ही साथ जीवन व्यवहार की दृष्टि से भी इसका महत्व है। क्यो आया ? कैसे आए ? किसलिए पधारे ? इन तीनो वाक्यो मे कितना अतर है, अर्थ एक ही है, किंतु वाणी में भिन्नता है। सस्कारो से युक्त वाणी मनुष्य की कीर्ति मे अभिवृद्धि करती है। किसी व्यक्ति ने सुन्दर आभूषण धारण किए हो, सुन्दर वस्त्रो से वह सुसज्जित हो, किंतु उसकी बोली अच्छी न हो तो ऐसा प्रतीत होगा, मानो हस के वेश मे कौवा है। सस्कारी बनने का प्रथम सोपान है, मन और भाषा के सुधार का आहार। भाषा और विचारो से मनुष्य का मूल्याकन सभव है।

राजा, मत्री और दरबान तीनो एक बार एक साथ घूमने निकले। वे रास्ता भटक गए, एक दूसरे से अलग-अलग हो गए और एक दूसरे की खोज करने लगे। उन्होने रास्ते मे एक साधु बैठे देखा। पहले ने पूछा—'प्रज्ञाचक्षु ! आपने यहाँ से किसी को जाते देखा है ?' उत्तर मिला—नही भाई ! मैं अंधा हू ।' पूछने वाले ने कहा—"माफ करना भाई मुझसे भूल हो गई।" और वह आगे चला गया। तब दूसरे ने आकर पूछा—'हे सूरदास ! यहाँ से किसी के निकलने की आवाज सुनी है।' उत्तर था—हाँ भाई ! राजा आगे गए हैं।' उसके बाद तीसरे ने आकर पूछा—'अबे अंधे ! यहाँ से कोई निकला है क्या ?' साधु ने जवाब दिया—हाँ राजा जी पहले गए, उनके बाद मत्री गए हैं, तूं दरबान है उनके पीछे जा।

आगे जाकर वे तीनों मिल गए। बातचीत आरम्भ हुई। उन्हें आश्चर्य था, कि अंधे साधु ने उन तीनों को कैसे पहचान लिया। वे तीनों वापस उस साधु के पास आए। साधु ने इस प्रकार से उनकी शंका का समाधान किया—हे प्रज्ञाचक्षु! सम्बोधन विनय और विवेक युक्त है जिसमें उच्च कुल के संस्कारी व्यक्ति का आभास मिलता है। इसलिए मैंने उन्हें राजा माना। हे सूरदास सम्बोधन में पहले की तुलना में मान की कमी थी, किन्तु उद्दण्डता का अभाव था इसलिए उसे मंत्री समझा। फिर तीसरे के सम्बोधन—अरे अंधा में बहुत अधिक तिरस्कार प्रतीत होने पर उसे दरबान समझा।

वाणी को संस्कारी बनाने के लिए विचारों को संस्कारी बनाना आवश्यक है विचारों को आचार की शुद्धता के द्वारा संस्कारी बनाया जा सकता है।

आज कल माता पिता शिकायत करते हैं, कि बालकों में संस्कार नहीं है। वे उच्छृंखल बनते जा रहे हैं। परन्तु ये कुसंस्कार आए कहाँ से माता पिता के संस्कार बर्ताव और व्यवहार की छाप बालकों पर तो पड़ेगी ही। बालक तो कोरी स्लेट की भाँति है। माता पिता बच्चों को संस्कारित करने के लिए कितना समय देते हैं? क्या समय संस्कारों की शिक्षा घर में ही दी जावे, इसके लिए वे कितना योगदान देते हैं? आप कपड़े धुलवाते हैं उस पर ठीक से इस्त्री करने के लिए आधा घण्टा भी व्यय करते हैं घड़ी खराब न हो जावे इसे सम्भालने में आधा घण्टा व्यय करते हैं किन्तु अपने बच्चों में संस्कार डालने के लिए कितना समय व्यय करते हो? इस गम्भीर प्रश्न पर विचार करने के लिए संस्कारों के निर्माण संबंधी सम्बन्धी गंगा देवी का दृष्टांत समझने योग्य है।

गंगा देवी ने अनेक शर्तों के साथ राजा शांतनु से विवाह किया था। सदा सत्य बोलने वाले राजा ने एक बार शिकार खेलकर वापस लौटने पर गंगा देवी ने पूछा—'कहाँ जाकर आ रहे हैं? शांतनु ने असत्य कथन किया—'घूमने गया था' गंगा देवी कहने लगी—शरीर पर लगे रक्त के दागों से ऐसा प्रतीत होता है कि आप शिकार करके आ रहे हैं। आपके द्वारा वचन व प्रतिज्ञा भंग की गई है इसलिए मैं आपके पास न रहूँगी।

वाणी एक शक्ति है यह शक्ति स्वयं को और औरों को अच्छे मार्ग पर अग्रसर करती है। सागर का बाँध टूट जाए तो अपार हानि होगी, किन्तु मनुष्य का नियम टूट जाए तो उससे भी अधिक नुकसान होगा। नारी संस्कार

शिक्षण और सदाचार की पोषक है। पति द्वारा नियम भग करने के कारण स्वयं के सुख वैभव को त्याग कर जाने के बाद वह अपने पिता के घर नहीं गई, अपितु पिता के उपवन मे एक छोटा-सा मदिर बनवाकर वही रहने लगी। सस्कारो के लिए सुख की तीव्र लालसा को बहिष्कृत कर वह आधी भूखी रही। किंतु सस्कारो को नही छोडा। वह समझती थी, कि एक अच्छा संस्कार जीवन को प्रकाशवान् बनाने मे समर्थ है, जबकि एक कुसंस्कार अनेक जन्मो तक दुखदायी हो सकता है।

वहाँ चार माह व्यतीत होने पर एक पुत्र का जन्म हुआ। जिसका नाम गागेय रखा गया। माता ने अपने पुत्र के जीवन मे अनेक संस्कारो का सिचन किया। उसे शूरवीर बनाने का प्रयत्न किया। माता तो संस्कार, शिक्षण, संयम व सदाचार से बालक का निर्माण करने वाली शिल्पी है। वस्त्रो को स्वच्छ रखने के लिए कितना साबुन चाहिए ? उसी प्रकार तन और मन का मैल दूर करने के लिए सस्कार का साबुन चाहिए। विशालकाय भवन, सुसज्जित फर्नीचर एवं ठाठबाट के प्रदर्शन मे मानवता नही है। जब विशाल भवनो मे बौनो को देखते है, तब हमे दया आती है। ऐसा मकान, ऐसा वैभवशाली घरबार किंतु मन तो बिल्कुल तुच्छ है, छोटा है। सस्कार सम्पन्नता बिना शिक्षण निष्फल है. आज बच्चो मे सस्कार के आरोपण की, सिचन की, सयम और सदाचार निरूपण की नितात आवश्यकता है। सुसस्कारो का पोषण नही करने वाले माता-पिता बच्चो के हितो के शत्रु हैं। एक संस्कारी पुत्र से माता का हृदय जितना प्रसन्न होता है, उतना दस असंस्कारी पुत्रो से भी नही होता है।

आज लोगो को महापुरुषो के चरित्र याद नही है, इसलिए महापुरुष हमें बार-बार याद दिलाते हैं। माता ने गागेय को शूरवीर, कला कुशल और अस्त्र शस्त्र मे प्रवीण बनाया। क्या संस्कार हीन, पौरुष हीन बालको को देखकर दया नही आती ? विलासिता मे जीवन जीने वाले बालक क्या करेंगे। वीर्य विहीन प्रजा सस्कार, सयम, शिक्षण को कैसे आचरण मे लाएगी। आज यह एक ज्वलत प्रश्न है।

भारतीय प्रजा के सस्कार बल, धर्म बल, उत्साह, बुद्धि बल एव सस्कृति का विनाश करने के लक्ष्य से विदेशी सहायता से विलास के साधनो का तीव्र

गति से प्रचार हो रहा है। महापुरुषो ने प्राणा की आहुति देकर, जिस मस्कृति की रक्षा की और हमें विरासत में प्रदान की है, उसकी रक्षा करने के स्थान पर हम उस विस्मृत करते जा रहे हैं। इस पर बहुत गम्भीरता से विचार करना होगा। यदि हम जागृत नही रहे तो हानि का काई हिसाब नही रहेगा।

गागेय की तेजस्विता, शक्ति और बल बढ़िगत थे, वह माता की आज्ञा का पालन करता था, अश्व पर आरूढ होकर सघन वन में जाता था, वापस आकर माता को प्रणाम करता था, आशीर्वाद प्राप्त करता था। गागेय से माता कहती थी—पुत्र! आसपास क वातावरण म कहीं भी हिंसा नही करनी है और न ही करने देनी है। माता के इन वचनों को शिराधार्य कर गागेय जीवन म प्रगति करता है, जीवो की रक्षा करता है।

शिकार करते-करते हिरण के पीछे एक बार शातनु उस तरफ आ पहु चे। हिरण तो भाग गया, किंतु सामने हाथ ऊचा करके गागेय खडा रहा। गागेय की आवाज के तेज म शातनु जैसा सम्राट भी स्तम्भित हो गया, पीछे हट गया, क्योंकि एक सयमी युवक की आवाज थी। शातनु बोले मुझे रोकने वाला तू कौन है? मैं सम्राट हूँ। गागेय ने शात, स्वस्थ्य चित्त से उत्तर दिया—"महाराज! आप ससार के सम्राट हैं, किंतु मैं इस भूमि की मर्यादा का स्वामी हूँ।

बातचीत बढती गई। शातनु के नेत्र लाल हो गए, उसने धनुष की डोरी खींच कर बाण चलाया। दूसरी ओर स गागेय के बाण ने आकर धनुष के टुकडे-टुकडे कर दिए। अब शातनु ने तलवार निकाली, तब शांतनु स गागेय ने कहा—राजन! मैंने हिंसा नहीं करने का नियम लिया है, अब इस बाण से मुकुट को उडा रहा हूँ। तलवार निकालने के बदले मुकुट को सम्हालिए।

इसी बीच गगा देवी भी पहुँच गई। उसने पुत्र को शात किया। गागेय ने माता को प्रणाम किया। शातनु विस्मय में पड गया। यह नारी तो मेरी पत्नि है। फिर यह बालक कौन? गगा देवी ने पुत्र स कहा—पुत्र! ये तेरे पिता हैं इन्हें प्रणाम करके क्षमा याचना करो।

शातनु मन ही मन पश्चाताप करने लगा, अपनी पत्नि स उसने क्षमा याचना की और उसके पर पडने लगा। किंतु भारतीय आर्य नारी ने पति को चरणों म नहीं झुकने दिया। भारत की नारी सयमी, सरवागी और सदा

चारिणी होती हैं। शांतनु का गर्व चूर-चूर हो गया। वह पश्चाताप की अग्नि में जलता हुआ गगा देवी ने आगह पूर्वक सम्मान और सत्कार से नगर प्रवेश की विनती करता है।

सयमी जीवन मे ओजस्वी, तेजस्वी और सशक्त व्यक्तित्व का जन्म होता है। सस्कार विहीन शिक्षण विना तेल के दीपक तुल्य है। शिक्षण और सस्कार जीवन रथ के दो पहिए है। जीवन मे सस्कार स्वच्छता व सुन्दरता की आवश्यकता है। वाह्य स्वच्छता ही आतरिक स्वच्छता को जन्म देती है। वाह्य और आतरिक स्वच्छता मे हम प्रभुता की ओर अग्रसर होते हैं। मन-तन व आत्मा को निर्मल वनाओ, इसके लिए आहार मे विवेक रखना आवश्यक है।

स्वाध्याय

१. वालको के सस्कार के लिए कौन उत्तरदायी है? कैसे?
२ गगेय की पगति का आधार स्तम्भ क्या था?
३ सस्कारो मे विकृति किस प्रकार आती है? उस विकृति को दूर करने के लिए क्या करना जरुरी है?

हो जाते हैं तो क्या इससे उनके स्वास्थ्य की सार सम्भाल हो सकेगी। अपनी प्रकृति के विरुद्ध ग्रहण किया गया आहार स्वास्थ्य को बिगाड़ता है और रोग के लक्षण निकलते है। जो लोग धर्म पालन के लिए मर जाना पसद करते हैं या दिनोदिन उपवास करने को तैयार होते हैं, उन्हे धर्म सिद्धातो को त्याग कर अभक्ष्य सेवन की सलाह देना, जनता के स्वास्थ्य की चिता के विचार से हीन सलाह, जो विचार शून्य कदम है, और अध पतन को आमन्त्रित करने वाला है।

यही स्थिति आजकल के लेखको की है, वे जैसे ही किसी वैज्ञानिक के मुख से किसी नवीन आविष्कार की जानकारी सुन लेते हैं वैसे ही उनका अनुमोदन करने लग जाते हैं। चूहे और मनुष्य मे बहुत अन्तर है, एक बिल में रहता है दूसरा मकान मे रहता है, एक अनाज को कच्चा खाता है और दूसरा उसे पका कर खाता है। चूहे की क्रियाएँ मात्र शारीरिक है, जबकि मनुष्य की शारीरिक और मानसिक दोनो है। दोनो के जीवन मे आकाश पाताल की भाति अतर है। अतः चूहो पर किए गए परीक्षणो के परिणाम मनुष्य पर लागू करना अनुचित है। ऐसी स्थिति में हमारे बुजुर्गो व पूर्व पुरुषो ने आहार के संबध में जो समाधान धर्म ग्रथो, आयुर्वेद ग्रथो मे किया है, जिसके पीछे हजारो वर्षों का जीवन अनुभव है। वही हितकारी और सुखकारी है। अन्यथा भ्रमजाल में उलझकर इस श्रेष्ठ जीवन का विनाश ही होगा, और पश्चाताप की सीमा नही रहेगी।

अपने भोज्य पदार्थों का चयन करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए, कि इसमे हमारे धार्मिक सिद्धातो का पालन हो और स्वास्थ्य की की दृष्टि से भी वह आहार श्रेष्ठ हो। इस रीति से भोज्य पदार्थों का चयन करने वालो से रोग सदा दूर रहते है। वर्तमान मे हमे जो बिमारी दिखाई देती है, वह भूतकाल के किए गए धार्मिक नियमो के उल्लघन का परिणाम है।

यदि स्वास्थ्य अच्छा नही है तो धर्म की आराधना मे पग-पग पर बाधाएं उपस्थित होती है। इसलिए स्वास्थ्य की ओर सर्वप्रथम ध्यान देना चाहिए। मर्यादा हीन जीवन, अभक्ष्य पदार्थों का भोजन धर्म पालन में शिथिलता का प्रतीक है। भक्ष्य-अभक्ष्य का विवेक रखकर, बराबर उसका पालन किया जावे तो, अपना धर्म सुरक्षित रहता है, और स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है।

आहार में अहिंसा संयम और तप का सिद्धांत

इस बात का स्पष्टतः समझना आवश्यक है कि आहार के संदर्भ में अहिंसा संयम और तप का सिद्धांत किस प्रकार से लागू होता है। सामान्यतः पुरुषों का आहार ३२ कवल एवं स्त्रियों का आहार २८ कवल होना चाहिए। इस प्रमाण से कुछ कम आहार ग्रहण करना ऊनोदरी नामक बाह्य तप है। रस सेना व अतगत अभक्ष्य महाविगय का पूर्णतः त्याग, भक्ष्य विगई का स्वेच्छा पूर्वक त्याग, अथवा उसके त्यागार्थ प्रत्याख्यान नियम आदि लेना रस त्याग नामक तप है।

आहार ग्रहण करते समय जो पदार्थ प्रयोग में आवें, उनसे केवल उदर पूर्ति हो लक्ष्य रखना है रस वृत्ति के पोषण का लक्ष्य नहीं रखना है यह रसों पर संयम है, यह संयम मन को संयमित किए बिना संभव नहीं है इस प्रकार इसमें मन का संयम भी समाहित है।

आहार में छः प्रकार के रस माने गए हैं (१) मधुर या मीठा (२) अम्ल या खट्टा (३) लवण या खारा (४) कटु या कडवा (५) तिक्त या तीखा (६) कषाय अथवा कसैला।

रस की लोलुपता स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है आहार आसक्ति अथवा अज्ञान वश नहीं करना चाहिए। सम्यक् रूप से समझकर हितकारी आहार लेना चाहिए क्योंकि शरीर का निर्माण आहार से ही होता है। स्वाद के वश में, मीठा लगने वाला अहितकारी भोजन जिसका परिणाम सुखकारी नहीं है अभक्ष्य खान पान या अन्य प्रकार की वस्तु उपयोग में नहीं लाना चाहिए। जब इच्छा हो तब खाने की अपेक्षा समयानुसार भोजन करना भी एक प्रकार का संयम है। ऐसे संयम से मन और रसनेन्द्रिय वश में रहते हैं स्वास्थ्य की रक्षा होती है। विषम व अनुचित प्रकार से, असमय अयोग्य तरीके से किए गए भोजन से अनेक प्रकार के कष्टकारक रोग हो जाते हैं।

भक्ष्य और अभक्ष्य का विवेक नहीं रखने से शारीरिक और मानसिक दुष्प्रद स्थिति का निर्माण होता है। स्वच्छन्द और बिना सोचे समझे की जाने वाली क्रियाओं से स्वास्थ्य की बड़ प्रमाण में हानि होती है। शारीरिक संगठन निर्बल हो जाता है, मानसिकता विकार ग्रस्त हो जाती है। फलतः, दूषित अन्न मानस होकर खाने तथा अन्न जल। यही न अनेक बाधक रोग उपस्थित

हो जाते हैं। जो आहार शरीर में रहने वाली धातुओ को सम परिणाम पर बनाए रखता है, और विषम परिणाम को सम करता है, वही आहार हितकारी है इसके विपरीत आहार अहितकारी। अधिक स्पष्ट रूप मे कहा जावे तो जो आहार देश, काल, अग्नि, मात्रा, सौरम्य, वात, पित्त, कफ, सस्कार, वीर्य कोष्ठ, अवस्था, क्रम, परिहार, उपचार, पाक, सयोग, मन की शक्ति और धर्म के विरुद्ध होता है, वह अहितकारी है। जिन पदार्थों को निंदनीय, त्याज्य, अहितकारी माना जाता है, उसका सेवन परिहार विरुद्ध है।

आहार की शुद्धि होने पर सत्व की शुद्धि होती है, जिनसे मन निर्मल व दृढ बनता है। मन की दृढता के माध्यम से मुक्ति भी सुगमता से प्राप्त की जा सकती है। जिनमे काम, क्रोध, उत्तेजना, चचलता, निराशा, उद्वेग, घबराहट, निर्बलता अथवा अन्य कोई मनोविकार की प्रबलता हो तो उन्हे इन सबका इलाज शुद्ध सात्विक भोजन द्वारा करना चाहिए। सात्विक भोजन से बुद्धि निर्मल बनती है और स्फूर्ति रहती है, काम, क्रोध, रोगादि समाप्त होने लगते हैं। मन भी दुष्कर्मो मे प्रवृत्त नही होता है। सात्विक व भक्ष्य आहार करने वाला व्यक्ति आध्यात्म मार्ग मे दृढता से अग्रसर होता है। जो अन्न या आहार बुद्धि वर्धक हो, वीर्य रक्षक हो, उत्तेजक न हो, रक्त को दूषित न करता हो, सुपाच्य हो उसे सात्विक आहार कहा गया है। आत्मा की उन्नति, विचारो को पवित्र, मन को शात और प्रसन्न रखने के योग्य सयम साधना की इच्छा वालो, इसके माध्यम से अलौकिक तेजस्विता स्वयं मे प्रादुर्भूत करने के उत्सुको को इस प्रकार का शुद्ध व सात्विक आहार ग्रहण करने का नियम रखना होगा।

प्रभावशाली निपुणा

जलाशय का जल मीठा होने का कारण तथा—

निपुणा की चमत्कारी बोधक कथा—अंग नामक देश में चम्पा नाम की नगरी थी। जहाँ महस्रवीय नाम का न्याय परायण राजा शासन करता था। उसका बहुबुद्धि नाम का मंत्री था जो धर्म का अति अनुरागी था। साथ साथ राज्य कार्य सम्भालने में भी कुशल था। जहाँ राजा न्यायी हो मंत्री कुशल हो वहाँ प्रजा को किसी भी बात का दुःख भय नहीं होता था। इसलिए चम्पा निवासी यथाशक्ति धर्म आराधना व आनंद प्रमोद में अपना समय व्यतीत करते थे। ऐसे समय में एक बार विष मेघ की वृष्टि से तमाम जलाशयों का जल विषैला हो गया, वन उपवन सूख गए दावानल में जल गए हो, इस प्रकार की स्थिति सभी वनस्पतियों की हो गई थी, जिससे सर्वत्र हाहाकार मच गया, राजा और मंत्री बहुत अधिक चितातुर हो उठे। अनाज तो संग्रह किया गया वह काम आ जायगा किंतु पानी का क्या किया जाए? यह गहरी चिंता का विषय बन गया। पानी की टंकी तो धनिकों व श्रीमंतों के घरों में थी किंतु जन साधारण का निर्वाह इससे कैसे होगा? राजा ने ज्योतिषियों को बुलाया और ज्योतिष लगवाया कि मीठे जल की वृष्टि कब होगी? ज्योतिषियों ने पंचाग उलटे, धनु मकर, कुंभ, मीन की गणना की पुराने पोथे देखे, लकड़ी की पट्टी में यंत्रों को चित्रित किया किंतु मीठे जल की वृष्टि कब होगी कोई भी यह नहीं बता सका। राजा की चिंता बहुत बढ़ गई मंत्री की तो नींद हवा हो गई। जिसके हृदय में प्रति क्षण प्रजा की हित की भावना हो उन्हें ऐसे समय नींद कहाँ से आए?

इस प्रकार चम्पा नगरी में चिंता और व्याकुलता का वातावरण व्याप्त था। एक दिन वन पालक ने आकर कहा—"महाराज! सुनो। सभी वन स्पति नव पल्लवित हो गई है, वन-उपवन पहले की भांति फल-फूलों से सुशोभित है।' जलाशयों के रक्षकों ने आकर कहा— कृपा सिंधु! बावड़ियां कुओं, तडागों व सरोवरों का पानी मीठा हो गया है। क्षेत्रपाल आकर कहने लगा—प्रभो! सभी खेत धान्य से हरे भरे हो गए हैं, और कृषियां बसर व आरम्भ हो गया है। नगर रक्षक ने आकर निवेदन किया— गरीब

परवर ! आज प्रजा में उत्साह और आनद का विचित्र वातावरण व्याप्त है।"
इस प्रकार से सभी ओर से शुभ समाचार प्राप्त होने से राजा की प्रसन्नता का ठिकाना नही रहा। किंतु यह चमत्कार कैसे हुआ, इस बात को राजा समझ नही सके। कोई कहता कि 'अमुक तपस्वी का तप फलीभूत हुआ है। किसी का विचार था कि यह मत्र का प्रभाव है'—कोई कहने लगा कि "यह किसी तन्त्र का प्रभाव है। कुछ ने कहा—हमने अमुक देव की पूजा की थी, यह उसी का फल है।"—"अमुक देव की आराधना करने से उसकी कृपा से यह फल प्राप्त हुआ" ऐसा विचार भी किसी का था। इस प्रकार भिन्न-भिन्न प्रकार के अभिप्राय कहे जाने लगे, किंतु इनमे से कोई भी कारण राजा के मन को समाधान नही प्रदान कर सके।

ऐसी ही दशा मे एक वन रक्षक ने आकर राजा को बधाई दी, कि—महाराज ! नगर के बाहर उद्यान मे त्रिकालज्ञ, सर्वज्ञानी, केवली भगवान पधारे है। यह सुनकर राजा अपने अनुचरो सहित उद्यान मे आकर सर्वज्ञ भगवत को विधि पूर्वक वदन करके उनके समक्ष योग मुद्रा मे बैठ गया ! फिर विनय पूर्वक उनसे पूछता है,—'हे भगवंत ! इस नगर मे आया संकट एकाएक किस प्रकार से दूर हो गया ? यह प्रभाव किसका समझना चाहिए ?' तब केवली भगवत ने कहा—'हे राजन् ! बीती रात्रि मे बहुबुद्धि प्रधान के यहाँ एक पुत्री का जन्म हुआ, उसी के पुण्य प्रभाव से यह शुभ घटना हुई है, उस बालिका का पूर्व भव ध्यान से सुनो।

भद्रपुर नगर मे भद्र सेठ और भद्रा सेठानी रहते थे। उनकी सुभद्रा नाम की पुत्री थी। वह सुन्दर मनोहारी रूप व लावण्य वाली थी। वह रसना के लोभ वश मे पीडित थी, अतः भक्ष्य अभक्ष्य का विवेक किए बिना, चाहे जैसे पत्र, पुष्प, कदमूलादिका भक्षण कर लेती थी। उसके माता-पिता निर्ग्रन्थ प्रवचन को मानने वाले थे, इसलिए उनके घर पर अभक्ष्य वस्तुएँ आती नही थी, परतु सुभद्रा गुप्त रीति से नौकरो चाकरो से उन्हे मंगवा कर खाती थी। यह बात माता-पिता को ज्ञात हुई। उन्होने अपनी पुत्री को शिक्षा दी कि—अपने कुल का आचार धर्म ऐसा है, कि अनजाने फल फूलादि खाना नही चाहिए, कद मूल का भक्षण नही करना, उसी प्रकार से द्विदल, चलित रस पदार्थ, मांस, मदिरा, मधु, मक्खन, रात्रि भोजन, बोल आचार आदि २२

प्रकार के अभक्ष्य पदार्थों का उपयोग नहीं करना। परतु रस भोगी सुभद्रा ने इस उपदश को सुना अनसुना कर लिया और अपना आचरण पूववत् रखा।

कालक्रम स वह युवा हुई तो उसका विवाह एक धर्मनिष्ठ कुटुम्ब में कर दिया गया ताकि वह अभक्ष्य सवन बन्द कर दे किंतु उसका अभक्ष्य खान पान निराबाध प्रच्छन्न रूप से जारी रहा। धर्मनिष्ठ ससुराल वालों को यह व्यव हार उचित नहीं लगा और उन्होंने उसे उसके पीहर भेज दिया। माता पिता ने समझ लिया कि इसकी जाभ वश म नहीं रहती, इसी का यह परिणाम है। उन्होंने उस ज्ञानी गुरुणी के पास रखा, ताकि किसी भी प्रकार स उसे आचार मार्ग पर स्थिर किया जा सके। गुरुणी जी ने अनेक युक्तियाँ देकर उसे अभक्ष्य के कटु परिणाम समझाए। जिसस उसने अभक्ष्य त्याग का व्रत लिया। और गुरुणी से बिदा लेकर वह ससुराल चली आई। ससुराल वालो ने यह समझ कर कि अब वह सुधर गई होगी उसे घर पर रख लिया। स्वभावो दुरतिक्रम अर्थात् स्वभाव में परिवतन कठिन होता है—इसी प्रकार सुभद्रा के स्वभाव में भी परिवतन नहीं आया।

अत उसने एक दिन छिपकर कन्दमूलादि मगाए और खाए। सास को इस बात का पता लग गया। उसने उसकी छुट्टी कर दी। वह पुन पीहर की ओर चल पड़ी। मार्ग में एक जगल था वहाँ उसे एक मनोहर फल वाला वक्ष दिखा। सुभद्रा के मुँह मे पानी भर आया और उसने वह फल खा लिया। किंतु वह फल विषैला व प्राण घातक था। सुभद्रा उसी समय मृत्यु का शिकार बन कर पहले नरक म गई। जिह्वा पर सयम न रखकर जो लोग स्वच्छदता पूवक आहार विहार करत हैं उनकी इसक अतिरिक्त और क्या गति हो सकती है? वहाँ स तियच आदि गति का प्राप्त कर दूसर नरक में पहुँचा। वहाँ से च्यवन कर सूअर, गधा, बिल्ला साँप, गीध आदि अनेक भवो में जन्म लेकर अन्त में लक्ष्मीपुर म सेठ लक्ष्मीदत्त की भार्या लक्ष्मीवती की कूख स पुत्री के रूप में अवतरित हुई। उसका नाम भवानी रखा गया।

उसने पूव म अनेक पाप किए थ एव नियमों का भग भी किया था अतः जन्म स ही उस महारोगो ने घेर लिया। वह अत्यन्त कष्टाग्रस्त रहती थी किंतु उसका आयुष्य रेखा बलवान था। वह बडी होकर युवावस्था में प्रविष्ट हुई यह युवावस्था भी उसके लिए एक अभिशाप थी। किसी ने उसके साथ विवाह

नही किया। वह एक विदूषी साध्वी के पास गई और पूछने लगी कि क्या आपके पास कोई ऐसी औषधि है, जो मेरी जन्म की व्याधियो को दूर कर दे। साध्वी जी ने उत्तर दिया—हाँ हमारे पास ऐसी औषधि है, जो केवल इस जन्म की नही अपितु जन्म जन्मातर के रोगो का निराकरण कर दे। तत्पश्चात् साध्वी जी ने उन्हे धर्मोपदेश दिया एव विरति तथा व्रत, नियम का महत्व समझाया। तव भवानी ने प्रश्न किया कि ये महारोग किन पापो के फल हैं। साध्वी जी को अवधि ज्ञान की उपलब्धि थी। उन्होने उसके पूर्व भव का वर्णन सुनाया और उसे यह भी वताया कि उसने अभक्ष्य का नियम लेकर भी किस प्रकार भंग किया था। इस वस्तु स्थिति को सुनते हुए भवानी को भी जाति स्मरण ज्ञान हुआ और वह प्रतिवुद्ध वनी। श्रावक के सम्यक् मूल १२ व्रतो को धारण किया और सातवे भोगोपभोग विरमण व्रत मे समस्त अभक्ष्यो का त्याग करके केवल आवश्यक वस्तुओ की ही छूट रखी। पीने मे भी वावडी का तीन वार उवाला गया अचित पानी लेना शुरू कर दिया। कलमी (वासमती) चावल का भात, मूँग की दाल, थोर की डडी का शाक, गाय का दूध, घी और छाछ, फलो मे केवल आंवला एव स्वादिम मे केवल सुपारी, पदार्थों के अतिरिक्त अन्य सभी पदार्थों का त्याग कर दिया।

इस प्रकार कठोर व्रत धारण कर उसका यथोचित रीति से पालन करती करती हुई वह अपना अधिकाँश समय धर्माराधना मे व्यतीत करने लगी। इसी अवधि मे एक परदेशी वैद्य आया। उसने भवानी को देखकर वताया—'हे पुत्री तूँ इस अमृत फल को खा ले और उसके साथ मंत्रित जल का पान कर, तेरे समस्त रोग जड मूल से नष्ट हो जायेगे।' किंतु नियम मे अटल, दृढता पूर्वक रहने वाली भवानी ने उसकी वात न मानी। माता पिता तथा अन्य सवधियो ने समझाया कि 'इस अवसर को हाथ से नही खोना चाहिए, ऐसा वैद्य एवं ऐसी औषधियाँ वार-वार हाथ नही आती।' भवानी ने प्रत्युत्तर में कहा—"संसार में अर्हत् के समान कोई वैद्य नही जो जन्म मरण के रोगो का नाश करते हैं, जिन धर्म के समान कोई दूसरी औषधि भी नही है इसके सेवन करने से अनादिकालीन कर्म रोग दूर हो जाते हैं, अत. इस वैद्य एव इस दवाई से कोई प्रयोजन नही। मैं अपने नियम का विधिवत् पालन करती रहूँगी।" उसकी ऐसी दृढता देख माता पिता व सवधी कुछ खिन्न हुए। उसी समय उस

वद्य ने अपना वास्तविक रूप प्रकट कर कहा—'मैंने एक दूसरे देवता के मुख से भवानी के अटल निश्चय की बात सुनी थी वह अक्षरशः सत्य सिद्ध हुई है। इससे मैं अतीव प्रसन्न हूं।' यह कहकर उसने भवानी के शरीर को रोग मुक्त करते हुए उसे स्वर्णिम कांति वाला बना दिया। इस घटना से प्रभावित हुए अनेक जनों ने अभक्ष्य का त्याग किया तथा अन्य व्रत नियम भी ग्रहण किए। तदुपरांत भवानी का विवाह एक युवक के साथ हो गया किंतु वह विवाह लोक रीति का पालन मात्र था। भवानी के प्रति बोध से उसका पति भी जैन धर्म का दृढ श्रद्धालु बन गया। दम्पत्ति ने ब्रह्मचर्य के पालन का निर्णय लिया। ब्रह्मचर्य के आचरण से उनके घर की लक्ष्मी में वृद्धि होने लगी उन्होंने उसका उपयोग सातों क्षेत्र में किया। कालधर्म को प्राप्त होने के पश्चात वे दोनों बारहवें देव लोक में उत्पन्न हुए। वहाँ से भवानी का जीव च्यवन कर बहुबुद्धि मंत्री के घर पुत्री के रूप में अवतरित हुआ है। पुण्य के प्रभाव से क्या क्या नहीं होता है।

केवली भगवान की इस अमृतमय वाणी का श्रवण कर राजा आदि धर्म में दृढ विश्वास रखने लगे। मंत्री अपनी पुत्री का ऐसा सम्मान करने लगा जैसा कुलदेवी का किया जाता है। कन्या का नाम निपुणा रखा गया। यथा नाम तथा गुण की उक्ति के अनुसार वह सम्पूर्ण कलाओं में निपुण सिद्ध हुई। उसके पुण्य के प्रभाव से अशुभ जलादि शुभ मीठा बन गया, सर्वत्र कांति हुई।

एक बार राजसभा में एक ऐसा वादी आया जिसने अनेक देशों के वादियों पर विजय प्राप्त की थी। उसने राजा से कहा— क्या आपके नगर में कोई ऐसा वादी है जिसके साथ मैं वाद विवाद करूं।' तब राजा ने कहा—कल किसी समय वादी को बुलाकर आपके साथ वाद विवाद कराऊंगा।' अब वादी को ढूंढा जाने लगा किंतु कोई समर्थ वादी दृष्टि गोचर नहीं हुआ। मंत्री अत्यधिक चिंताग्रस्त होकर घर लौटा। निपुणा ने अपने पिता को इस चिन्तातुर अवस्था में देखकर पूछा—पिता जी ऐसी कौन सी चिंता हो गई है, कि आप इतने व्याकुल हैं? तब मंत्री ने सारी वस्तु स्थिति स्पष्ट कर दी। उसे सुन निपुणा ने कहा—आप सारी चिंता से मुक्त हो जाएं मैं कल उस वादी के साथ वाद करूंगी और विजयी होऊंगी।

अगले दिन राजसभा के समक्ष निपुणा ने उस वादी से चर्चा कर उसे निरुत्तर और पराजित किया। फलत: सबने उसकी प्रशंसा की। राजा ने उसके साथ विवाह कर उसे महारानी बना दिया। यथा समय महारानी के मन में वैराग्य भाव जागृत हुआ और उसने दीक्षा ग्रहण की। संयम व्रत का निरतिचार पालन करते हुए उसने परम पद मोक्ष प्राप्त किया। सारांश यह है कि अभक्ष्य पदार्थों का त्याग निपुणा के लिए निर्वाण पद की प्राप्ति का मार्ग बना। इसी प्रकार सबके लिए अभक्ष्य पदार्थों का त्याग सबके कल्याण में सहायक हो सकता है।

स्वाध्याय

प्रश्न १. आहार शुद्धि के विषय में सुभद्रा का दृष्टांत क्या शिक्षा देता है ?

२. जन्म जन्मांतर के रोग के निराकरणार्थ गुरुणी जी क्या उपदेश देती हैं ?

३. निपुणा का दृष्टांत हमें क्या सिखाता है ?

अनर्थकारी रात्रि भोजन

जीवन के लिए भोजन आवश्यक है। भोजन के अभाव मे देह का अस्तित्व नही रह सकता, किंतु भोजन की एक मर्यादा है—भोजन जीवन के लिए है, भोजन के लिए जीवन नही। खेद यह है कि आज के युग मे जीवन का लक्ष्य भोजन बन गया है वर्तमान समय म मनुष्य खान-पान के नियमों को विस्मृत कर चुका है। जो भी अच्छा बुरा भोजन सामने आता है, वह तत्काल उसे लेकर खा लेता है। न तो उसे मांस मे घृणा है और न ही मद्य के प्रति तिरस्कार भाव है। भक्ष्याभक्ष्य का तो उसे लेश मात्र ज्ञान नही है। धर्म की तो बात ही छोड द आज भोजन से चटक म आकर अपना स्वास्थ्य भी विकृत किया जा रहा है। औषधियों के प्रयोग की सीमा ही नही है। जिसने शरीर को बिगाडा मानो उसने जीवन को भी बिगाड लिया अत भोजन के सबध में पूर्णत सावधान रहने की आवश्यकता है।

आज मनुष्य प्रात काल शय्या म उठते ही खाना शुरू कर देता है और सारा दिन पशु के समान चरता रहता है, घर में खाता है, मित्र के यहाँ खाता है और बाजार म जाकर भी खाने का क्रम जारी रखता है। सायकाल खाता है रात को खाता है और शय्या पर सोते सोते भी दूध का ग्लास गट गट कर पी जाता है। पेट है या पटारी ? दिन रात पेट का गड्ढा भरा जाता है तो भी सतोष नहीं।

भारतीय मनीषियो ने भोजन विषयक अति सुदर नियम प्रस्तुत किए हैं, भोजन म शुद्धि पवित्रता और स्वास्थ्य का ध्यान रखना चाहिए न कि स्वाद का। मांस मदिरा जसे अभक्ष्य पदार्थों स घृणा करनी चाहिए, भूख लगने पर शुद्ध भोजन ही करना चाहिए भूख के बिना पेट में आहार का एक कण भी डालना रोग को निमत्रण देने के समान है भूख लगने पर भी शुद्ध भोजन दिन में दो तीन बार से अधिक नहा करना चाहिए तथा रात के समय कभी भी भोजन नहीं करना चाहिए।

जन धर्म में रात्रि भोजन निषेध पर विशेष बल दिया गया है। प्राचीन काल से ही रात्रि भोजन न करना जनत्व की पहचान का विशिष्ट लक्षण माना जाता रहा है। वास्तव म रात्रि भोजन के त्याग से जन होने का शा हो

जाता है। जैन धर्म मे रात्रि भोजन को हिंसा का, इस जीवन में रोग का, परलोक को दुर्गति पूर्ण बनाने का कारण और महादोप मय कार्य माना गया है। अनेक ऐसे सूक्ष्म जीव है जो सूर्य के प्रकाश में दृष्टि गोचर होते हैं रात्रि में उन्हे नही देखा जा सकता है, इसलिए ऐसे सूक्ष्म जीवो के भोजन मे मिल जाने से बहुत अधिक अनर्थ होने की सम्भावना रहती है। मांसाहार का त्यागी मनुष्य भी इस प्रकार रात्रि भोजन के कारण कभी-कभी मांस भक्षण का दोपी बन जाता है। वास्तव मे रात्रि भोजन मे अनेक सूक्ष्म जीवो की व्यर्थ हिंसा हो जाती है।

कुछ व्यक्तियो का तर्क है, कि "रात्रि भोजन का निपेध अधकार में सूक्ष्म जीवो के दिखाई न देने के कारण ही किया जाता है न ? तब प्रकाश मे भोजन करने पर तो कोई आपत्ति नही होनी चाहिए।"

वस्तुत. प्रकाश होने के उपरांत भी इस प्रकार की हिंसा से नही बचा जा सकता है, दीपक, विद्युत. चद्र का प्रकाश कितना ही क्यो न हो वह सूर्य प्रकाश की भाति व्यापक अखण्ड, उज्जवल और आरोग्य प्रद नही है। जीव रक्षा और स्वास्थ्य की दृष्टि से भी सूर्य का प्रकाश सर्वाधिक उपयोगी है। अनेक बार हम देखते है, कि दीपक के चारो ओर अनेक जीव जतु उडते रहते हैं, अतः भोजन करते समय इनसे बचे रहना कठिन है, बिजली के बल्ब के सामने भी अनेकानेक सूक्ष्म जीव सैकडो की संख्या मे एकत्रित हो जाते है, जो उड़ते भटकते या टकराते हुए भोजन, आहार व तरल पदार्थो मे गिर सकते हैं, वर्षा काल में इसका साक्षात अनुभव किया जा सकता है।

संतोप, त्याग धर्म का मूल है, इसलिए दिन की सभी प्रवृतियो के साथ-साथ भोजन सबधी प्रवृति भी समाप्त कर देनी चाहिए। रात के समय पेट को पूरा विश्राम प्रदान करना भी जरुरी है। इससे नीद अच्छी आती है, ब्रह्मचर्य के पालन में सहायता प्राप्त होती है, आरोग्य की हर प्रकार की वृद्धि होती है। जैन धर्म मे इस नियम का दृष्टिकोण पूर्णत वैज्ञानिक व आध्यात्मिक है। शरीर शास्त्री भी रात्रि भोजन को बल, बुद्धि व आयु का विनाशक बताते हैं। रात्रि मे हृदय और नाभी कमल संकुचित हो जाते हैं, फलत सूर्यास्त के बाद किए गए भोजन का पाचन भी ठीक रीति से नही हो पाता है।

धर्म शास्त्र व चिकित्सा शास्त्र की गहराई में न जाकर हम विचार करें तो भी ज्ञात होगा, कि रात्रि भोजन में बड़ी हानि होती है, अतः इसका सर्वथा त्याग किया जाना चाहिए। भोजन में चींटी पड़ जाए तो बुद्धि का नाश होता है, जूं खाने से जलोदर नामक भयंकर रोग होता है। मक्खी पेट में जाकर वमन करवाती है। छिपकली भोजन में आ जाए तो मृत्यु हो जाती है। मसाले से भरे शाक आदि में बिच्छू मिल जावे तो तालु में छिद्र हो जाते हैं। यदि बाल (केश) गले में चिपट जावे तो स्वर भंग हो जाता है। भोजन में रोगिष्ठ जन्तु आ जावे तो कैंसर व लकवा जैसे रोग हो जाते हैं। इस प्रकार अनेक दोष रात्रि भोजन में प्रत्यक्ष दृष्टि गोचर होते हैं।

रात्रि भोजन विवेक हीनता का भाजन है। एक दो नहीं हजारों घटनाएं रात्रि भोजन के परिणाम स्वरूप होती हैं। सैकड़ों लोग अपने जीवन से हाथ धो बैठते हैं। उदाहरणतः —

मेवाड़ के भाटिया गाँव में एक राज कर्मचारी के घर पंडित जी महाराज रसोई बनाया करते थे। महाराज का नाम टीकाराम था, एक दिन उसने भिंडी का शाक बनाया, भिंडिया में मसाला भरकर तवे पर छौंक दिया, सहसा एक छिपकली तवे पर गिरी, तवा बहुत गर्म था, छिपकली गिरते ही मर गई और सूख कर भिंडिया में मिल गई। राज कर्मचारी भोजन करने बैठा तो थाली में छिपकली भी थी, खाते समय पूंछ हाथ में आई, राज कर्मचारी रुष्ट हुआ और डांटने लगा—'अरे आलसी! तुम भिंडी का डण्ठल भी नहीं निकाल सकते?' इतने में उसे पाँव दिखाई दिए, उसने तत्काल दीपक मंगवा कर प्रकाश में देखा तो छिपकली पर दृष्टि गई। उस दिन से उसकी आँखें खुल गई, उसने हमेशा के लिए रात्रि भोजन त्याग कर दिया। दुर्भाग्यवश यदि वह छिपकली खा लेता तो कितना अनर्थ हो जाता।

कुछ समय पहले की बात है अहमदाबाद में ताड़ी मादक द्रव्य पीने वालों में से ११० की मृत्यु हुई, अन्य की स्थिति गम्भीर हो गई। महाराष्ट्र में चार युवा मित्र रात्रि में घूमने निकले उनकी गन्ने का रस पीने की इच्छा हुई। रस वाले को आर्डर दिया और रस पिया। रस पीते ही कुछ क्षणों में उनके प्राण निकल गए, उनके परिजनों को बहुत आघात लगा। रस वाले के यहाँ जाँच करने पर गन्ने के कूचे में छोटा सा साँप कुचला हुआ दिखाई दिया। यदि वे रात्रि में रस नहीं पीते तो यह दुर्घटना नहीं होती।

रात्रि के समय विषैले जानवर अपने भोजन की तलाश मे निकलते है, यदि वे हमारे भोजन मे मिश्रित हो जावे तो अनेक दुखद परिणाम हो सकते है। ऐसे अशुभ, भयंकर, परिणामो से सुरक्षित रहने के लिए ज्ञानियो ने पहले से ही इसके त्याग का निर्देश दिया है। इसका पालन करने वाले अवश्यमेव सुखी रहते है।

स्वाध्याय

★ रात्रि भोजन के निषेध मे आध्यात्मिक व वैज्ञानिक कौन-कौन से दृष्टि कोण है ?

★ रात्रि भोजन से होने वाली हानियो का वर्णन करो ?

★ रात्रि भोजन के विषय मे पडित जी व चार युवको का दृष्टात क्या शिक्षा देता है ?

आहार सुधार सम्पूर्ण सुधार का मूल है

इंगलैंड अमरीका आदि उन्नत देशों में समाज-सुधारक, विद्वान, डाक्टर, प्रसिद्ध धर्माचार्य विज्ञान व शरीर शास्त्रवेत्ता एक मत होकर कहते हैं, कि आहार का प्रश्न इस युग के लिए विशेष महत्व का प्रश्न है। आहार के सुधार पर समस्त नैतिक, आर्थिक और सामाजिक सुधार आधारित है। पाश्चात्य देशों में आहार विषयक बहुत उथल पुथल मची हुई है, जैसे-जैसे लोग भोजन विषयक ज्ञान प्राप्त करते जाते हैं वैसे वैसे उसमें सुधार कर रहे हैं। विद्वान तथा अनुभवी डाक्टरों के मतानुसार जिह्वा व स्वाद के वश न रह कर वहाँ के निवासी ऐसा भोजन ग्रहण करते हैं जो प्रत्येक दृष्टि से लाभप्रद हो, वे अनेक वर्षों से भोजन लेने की प्रचलित हानिकारक रीतियों को साहस पूर्वक छोड़ रहे हैं। जिससे स्वस्थ्य और दीर्घ आयु भोग कर अपनी संतानों को उत्तराधिकार में सद्गुण और जीवन जीने की रीतियाँ प्रदान करते जा रहे हैं, यह वास्तव में हर्ष का विषय है। हमारे देश में यद्यपि मानव जीवन के लिए हितकारी अन्य प्रश्नों के विषय में समुचित प्रयास हो रहे हैं किंतु आहार जैसे महत्वपूर्ण प्रश्न पर आँखें मूंद सी गई है। स्वाद लोभ के वशीभूत होकर धार्मिक व आरोग्य के नियमों का उल्लंघन हो रहा है। हम यह भूलते जा रहे हैं, कि व्यक्तियों पर भावी पीढ़ी पर तथा राष्ट्र पर आहार का क्या प्रभाव पड़ता है। मांसाहार की जो प्रथा प्रचलित की गई है वह महान अनर्थ की जनक है। सुधार व प्रगति के इस युग में आहार जैसे महत्वपूर्ण विषय की उपेक्षा करने के साथ साथ आरोग्य और सब प्रकार से सुखकर प्रकृति की भी उपेक्षा की जा रही है।

भोजन के हेतु और प्रकार—शरीर स्थिरता हेतु भोजन मानव जीवन की प्रथम आवश्यकता है। शरीर स्वस्थ्य रहे उसका यथेष्ट पोषण हो यह भावनाएं पुलकित हों मन प्रसन्न रहे व मस्तिष्क का पोषण हो एवं महत्वपूर्ण कार्यों के लिए शुद्ध व सात्विक आहार होने से आज की अस्त व्यस्त स्थिति में काफी परिवर्तन सम्भव है और इस संसार में स्वर्ग तुल्य सुखों का भोग किया जा सकता है।

माँसाहार, की हानियाँ—माँस मत्स्य के भोजन से अनेक प्रकार की हानि होती है। इन हानियो को चार दृष्टि बिंदुओं में सीमित करने से इस अभक्ष्य भोजन की हानियाँ ध्यान मे आ सकती है।

१. नैतिक व आध्यात्मिक दृष्टि से विचार करने पर प्रतीत होगा कि माँसाहार वर्तमान और भावी पीढ़ी के लिए बहुत हानिकारक है। इस भोजन का समाज पर व खाने वाले पर जो कुप्रभाव पडता है, उस पर ध्यान दिया जावे तो कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति माँसाहार से चिपटे रहना श्रेयस्कर नही मानेगा। सर्वप्रथम यह ज्ञात करें कि माँसाहार के गुण दोषो का उसके भक्षको के नैतिक सस्कारो और भावनाओ पर कैसा प्रभाव पडता है ? रक्तपात और मारकाट के भीषण दृश्यो से सामान्यत. कोई भी सहृदय मनुष्य काँप उठता है, फिर रूधिर लिप्त प्राणी वध से प्राप्त किए गए माँस के लोथडो और दीन व मूक प्राणियो के शरीर के टुकडे खाते हुए माँसाहारियो के हृदय मे लेश मात्र भी सकोच नही होता यह आश्चर्य का विषय है। इससे स्पष्ट होता है कि माँस भक्षण की यह प्रथा माँस भक्षियो के हृदय को पाषाण के समान कठोर व निष्ठुर बना देती है, उनके हृदय को जड बना देती है और उनकी नैतिकता का नाश करती है।

२ धार्मिक दृष्टि से माँसाहार धर्म विरुद्ध है, इससे धर्म की हानि होती है, ऐसा आर्य क्षेत्र के विभिन्न धर्मानुयायो, धर्म शास्त्रो, धर्म गुरुओ द्वारा कहा गया है, माँसाहार से दया का नाश होता है। धर्म भ्रष्ट कभी भी सुखी नही हो सकता है।

३. वैज्ञानिक दृष्टि से माँसाहार प्रकृति विरुद्ध होने के कारण अनेक रोगो का जनक व आयु को घटाने वाला है।

४ आर्थिक दृष्टि से भोजन महगा है। साथ ही प्रत्यक्ष व परोक्षत देश की आर्थिक स्थिति के लिए हानिकारक है।

तामस गुण की खान—"जैसा आहार वैसा डकार"—इस कथन के अनुसार जैसा भोजन किया जावेगा वैसी ही भावनाएं हममे अकुरित होती है। मत्स्य, माँस का भोजन निदर्यता से, अनगिनत पशु-पक्षियो के विनाश से, अन्याय और अनीति से, अनावश्यक रूप से ईश्वरीय व प्राकृतिक नियमो के उल्लघन से प्राप्त किया जाता है, वह कुप्रवृत्तियो को जन्म देगा, इसमे कोई नई

बात नही है। चिकित्सा शास्त्रियो का मत है कि मास तमो गुण की वृद्धि करता है पशुता को उत्तेजित करता है।

डा० फोरवस विनस्लो का कथन है कि मास तमोगुण को बढ़ाकर पशुता को उत्तेजित करता है। मानव को पशु रूप में परिवर्तित कर देता है। इसमें सदेह नहीं है, उसका चिरकाल तक उपयोग अनेक गम्भीर अपराधो का कारण होता है।

दानवीय लक्षण—तमोगुण अहकार, क्रोध, मद, अन्याय हत्या आदि आसुरी लक्षणो का खान है तमोगुणी व्यक्ति का ससार में आदर नहीं होता है। मासाहारी में अन्याय अनीति, हत्या भावना आदि की अधिकता होती है। तमोगुण से उत्पन्न राक्षसी लक्षण कुटुम्ब समाज, सारे देश के सुख आराम पर प्रहार करने वाले सिद्ध हुए हैं। वर्तमान युग में प्रसारित युद्ध, मारकाट, तथा अन्य असाधारण घटनाए तामस वृत्ति का प्रत्यक्ष परिणाम है। इन घटनाओ के फलस्वरूप विश्व की शांति, मेल मिलाप और सुख का नाश हुआ है अत बुद्धिमान महानुभाव तमोगुण के पोषण पदार्थों के सेवा से सावधानी पूर्वक सदैव दूर रहते हैं। तामस प्रधान होने से मासाहारियों की नीति के अकुर नष्ट हो जाते हैं, इस विषय म सिडनी एस बीयड ने प्रेसीडेंट आडर आफ दी गोल्डन एज' पुस्तक में एक स्थान पर लिखा है –

मास मछली का आहार मानव की उच्च भावनाओं का नाश करके तुच्छ वृत्तियो को आदोलित करता है, यह सर्वसम्मत है कि ऐसा भोजन मानव को स्वार्थी, हत्यारा, अनीतियुक्त बनाता है। इतिहास, अनुभव और आलोचना से यह प्रमाणित हो चुका है कि अपनी भीतरी पशुवृत्तियो के पोषण से हमारी नैतिक व आध्यात्मिक अधोगति होती है।

महापुरुषो का मन्तव्य—भगवान महावीर ने पृथ्वी अग्नि वायु वनस्पति और त्रस इन छ कायो के जीवो को अभयदान देकर आत्मा को पूर्णत अहिंसक बनाने अजर अमर बनाने का दिव्य सत्य प्रकाश विश्व को प्रदान किया है। प्रत्येक युग व धर्म गुरु उपदेशक सत महात्मा सुधारक व सुशिक्षित डाक्टर भी मासाहार त्याग की बात प्रमाणित करते हैं और तद्नुरूप उद्गार प्रकट करते हैं पायथेगोरास, प्लेटो, मोन्टेग जैसे दार्शनिक

तत्ववेत्ता, बुद्ध, मनु, जस्युस्त, डेनियल, ईसाममीह आदि अवतारी पुरुष और क्रोसेस्टम, टेरेटयुलियन क्लोमेम, फासीसिओ आसासी, गेमंडो, जोह् न हावर्ड, स्वीडवर्ग, जोह् न वेस्ली मिल्टन, न्यूटन, फ्रेंकलिन, पेली, न्यूमन, विलियम वुथ और क्रेमवुल वुथ आदि सुज्ञ पुरुष यही वात कह गए हैं। ये कहते हैं मासाहार से हीन वृत्तियो का पोषण होता है। पशुवृत्ति के पुष्ट होने के कारण मानव जाति के नैतिक व आध्यात्मिक वल का विनाश होता है।

उपर्युक्त महानुभावो मे धर्मगुरुओ, तत्वज्ञो, शिक्षितो, और समाज सुधारको का समावेश होने से उनके कथन का प्रभाव सव पर होना चाहिए अनेक प्रकार से अवनति की ओर अग्रसर करने वाला अनिष्टकारी दुर्गुणो की खान मांसाहार को मानवोपयोगी आहार मानना धर्मद्रोह, आरोग्यद्रोह और नीति-द्रोह है।

सात्विक भाव का सागर—दूसरी तरफ विचार करे तो अन्न, जल, शाक का भोजन प्राकृतिक व सादा होने के कारण शरीर को रोग मुक्त रखता है। नैतिक दृष्टि से यह उच्च सात्विक भावो के अंकुरो का सृजक है। सात्विकता जगत मे पूजनीय है, और युगो तक पूजनीय रहेगी, इसमे संदेह नही अतः मनीषीजन सात्विकता के अवलम्बन की खोज करते हैं। वे इस गुण व उसमे विकसित अनेक सदगुणो का उपहार देने वाले शाकाहार को अपनाते हैं। सात्विकता ऐसा गुण है, जो व्यक्ति को परमात्मा के समीप ले जाता है। परमात्मा पद की प्राप्ति ज्ञानी मनुष्यो के जीवन का अंतिम लक्ष्य होना चाहिए। सात्विक भोजन लेने वाले मनुष्यो की संतान स्वस्थ्य व दोर्घ आयु भोग कर विश्व मे सद्मानव के रूप मे जीवन यापन करने वाली और भाग्यशाली होती है।

अपने पाँव पर कुल्हाडा और हित की हानि—इतनी जानकारी के बाद भी आदर्श रूप नीति और धर्म वाले देश के निवासी, नीति और धर्म का मूलोच्छेदन करने वाले असख्य प्राणियो का निर्मम सहार करने वाले तथा अनगिनत रोगो को जन्म देने वाले मासाहार को कैसे स्वीकृत कर सकते हैं। क्या मानव को ईश्वर की अपेक्षा नही है? अथवा नीति की आवश्यकता नही है? क्या वे नही चाहते कि उनकी और उनकी सतान की मानसिक व नैतिक उन्नति हो? यदि ऐसा है तो यह कितना आश्चर्य, कितनी अज्ञानता है कि वे

अब भी परमात्मा से दूर रखने वाले, नीति व धर्म के विनाशक, बालकों में अनीति और अधर्म का बीजारोपण करने वाले निदय आहार मांस मछली, अंडा का त्याग नहीं कर रहे हैं। इस आहार को मानव जाति का क्रूर शत्रु समझ कर यदि इसे समूल नष्ट करने का निश्चय नहीं किया जाता तो यह अपने पांव पर स्वयं कुल्हाडी मारने के समान हास्यापद व्यवहार होगा इसमें किंचित संदेह नहीं।

समाज की विकृति तथा भयंकर क्रूरता

संसार के मांसाहारी लोगों के लिए मांस की पूर्ति हो सके इस हेतु समाज के एक भाग को कसाई का व्यवसाय अपनाना पड़ता है। कसाई शब्द ही क्रूरता और निर्ममता का बोधक है। संसार में कसाइयों के प्रति जनता में सद्भाव जाग्रत नहीं होता। इस प्रकार समाज के एक अंश को विकृत करने का दोष भी मांसाहारियों के मस्तक पर आरोपित होता है। यह वर्ग समाज की सामान्य नीति पर बहुत बुरा प्रभाव डालता है।

मी सीडनी एम बोयड ने एक स्थान पर लिखा है कि मांसाहार का मानव की नैतिक भावनाओं पर प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से कुप्रभाव पड़ता है। यह स्पष्ट है कि जहाँ रुधिर की नदियाँ प्रवाहित होती हैं जहाँ मारकाट रक्तपात होता है वहाँ लोग पाशविक वृत्ति वाले, पाषाण हृदय और दानवी प्रवृत्ति बन जाते हैं। उनके बच्चों में भी बाल्यावस्था से ही उसी प्रकार के घातक, निष्ठुर संस्कार अंकुरित होते हैं। तदुपरांत भयंकर अपराध अधमता, पशुता आदि अत्याचार का नग्न नृत्य सा होने लगता है। हत्याओं व कत्ल से समाज या प्रजा का अधः पतन होता है, सामाजिक नीति का नाश हो जाता है, यह संदेह रहित है। इस कातिलाना प्रवृत्ति से बच्चों की नैतिक भावना का अस्तित्व ही नहीं रहता। उदाहरणतः, हम देख सकते हैं कि संयुक्त राज्य (United states) में होने वाली हत्याओं के उत्तरदायी अधिकतर कसाई हैं।

मांसाहार की कनिष्ठता

संसार मे पापो की गिनती ही नही। हमारे समक्ष एक से एक बढकर पाप प्रस्तुत होता है मासाहार का पाप अति भयकर और निन्दनीय है। मनुष्य के कोमल हृदय की सुकुमार भावनाओ का नाश करके मासाहार उसे निर्दय और कठोर बना देता है। मांस न तो किसी खेत मे उत्पन्न होता है, न किसी झाड पर उगता है और न ही आकाश से बरसता है। वह चलते फिरते जीवित प्राणियो की हत्या करके उनके शरीर से प्राप्त किया जाता है। मनुष्य के पाव मे कांटा चुभ जाए तो उसकी वेदना भी असह्य होती है, वह सारी रात तडपता रहता है। निर्दोष मूक जीवो की गरदन पर छुरी चलाने से उत्पन्न वेदना कितनी भीषण होगी ? क्या यह कार्य न्याय सगत है ? शात-चित्त से इस बात पर यथार्थत. विचार करे कि वध किए गये प्राणी की पीडा कितनी भयावह होगी ? अपनी जीह्वा के क्षणिक स्वाद के लिए दूसरे जीवो को मार डालना कितना जघन्य व दुष्टता पूर्ण आचरण है ? यदि मानव किसी को जीवनदान नही दे सकता तो दूसरो के जीवन का अपहरण करने का उसे क्या अधिकार है ?

आहार विहार में होने वाली साधारण हिंसा भी जब निन्दनीय है। ऐसी स्थिति में स्थूल पशुओ की हिंसा, कितना भयकर पाप है ? कसाई जब चमचमाता छूरा लेकर मूक पशु की गरदन पर प्रहार करता है, तब वह दृश्य कितना भयावह और अमानुषिक होता है ? सहृदय व्यक्ति तो ऐसा दानवीय दृश्य अपने नेत्रो से देख भी नही सकता। खून की नदी बह रही हो, मास का ढेर लगा हो, इधर उधर हड्डियाँ बिखरी पडी हो, रक्त से लिप्त चमडा जहाँ तहाँ रखा हो, इससे भी बढकर गिद्ध आदि पक्षी मंडरा रहे हो—ऐसी घृणित स्थिति में मानव नही राक्षस ही काम कर सकता है। इन कारणो से यूरोप के प्रतिष्ठित न्यायाधीश कसाई की साक्षी भी नही लेते। उनकी दृष्टि

म कसाइ इतना निदय हा जाता है कि वह मनुष्य हा नहीं रहता। हृदयहीन, दयाविहीन पुरुष म मानवता की सभावना कस हा सकती ह ?

आर्थिक दृष्टि स भी मांसाहार देश क लिए घातक है। गाय भस, बकरी आदि प्राणी देश के लिए बहुत उपयोगी हैं। मांसाहारियो द्वारा इनका संहार अनुचित भयंकर तथा आर्थिक रूपण देश को चौपट करने वाला है ?

उदाहरण के लिए गाय को ही लें। इससे हम दूध, दही घी, बल गोबर आदि की प्राप्ति होती है। एक गाय की पूरी पीढी म ४ ७२ ६०० मनुष्यो को सुख मिलता है। जीव विज्ञान विशारदों ने यह गणना बडी गहनता से की है। प्रत्येक गाय के जीवन पर्यन्त दूध स २४,९६० व्यक्तियो को एक बार तृप्ति होती है। औसतन हर गाय स छ बछडे और छ बछडिया जन्म लेती है। कल्पना करें कि इनमे स एकाध मर जाता है। तो भी शेष पांच बछडिया के जीवन भर के दूध स १ २४,८०० व्यक्ति एक बार तृप्त होते हैं। अब पांच बल बचे व अपने जीवन काल म औसतन कम स कम पांच हजार मन अनाज पदा कर सकते हैं। यदि प्रत्येक व्यक्ति एक बार तीन पाव अन्न खाए तो इनस साधारणत ढाइ लाख मनुष्या की उदरपूर्ति हो सकती है। बछडिया का दूध और बलो द्वारा उत्पादित अनाज को जोड देने से ३७४८०० व्यक्तियो की एक समय की भूख शांत होती हैं। दोनो सख्याओं का जोड करने स एक गाय की पीढ़ी से ४७४,६७० मनुष्य एक समय तृप्त हो जाते हैं।

यही नहीं, बल गाडी खीचने के काम आते हैं उनसे भार ढोने का काम भी लिया जाता है। गाय के इतने अधिक उपकारों क कारण ही उसे माता कहा गया है।

इस प्रकार एक बकरी क आजीवन दूध से २५७२० व्यक्तियो का एक समय की तृप्ति होती है। हाथी घोडा ऊंट आदि प्राणी भी मनुष्य पर अनेक उपकार करते हैं। जो लोग इन उपकारी पशुओं को मारते हैं या मरवाते हैं उन क्रूर जनो या समाज क हत्यारे इस उपनाम स पुकारने क सिवाय और क्या नाम दिया जाए ? पशु धन क घटने स आंध्र, मद्रास, बंगाल उत्तर प्रदेश आदि स्थानो पर बल तथा घोडो क अभाव म मजदूर मनुष्यो का गाडियाँ लारियों पर, रिक्शा चलाने पडते हैं। मांसाहार ने मनुष्य

को पशु बना डाला है। पशु धन का नाश हो जाने पर मानव के विनाश की बारी आने मे विलम्ब नही होगी। हिंसक संस्कारो के कारण गर्भस्थ शिशुओ की हत्या शुरू हो चुकी है, हमे सावधान हो जाना चाहिए।

स्वास्थ्य की दृष्टि से भी मास निषिद्ध पदार्थ है— मासाहार से कैसर, क्षय, पायोरिया, गाँठ, सिर दर्द, उन्माद, अनिद्रा, लकवा, पथरी आदि भयकर रोगो का आक्रमण होता है। शारीरिक शक्ति और मानसिक प्रतिभा पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। इस सबंध मे यूरोप के ब्रुसेल्स विश्वविद्यालय में जो वैज्ञानिक परीक्षण हुए हैं; उनमे भी मासाहारियो की अपेक्षा शाकाहारी ही श्रेष्ठ सिद्ध हुए हैं।

कहा जाता है कि उपर्युक्त परीक्षणो मे दस हजार विद्यार्थी सम्मिलित हुए। इनमे पाच हजार को केवल फल, फूल, अन्न आदि शाकाहार तथा पांच हजार को मासाहार दिया गया। छ मास के पश्चात अनुसधान करने से ज्ञात ज्ञात हुआ कि मासाहारियो की अपेक्षा शाकाहारी प्रत्येक विषय मे चतुर सिद्ध हो रहे हैं। शाकाहारियो मे दया, क्षमा, प्रेम, आदि गुणो का प्रादुर्भाव देखा गया,जबकि मासाहारियो मे क्रोध, क्रूरता, कायरता आदि का। शाकाहारियो मे बल, सहन-शीलता आदि गुण भी विशेष रूप से विकसित हुए। मानसिक शक्ति का विकास भी उनमें अधिक अच्छा था।

कि बहुना ? धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, व आरोग्य की दृष्टि से मासाहार सर्वथा वर्जनीय है। जो मानव मानव कहलाने के अधिकारी हैं, उन्हें मास भक्षण का सदा के लिए त्याग करना चाहिए।

मांसाहार के कारण शक्ति का भ्रम

१-७-१९७५ के 'सदेश' की संस्कार पूर्ति मे बताया गया हैं कि मासाहार से शक्ति प्राप्त होती है, यह केवल एक भ्राति है।

१. खिलाडियों मे आतरिक बल अथवा ओज मासाहार से उत्पन्न होता है, इस मिथ्या धारणा का याले विश्वविद्यालय के डा० इरविंग फीशर ने निराकरण कर दिया है। वहाँ के ४९ व्यायाम वीरो पर किए गए प्रयोगो

स ज्ञात हुआ है कि मासाहारियो की अपेक्षा शाकाहारियो म दुगुना सामर्थ्य होता है।

२ इन्टरनैशनल एथलेटिक वाड के मानद मडिकल आफिसर सर आडल्फ अब्राम्स का कथन है कि शाकाहार मे कैलरी है पूरा प्रोटीन है और उससे सब प्रकार का सम पोषण प्राप्त होता है। तरने का प्रतिस्पर्धा, दौड कुश्ती, भार उठाना और साइकल स्पर्धा में अनेक शाकाहारी व्यायाम वीरों ने पदक जीते हैं और रिकाड बनाया है।

३ १९६३ म रोनाल्ड मुर्गी ट्रोइट नामक शाकाहारी सायकल चालक सायकल स्पर्धा में १५ बार प्रथम आया। आलम्पिक खेलो म कम स कम आयु म स्वण पदक विजता श्री मुरेरोथ शाकाहारा था। १९५६ म मेलबान का ४०० और १५०० मीटर की दौड में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाला खिलाडी शाकाहारी था। १९६० म राम की आलम्पिक म भी श्री मुरेराक्ष ४०० मीटर की दौड में सवप्रथम आया था। इगलिश खाडी को तरकर पार करने वाला श्री बील पिकटिंग भी शाकाहारी था। आस्ट्रेलिया का श्री एलक जेंडर मकफरसन भार उठाने म प्रथम रहा, उसे यग एपोलो की पदवी मिली थी उसने २२०८ टन की ट्रेन का अकेले हाथ व खीचा था। आधुनिक समाचार पत्रा स भरा हुआ ट्रक तो उसने दाता स ही उठा लिया था। जानी वसमूलर तराकी का विश्व चम्पियन शाकाहारा था। किसी समय इग्लण्ड के सम्राट का चिकित्सा अधिकारी जनरल सर राबट मेककरीसन भारत आया था। तब वह १९३६ म काश्मीर गया। वहाँ उसने देखा कि दीघ आयु भागने वाले हुजा नामक जाति के लाग अधिक तर गेहू क बिना छने आटे का राटी ताज फल व शाक भाजी खाते थे। वे दूध भी बकरी का पीत थे।

४ गाय तथा सूअर क मांस म अनेक प्रकार की विषली औषधियों का पता चला है। गाय भस अथवा सूअर को जा घास चराइ जाता है उस पर डी डी टी छिडका जाता है। वह डी डी टी गाय के पट म जाता है और मांस म मिश्रित हो जाता है।

यदि डी. डी टी की बात की उपेक्षा भी कर दे तो भी मांस को अधिक समय तक रखने के लिए जो रसायन प्रयुक्त होते हैं, उन का मटनसेडविच खाने वाले को ज्ञान ही नही होता। मांस का रग; कोमलता स्वाद आदि बदलने और उसे फैशनेवल बनाने के लिए नाइट्रेट डाला जाता है। यह नाइट्रेट मनुष्य के लिए हानिप्रद है। गाय तथा सूअर हृष्ट पुष्ट हो और वध से पूर्व अधिक वजन वाले बन कर अधिक मास दे सके, इस उद्देश्य से उन्हे डीएथीलस्टील वेस्टोरल नामक होर्मोन दिया जाता है। सक्षेप मे इसे डी ई एस. के नाम से पहचाना जाता हैं। यह होर्मोन गाय की सानी मे डालने से कुछ महीनो मे गाय का वजन ५०० पौड तक वढ जाता है। इस डी ई एस का प्रयोग चूहो, खरगोशो आदि जानवरो पर करने से ज्ञात हुआ हे कि इससे उन सबको कैंसर हो गया। अमेरिका मे प्रति वर्ष ३$\frac{1}{2}$ या एक करोड गायो और एक करोड साठ लाख मेढो का वध किया जाता है। उनमे से ७५% गायो और मेढो की सानी मे डी. ई. एस दवाई मिलाई जाती है। यह औषध्र कैंसर के कीटाणु उत्पन्न करने मे सहायक है। मासाहार के कारण आज कैंसर से लाखो रोगी पीडित हैं।

ससार में होने वाले प्राणी वध के आकडे निम्नलिखित हैं,—

दूध देने वाले पशु गाय	१० ७० करोड
बछडे	२.६७ करोड
भैंस	८.४८ करोड
मेढा	११.१८ करोड
बकरा, मेमने आदि	७.१२ करोड
सूअर	२७ ७८ करोड
घोडा	६ लाख

इस प्रकार लगभग ५८ करोड से अधिक प्राणियो की अर्थात समस्त भारत की जनसख्या के बराबर प्राणियो की भोजन के निमित्त हत्या होती है। वध की प्रणाली और स्थिति भी कम्पन पैदा करने वाली है। पशुओ

(३) भक्ष्याभक्ष्य के विषय मे आप जो कुछ समझ सके हैं, उसकी संक्षेप मे चर्चा करे ?

(४) एक गाय कितने व्यक्तियो के लिए उपयोगी है ? कैसे ? आकडे देकर बताओ ।

(५) मासाहार सर्वथा वर्जनीय है, इस विषय मे उद्धरण और उदाहरण दो ।

(६) शाकाहार अधिक अच्छा है या मासाहार ? विविध दृष्टिकोणो मे इसकी चर्चा करो ।

(७) मांसाहार करने से किन-किन रोगो के उत्पन्न होने का भय है ?

अभक्ष्य अंडे

हमारी अत्यत पवित्र आर्य देश की मान्यता के अनुसार अडा सात्विक भोजन नही हैं। यह मानव जाति का भोजन भी नही है, यह तो सर्वथा अभक्ष्य और वर्ज्य है। तामसिक व राजसिक आहार होने के कारण यह अनेक दुर्गुणो से परिपूर्ण है।

अंडे के पीले भाग मे २% सेच्युरेटेड फेटी एसिड होता है, जिसके भक्षण से पथरी जैसे अनेक रोग होने का भय रहता है, इसलिए इसका त्याग करना उचित है।

(1) Eggs are stores of poision, (2) Eggs contain D. D T. (3) Religion does not permit to use of meat or Eggs—mahatma Gandhi, (4) Eggs cause heart diseases high blood—pressure etc. (5) Eggs cause corrosion of blood vessels. (6) Eggs cause Gall stones, (7) Eggs cause Ecgema and Paralysis, (8) Eggs cause Putiefaction, (9) Eggs contain Phosphoric Acid, (10) Intensive Egg laying is dengerous, (11) Eggs cause T B and white Diarrhoea, (12) Eggs do not suit humen digestion, (13) Egg eating involves cruelty and robbery, (14) Egg eating is an evil act, (15) Eggs are full of filthy substances .

(१) अडे जहर से भरे हुए हैं। (२) उनमे डी. डी. टी के तत्व है। (३) महात्मा गाधी कहते हैं, किसी भी धर्म मे अडा व मास खाने की आज्ञा

नहीं है। (४) अडों के प्रयोग से हृदय रोग उच्च रक्त चाप, पथरी आदि बिमारी होती है। (५) रक्त नलियो मे छिद्र (घाव) और कठोरता निर्मित हो जाती है। (६) पित्ताशय में पथरी हो जाती है। (७) गजली और लकवा हो जाता है। (८) अडे पेट में सड़न उत्पन्न करते हैं। (९) नाइट्रोजन और फास्फोरस एसिड से अनेक रोग हो जाते हैं। (१०) शरीर में रहे हुए कीटाणुओं को अडा विषाक्त बनाता है। (११) टी बी और पेचिश के कीटाणु शरीर में अडो के कारण उत्पन्न होते हैं। (१२) अडों का भक्षण निर्दयता का प्रतीक व गर्भ हत्या तुल्य है। (१३) पाचन तन्त्र में अडे गडबडी करते हैं। (१४) अण्डो से क्रूरता उत्पन्न होती है। (१५) यह नर मादा का अशुचि रूपी मल है जो स्वास्थ्य का नुकसान करता है।

अडे में विद्यमान यूरिक एसिड जहर से पाचन शक्ति का समूल विनाश हो जाता है इसलिए अडा को आहार के रूप में मान्यता देने वाला विज्ञान न्याय संगत नही है। अपितु मनुष्य के स्वास्थ्य को विनाश के मार्ग पर ले जाने वाला है।

अडे से पचेन्द्रिय जीव की हिंसा —

(१) अंडा फलाहार नही है अपितु पचेन्द्रिय जीव के गर्भ रस का आहार है।
(२) यह वृक्ष पर नहीं पकता है अपितु मुर्गी के गर्भ मे परिपक्व होता है।
(३) यह मुर्गे और मुर्गी के सयोग से पैदा होने वाला जीव है, इसका स्वरूप अपूर्ण गर्भ का है—प्रारम्भ का गर्भ रस रूप (Liquid) होता है।
(४) इसमे पूर्ण जीवन की सम्पूर्ण सम्भावनाएं है। इसमें पत्थर नहीं मुर्गी का बच्चा निकलता है। मुर्गी से मुर्गी का जन्म होता है।
(५) एक माह का गर्भ भी जीव है अतः अंडे में स्थित जीवन रस भी तिर्यंच पचेन्द्रिय जीव है।

अतः अडे के भक्षण में पचेन्द्रिय जीव की हिंसा होती है।

डाक्टर जे ग्मन विलकी म ने How Healthy are Eggs नामक पुस्तक के पृष्ठ ६ पर लिखा है —

The Egg is the unborn chick Egg eating is Prenatal poultry robbery or chicken foetuscide Egg eating involves cruelty and robbery यहां मुर्गी का अव्यक्त बच्चा है। यहां खाना अर्थात् एक प्रकार के

गर्भ का नाश करना है। अत यह मुर्गी के बच्चे की हत्या के समान है।

अंडा सजीव है। उसके नाश से क्रुरता के संस्कार पनपते है। श्रीलंका के डाक्टर डबल्यु जे. जयसुरैया How healthy are Eggs पुस्तक के पृष्ठ ५ पर लिखते हैं –

Natural law cannot be changed from time to time A good act bears good fruit & evil act bears bad fruit. To that order the destruction of elif bring an eril effect on the doer, Hence Do not eat meat and eggs which cause destruction of life

प्रकृति का नियम अटल है। जैसा बोओगे वैसा काटोगे। जीवो को प्राणघात का कष्ट देकर सुखी हो सकना नितात असभव है। प्राण घात के हिंसक कृत्य के कारण भयकर (कर्मदण्ड की) सजा टल नही सकती, अतः अण्डे अथवा मांस का भक्षण मत करो। इसमे पचेन्द्रिय जीव का बलिदान लेना पडता है, जो इस लोक में आरोग्य के लिए हानिकर है और परलोक मे नरक गति का दर्शन कराता है।

जर्मनी के प्रोफेसर एग्नर वर्ग भोजन के सशोधन मे बताते हैं कि कुछ खाद्य पदार्थ कफ या बलगम पैदा करते हैं। अण्डा ५१ ८३%कफ उत्पन्न करता है। जितने भी खाद्य पदार्थ है उनमे सबसे अधिक बलगम पैदा करने वाला अण्डा है। इससे शीत, ताप, खासी; दमा; परेमी, गनोरिया, ल्युकोरिया, फोडा फु सी इत्यादि रोग जन्म लेते हैं। कफ की दृष्टि से अण्डा अत्यन्त भयकर है।

बाल्यावस्था में –अण्डे जैसा महान राजसिक भोजन प्रदान करने से जठर की पाचन शक्ति का सम्पूर्ण विनाश हो जाता है। बालक रोग ग्रस्त रहते है। शारीरिक विकास अवरूद्ध हो जाता है। तीव्र स्मरण शक्ति का भी नाश होता है और बालक पढने लिखने मे मन नही लगा पाते है। नेत्रो का तेज बढ़ाने के लिए अण्डो का समर्थन किया जाता है। जबकि वास्तविकता यह है कि अण्डो का सेवन करने वाले ५-६ वर्ष के बालक को ६-७ वर्ष की कोमल अवस्था में ही चश्मे लगाने पडते है। ऐसे अनेक प्रमाण हैं। जो बच्चे अण्डा नही खाते उनकी अपेक्षा अण्डा खाने वालो मे पाचन शक्ति का सम्पूर्ण अभाव अण्डो के

केलीफोर्निया के वैज्ञानिक डॉ कैथरिन निम्मो तथा डॉ जे अमेनजा विविध प्रयोगो और सशोधनो के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि अण्डों में कोलेस्टोल नामक जहर होता है, जो रक्त नलियो मे छिद्र व घाव कर देता है। जिसके कारण नलियो पर गदगी जमा होने लगती है और उसका मार्ग सकरा हो जाता है, तथा सवेदनीयता घट जाने से वृद्धत्व की अनुभूति होती है। इस प्रकार अण्डो का भक्षण करने वाला व्यक्ति बहुत जल्दी ही बूढा हो जाता है अर्थात उसकी आयु घट जाती है। यह विवरण अमेरीका के फ्लोरिडा विश्वविद्यालय ने सन् १९६७ की स्वास्थ्य बुलेटिन मे प्रकाशित किया है।

इग्लैड के डॉ रावर्ट ग्रास, प्रो ओकाडा डेविडसन, इरविग आदि वैज्ञानिको ने भी प्रयोग और शोध की है, और फिर स्वीकार किया है कि अण्डो का भोजन करने वाले इनके हानि कारक प्रभावो के कारण पेचिस तथा मदाग्नि रोगो से पीडित बनते हैं, जिससे आगे जाकर आमाशय की क्षति तथा अतडियो मे सडन उत्पन्न होती है।

डाक्टर ई वी एम सी.(अमेरीका) तथा डा० इन्हा (इग्लैड) ने अपनी विश्व-विख्यात स्वास्थ्य पुस्तको पोपण का नवीनतम ज्ञान' तथा 'रोगियो की प्रकृति' मे स्पष्टत माना है कि अण्डा मानव के लिए विष है। अण्डे मे कैलसियम तथा कार्वोहाइड्रेट कम होता है, अत. अण्डा पेट मे सड़ता है और रोग उत्पन्न करता है। इग्लैड के डाक्टर आर. जे विलियम ने कहा कि अंडे का भक्षण करने वाले लोग प्रारम्भ मे अपने को अधिक स्वस्थ अनुभव और करते है, दूसरो को भी ऐसी प्रतीत होती है। किन्तु वाद मे कितने ही रोगो से पीडित होना पडता है, जिनमे रक्तचाप हार्ट अटेक, लकवा और एगजिमा जैसे भयकर रोग भी हैं।

मनुष्य का भोजन वनस्पत्ती, फल फूल तथा दूध ही है। यह भोजन दीर्घ जीवी होने का एक मात्र राजमार्ग है। प्रबुद्ध वर्ग के विज्ञानवेत्ता और विचारक धीरे-धीरे मासाहार से होने वाली शारीरिक हानि को समझने लग गए हैं। मांसाहार से बौद्धिक और भावात्मक हानि इतनी अधिक होती है कि उसकी तुलना मे शरीर को यदि कुछ लाभ भी होता हो तो वह त्याज्य है। शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक हानि उठा कर जिह्वा के स्वाद के लिए यदि मासाहार और अण्डे का सेवन जारी रखा जाए तो इससे वढकर दूसरी मूर्खता कौन

सी होगी ?

अण्डा रोगोत्पादक है, शक्तिप्रद नहीं

१ डी ०ी टी का विष – १८ महीने की शोध के परिणाम स्वरूप ३०% अण्डो मे डा डी टी होने के प्रमाण मिले हैं। —कृषि विभाग फ्लोरिडा–अमेरीका हेल्थ बुलेटिन अक्टूबर १९६७।

२ हृदय रोग—एक अण्डे म अनुमानत ४ ग्रेन कोलेस्टरोल की मात्रा होती है। इसके इतने अधिक परिमाण क परिणाम स्वरूप हृदयरोग, रक्तचाप, गुर्दे क रोग और पथरी आदि हो जाते हैं।

—डा० रोबट ग्रास तथा प्रो० इरविंग डेविडसन

३ पेट की सडन—अण्डा म कार्बोहाइड्रेट का सर्वथा अभाव है। कैल्सियम भी बहुत कम होता है। अत पेट म सडन और विकृति उत्पन्न होती है।

डा० ई वी मेककालम—न्यूयार कालेज आफ न्युस्टेशन।

४ टी बी सग्रहणी—मुर्गियो मे अनेक रोग होते हैं। अण्डे टी बी सग्रहणी आदि रोगों को विशेषत अपने साथ ले आत हैं और खाने वाले रोग का पात्र बन जात हैं।— डा० रोबट ग्रास

५ एग्जिमा और लक्वा—अण्ड के श्वेत भाग म एवीडिन नामक भयानक तत्व विद्यमान है जो एग्जिमा खुजली दाद कैंसर विविध चम रोग उत्पन्न करता है। जिन जानवरो को अण्डे के श्वत अश का भक्षण कराया गया है वे लक्वा के रोगी बने और उनकी त्वचा फूल गई है।

– डा० आर जे विलियम्स और रोबट ग्रास।

६ विषाक्त रस—अण्डे की भीतरी जर्दी स्वास्थ्य क लिए अत्यत हानिप्रद तत्व है। एक अण्डे का जर्दी मे कानस्टाल नाम का विष अधिक मात्रा में होता है यह सिद्ध हो चुका है यह विष एक प्रकार का चिकना (अल्कोहल) मादक पदाथ है जो हृदय म सचित हो जाता है और वहा स रक्त वाहिनी मुख्य नसों में प्रवाहित होत हुए रक्त सचार को अवरुद्ध कर देता है। इसस हृदय रोग, उच्च रक्त चाप मानसिक रोग गुर्दे क रोग पित्ताशय म पथरी आदि रोग उत्पन्न होते हैं। आज चारो ओर अण्डों का प्रचलन व्यथ ही बढ़ रहा है। अण्ड स हृदय के स्पन्दन के रुक जाने का गभीर भय दिखाई देता है।

—डा० जे एमनवितज, कयागहा निम्मो

७. अण्डे मे नाइट्रोजन, फास्फोरिक एसिड और चर्वी होती है। उससे शरीर मे तेजावीपन बढता है जो अनेक रोगो का सृजक है।—डा० गोविंदराज

८ अण्डा बहुत मलीन पदार्थ (नरमादा के भोगरस) मे उत्पन्न होता है। वह अशुद्ध रस से भरा होता है। जिसका स्पर्श करना भी मनुष्य को रुचिकर नही क्या इससे अधिक आरोग्य विनाशक कोई दूसरा पदार्थ सभव है? इसका स्वाद भी ग्रहण करने योग्य नही।

How Healthy Eggs ? Page 8—डा० कामता प्रसाद अलीगज (एटा)

९. कैलसियम की कमी और कार्वोहाइड्रेट के सर्वथा अभाव होने के कारण यह आतडियो मे जाकर सडन पैदा करता है। Newer knowledge of Nut -rition -p 171 and Haw healthy are Eggs -p.6.

१०. अण्डा मनुष्य की आतडियो मे विद्यमान 'कामन व कोलाइ' जाति के कीटाणुओ को विपाक्त बनाता है। उससे अनेक भयकर रोग जन्म लेते हैं। —The Natuie of Diseasesval II -p 194. Dr. J. E R. mekda nild F R. G. S England

११ अण्डा मनुष्य के पाचन तत्र के प्रतिकूल द्रव्य है। पाचन तत्र के विकृत हो जाने से मानव का जीवन सकट मे पड़ जाता है।—प्रो० ओकेडा (इग्लैंड)

जैन दर्शन की असाधारण विशेषता

जैन दर्शन से जगत मे विद्यमान भक्ष्याभक्ष्य पदार्थो के विवेक तथा सूक्ष्मतम ज्ञान की उपलब्धि होती हैं। सर्वज्ञ भगवतो ने जैन दर्शन का प्रकाश प्रदान किया है। जो अपने केवल ज्ञान से समस्त विश्व के सम्पूर्ण द्रव्यो के गुणपर्यायो को त्रिकाल सहित जानते हैं, जगत् के सब प्राणियो को दु.ख मुक्त करने शुद्ध धर्म का उपदेश देते हैं। उनका प्रवचन कैसा है? १. यह निर्ग्रंथ प्रवचन परम सत्य रुप है। २. सर्वोच्च है। ३. इसके सामने और कोई नही है। ४ हेय-ज्ञेय उपादेय स्वरुप से सम्पूर्ण है। ५ न्याय सगत है। ६. अत्यन्त शुद्ध है। ७ मिथ्यात्व आदि का शल्य काटा दूर करने वाला है। ८. सिद्धि-मोक्ष का मार्ग है। ९. लोभ हीनता का दर्शक है। १०. ससार को पार करने

का जहाज है । ११ कर्म का सर्वथा अंत करने वाला निर्वाण मार्ग है । १२ यथार्थ मार्ग है । १३ सन्देह रहित निश्चित मार्ग है । १४ आराधक के सब दुखों का नाश करने वाला है ।

॥ श्री सर्वज्ञ भगवान जिनेश्वर देव द्वारा प्ररूपित ऐसे उत्तम प्रवचन स्वरूप सुधर्म का पालन करने वाले प्राणी सिद्ध होते हैं सब ज्ञानी बनते हैं, कर्म बंधन से मुक्त हो जाते हैं पूर्णत शान्त स्वरूप को प्राप्त करते हैं सब कर्मों व दुखो का क्षय करते हैं। ऐसे जिन प्रवचन के धर्म मार्ग पर मैं श्रद्धा रखता हूँ, ऐसे लोकोत्तर श्रेष्ठ धर्म पर विश्वास करता हू तथा इसमें पूर्ण रुचि रखता हू ॥

ऐसे उत्तम मार्ग पर विश्वास रखने वाले प्राणी भक्ष्य अभक्ष्य पेय-अपेय, कर्त्तव्य अकर्त्तव्य से गुण दोष को लाभालाभ को जान कर सन्मार्ग पर चलते हुए अपने को पूर्ण सुखी बनाते हैं । इसके विपरीत अज्ञानी आत्मा अभक्ष्य अपेय और अकर्त्तव्य का सेवन करते हुए अपनी आत्मा को अनन्त काल तक दुखो में डालते हैं नरक व निगोद में दीर्घकाल तक पड़े रहते हैं । अत सज्जनो को विवेक ज्ञान प्राप्त करके जीवन को सुन्दर बनाने के लिए सभी प्रकार के अभक्ष्य और अपेय को छोड देना चाहिए ।

अभक्ष्य अर्थात अनन्त जीवो की हिंसा वाला, त्रस जीवो की हिंसा वाला अयोग्य आहार शरीर मन व आत्मा का अहित करने वाला भोजन, शरीर की स्थिरता के लिए अनुपयोगी भोजन दुष्ट वृत्तियो का जनक भोजन लोक पर लोक को बिगाडने वाला भोजन ।

श्री सर्वज्ञ भगवान ने २२ प्रकार के अभक्ष्यो के निषेध का आदेश दिया है । वस्तुत युक्ति युक्त है । जिन दोषो के कारण इन पदार्थों को अभक्ष्य कहा गया है वे निम्नानुसार है—

१ कन्दमूलादि बहुत से पदार्थो मे अनन्त जीवों का नाश होता है। मांस मदिरादि पदार्थों में द्वीन्द्रिय से लेकर पचेन्द्रिय तक के असख्य त्रस जीवो का नाश होता है । इस प्रकार यह भोजन महा हिंसा वाला होता है इसलिए ज्ञानी पुरुषो ने इसे अभक्ष्य माना है ।

२ अभक्ष्य पदार्थो के खान पान से आत्मा का स्वभाव कठोर और निष्ठुर बन जाता है ।

३ आत्मा के हित पर आघात होता है ।
४. आत्मा तामसी बनती है ।
५. हिंसक वृत्ति भडकती है ।
६. अनन्त जीवो को पीड़ा देने से अशाता वेदनीयादि अशुभ कर्मो का बंधन होता है ।
७. धर्म विरुद्ध भोजन है ।
८ जीवन स्थिरता हेतु अनावश्यक है ।
९. शरीर, मन, आत्मा के स्वास्थ्य की हानि करता है ।
१० जीवन मे जडता लाता है–धर्म मे रूचि उत्पन्न नही करता है ।
११ दुर्गति की आयु के बंध का निमित्त है ।
१२ आत्मा के अध्यवसाय को दूषित करता है ।
१३. काम व क्रोध की वृद्धि करता हैं ।
१४. रसवृद्ध के कारण भयकर रोगो को उत्पन्न करता है ।
१५. अकाल असमाधि मय मृत्यु होती है ।
अनन्त ज्ञानी के वचन पर विश्वास समाप्त हो जाता है । इन समस्त हेतुओ को दृप्टि मे रखते हुए अभक्ष्यता को भली-भांति समझ कर अभक्ष्य पदार्थो का त्याग करना उचित है ।

अभक्ष्य पदार्थो मे किन जीवों का नाश होता है

१. गूलर के पाच फलो मे	वनस्पति के अनगिनत बीजों के जीव, द्वीन्द्रिय आदि त्रस जीव,
२ मधु, मदिरा मक्खन, बोल आचार, द्विदल, चलित रस, रात्रि भोजन मे	असंख्य द्वीन्द्रियादि तथा सम्मूर्च्छिम उडते जीव
३ मास रुपी विष मे	पचेन्द्रिय जीव, निगोद के असंख्य जीव कृमि आदि,
४. वर्फ, ओले मे	पानी के असंख्य जीव
५. मिट्टी मे	पृथ्वीकाय के असंख्य जीव
६. वहुवीज, वैगन मे	वनस्पति के जीव गुठली पर लगे संमूर्छिम जीव

७ अनन्तकाय — कदमूल के कण कण में अनन्त जीव

८ अज्ञात फल फूल — वनस्पति के पचेंद्रिय जीव तथा त्रस जीव।

त्याज्य २२ अभक्ष्य

१ ५ ६ ९ १० ११ १२

पचुंबार चउविगई हिम विस करगे

१३ १४ १५

असब्बमट्टाम राइभोयएगंचिय बहुबीअ

१६ १७ १८ १९

अणत सधाणा ॥१॥ घोलवडा वायगग

२० २१

अमुणिअ नामाइं पुप्फफलाइं तुच्छफल

२२

चलिअरस वज्जे वज्जाणि बावीसं ॥२॥

पांच गूलर फल १ बड के फल २ पीपल के फल ३ पिलखन के फल ४ उदुंबर फल ५ कठुम्बर फल। चार महाविगई–६ ९ मधु, मदिरा मांस मक्खन १० बर्फ ११ विष १२ ओले १३ सभी प्रकार की मिट्टी १४ रात्रि भोजन १५ बहुबीज १६ अनन्तकाय १७ घोल आचार १८ द्विदल १९ बैगन २० अज्ञात फल फूल २१ तुच्छफल २२ चलित रस

पाच गूलर फल

बड का वृक्ष | पीपल का वृक्ष | प्लक्ष का वृक्ष | उम्बर वृक्ष

ये पांचो वृक्षो के फल उंवर अथवा गूलर कहलाते है, इनमे राई के दानो से भी वारीक अनगिनत वीज होते है, ये जीवन यापन के लिए अनुपयोगी है रोगोत्पादक है, इनके भोजन से अनेकानेक जीवो की अनावश्यक रुप से हिंसा होती है। इनमें वहुत से छोटे जीव होते है, इसलिए इन्हे अभक्ष्य माना जाता है।

इन पांचो प्रकार के वृक्षो के फलो (टेटा) मे मच्छर के आकार के अनेक सूक्ष्म जीव होते हैं, वीजो की संख्या भी पुष्कल होती हैं। अतः इनके भक्षण से अनेक जीवो की–हिंसा होती है, इसलिए ये वर्ज्य है।

उदुम्वर वट प्लक्ष का कोदुम्वर शाखिनाम्।
पिप्पलस्य च नाश्नीयात्, फलं कृमिकुलाकुलम् ॥योगशास्त्र–३/४२

इन पांचो वृक्षो के फलो में कृमि वेकटीरिया आदि विविध सूक्ष्म त्रसजीवो से भरपूर होते है, इन्हे नही खाना चाहिए। लौकिक शास्त्र मे कहा गया है, उदुंवर फल मे विद्यमान कोई जीव भोजन के निमित्त खाने वाले के मस्तिष्क मे प्रवेश कर जाए तो उसका मस्तिष्क फट जाता है, टुकड़े २ हो जाता है, टूट जाता है, चूर-चूर हो जाता हैं, वहुत गल जाता हैं, विदीर्ण हो जाता है। ऐसी स्थिति मे भी यह निश्चित नही कि वह जीव मस्तिष्क मे से निकले या न निकले किन्तु अकाल मरण की पीड़ा होती है।

दया के भावो से युक्त जीव दुष्काल में भी अन्न न मिलने पर ऐसे फल नही खाते। प्राणो का उत्सर्ग करना अच्छा है परन्तु अनेक त्रस जीवो का तथा बहुत वीजो से भरे फल का भक्षण करना उचित नही, वे इस वात पर दृढता पूर्वक विश्वास रखते हैं। यह थी प्राचीन भारत की दया धर्म की सस्कृति, जवकि आज ? विकृति दृष्टि गोचर होती है।

अनर्थकारी चार महाविगय

६ मधु ७ मदिरा ८ मास ६ मक्खन

(१) इन चारो वस्तुओं मे इनके वर्ण जसे वर्णवाले असख्य बेइन्द्रियादि त्रसजीव निरंतर उत्पन्न होते हैं। (२) ये चारो महाविगइ अति विकार जनक और कामवासनोत्पादक हैं। (३) इनसे मानसिक तथा शारीरिक दोष भी उत्पन्न होते है।
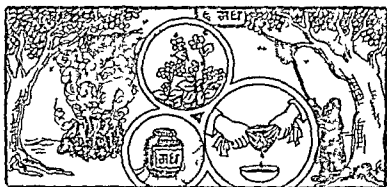
शहद की मक्खी के छत्त से मधु निकला जा रहा है।

मधु (शहद) कुत्ता भ्रमरी और मक्खी ये तीनो जन्तु अपनी लार से मधु बनाते हैं। इन तीनो प्रकार के मधु में उस रंग के असख्य त्रस जीव निरन्तर पैदा होते रहते हैं। इस हिंसा के कारण मधु अभक्ष्य माना गया है। वाघरी जाति के लोग वन से शहद का छत्ता लाते हैं। उस समय वे उस जगह धुआ कर के अत्यन्त त्रास उत्पन्न कर मधुमक्खियो का उनके निवास स्थान रूप छत्ते से बाहर निकालते हैं। उनमें उनके अनेक ऐसे बच्चे होते हैं जिनमें उड़ने की शक्ति नही होती। वे सब अपने प्रिय प्राणो से हाथ धो बैठते हैं। धुएं के कारण दम घुट जाने से उन बच्चों की मत्यु हो जाती है। जिन जन्तुओ ने अनथक परिश्रम करके मधु एकत्रित किया है, उनका शहद सहसा छीन लेने से उन्हें कितनी पीड़ा होती होगी? ऐसे हिंसक लोगो को हम मधु का उपयोग कर प्रोत्साहित करे, यह बात कितनी अधिक शोकजनक है?

लाखो छोटे-छोटे जन्तुओ के विनाश से उत्पन्न मधु अनेक जीवो की हिंसा युक्त होने से खाने के योग्य नही है। 'अनेकजन्तुसंघात-निघातन-समुद्भवम्। जुगुप्सनीय लालावत्, क स्वादयति माक्षिकम् ।। योगशास्त्र ३/२-.

अनेक जाति के समूहवद्ध जीवो के नाश से जनित घृणास्पद तथा मक्खियो के मुख की लार और थूक से वना हुआ शहद कौन सुज्ञ पुरुष खाएगा ? अर्थात् कोई नही। मक्खिया एक-एक फूल से रस पीकर दूसरी जगह उसका वमन करती हैं। इस प्रकार का उच्छिष्ट (जूठा) शहद धार्मिक व्यक्ति नही खाते। शहद के मीठे रस के कारण अनेक चींटिया तथा उडने वाले जीव चिपक कर मर जाते है।

छत्ते को निचोडते समय मर जाने वाली मक्खियो, उनके वच्चो तथा अण्डो के शरीर की अशुचि का रस शहद मे मिल जाता है, अत मधु अपवित्र पदार्थ है। अन्य शास्त्रो मे भी कहा गया है. कि सात ग्रामो को अग्नि से जलाने जितना पाप शहद की एक वू द के भक्षण से होता है। अनेक व्यक्ति मधु का त्याग करते हैं, परन्तु औषधि के रूप में उसे खाते हैं। इस प्रकार खाया हुआ शहद भी हिंसा का ही कारण है। कर्मवध मे नरक का कारण वन जाता है।

आश्चर्य है कि कुछ अज्ञानी जीव यह कहते है, कि शहद मे वहुत मिठास है अत. उसे खाना चाहिए। किन्तु जिसके आस्वादन से चिर काल तक नरक की वेदना का भोग करना पडे उसे मीठा कैसे कहे ? उसकी क्षणिक मिठास के लोभ में न पडकर उससे जनित विकार पूर्ण भयंकर अशुभ परिणामो पर विचार करके शहद का त्याग कर देना चाहिए।

मधु का त्याग करके औषधि के अनुपात मे उसके स्थान पर पक्की चाशनी मुरब्बे के रस, घी शक्कर से दवाई ली जा सकती है और अभक्ष्य मधु के दोष से वचकर निर्दोष अनुपान से कार्य किया जा सकता है। अत. मधु का त्याग दुष्कर नही है।

७ अभक्ष्य मदिरा

मदिरा अर्थात मद्य, सुरा कादम्बरी, विस्की दारू, शराब, लट्ठा, द्राक्षासव, वान्न बीअर है। उनम भी उसी प्रकार क सूक्ष्म रसज जीव निरन्तर उत्पन्न होते हैं मरत है। उसके सेवन से अन्य अनेक हानिया भी होती हैं। अत शराब की गणना अभक्ष्य मे होती है। मदिरा का पूर्ण त्याग करने वालों को विलायती दवाई का भी त्याग करना चाहिए। मादक द्रव्यों स मिश्रित औषधिया तत्काल लाभ करती है, परन्तु उनकी शक्ति कम होते ही अधिक निबलता आ जाती है। महुए के फल, अंगूर, गुड, आटा आदि को खूब सडा कर मदिरा तयार होती है उस बनाते समय असख्य रसज त्रस जीवों की उत्पत्ति होती है। इनको उबालते समय महा हिंसा होती है। दुगन्ध के साथ भी नए त्रस जीव उत्पन्न होता है।

मदिरा विक्रना तथा मदिरा पिये हुए व्यक्ति की दुदशा

श्री हेमचन्द्राचाय ने योगशास्त्र म मदिरापान की हानियों का वणन किया है —

१ जैसे विद्वान व्यक्ति की पत्नी दुर्भाग्यवश दूर चली जाती है उसी प्रकार मदिरापान करने वाले की बुद्धि भी दूर चली जाती है।

२ मदिरा पान स पराधीन चित्त वाले पापी मनुष्य अपनी माता के साथ भी पत्नी जैसा व्यवहार करने लगते हैं और पत्नी के साथ माता जैसा।

३. मदिरा से चचल चित्त वाले व्यक्ति स्व-पर की पहिचान मे असमर्थ हो जाते है। नौकर अपने को मालिक समझने लगता है और मालिक जैसा व्यवहार करने लगता है।

४. मृतको के समान मैदान मे पडे हुए औ खुले मुह वाले शरावी मनुष्य के मुख मे छिद्र की आशंका से कुत्ते पेशाव कर देते हैं।

५ शरावी नशे मे चूर होकर वाजार मे भी नग्न सोते हैं और अपनी गूढ़ रहस्यपूर्ण वाते प्रगट कर देते हैं।

६. जैसे काजल गिर जाने से सुन्दर चित्रो की रमणीयता नष्ट हो जाती है, वैसे ही मद्यपान से कांति, कीर्ति, वुद्धि और लक्ष्मी का नाश हो जाता है।

७. मद्य पान करके वाले ऐसे नाचते है, जैसे उन्हे किसी भूत ने पीड़ित कर रखा हो। वे शोकाकुल की भांति रोते है। धरती पर इस प्रकार लोटते है जैसे दाहज्वर से ग्रसित हो।

८ मद्यपान शरीर को शिथिल, इन्द्रियो को निर्वल करता है और मूर्छा लाता है।

९. जैसे अग्नि के कण से घास का ढेर नष्ट हो जाता है वैसे ही मदिरा पान से विवेक, मयम, ज्ञान, सत्य, शौर्य, दया और क्षमा का हनन हो जाता है।

१०. मद्य अनेक दोषो और विपत्तियो का कारण है जैसे रोगातुर मनुष्य अपथ्य का त्याग कर देता है, उसी प्रकार आत्महित चितक को मद्य का त्याग करना चाहिए।

शरावी की आय का वडा भाग शराव में ही खर्च हो जाता है। फलत: कुटुम्व के भरण पोपण के लिए वह उचित व्यय नही कर सकता। न ही वह अपनी सतान को समुचित शिक्षा दिला सकता है। यही नही रुपये की तगी के कारण अपने तथा अपनी पत्नी के आभूपण आदि भी वेच देता है और, पठानो' दलालो या सूदखोरो से पैसे उधार लेकर हमेशा के लिए ऋणी वन जाता है। चितातुर वनकर दुखं वन जाता है।

यहा यह स्पष्टीकरण भी उचित होगा कि स्पिरिट अल्कोहल, टिक्चर, आसव ताडी और नीरा आदि सव मे एक या दूसरे प्रकार से मदिरा के उन्मादक तत्त्व हाने से वे भी मदिरा के सदृश अभक्ष्य है।

१ ससार के किसी भी धम ने शराब को इष्ट नहीं माना । इतना ही नही राज्यों ने भी इसकी भयानकता को देखकर इसे राज्य मे निष्कासित करना अभीष्ट माना हैं । मुख्य बात यह है कि इहलोक और परलोक के लिए अहित कराअभक्ष्य पदार्थो के व्यसन से मानव को दूर रहना चाहिए । शुद्ध सात्विक पदार्थों से जीवन यात्रा करना हितकर है ।

सुभाषित रत्न सन्दोह म उल्लेख है – 'प्राणियो का जितना अहित विष शत्रु सप और राजा कर सकते हैं तथा जितना दु ख द सकते हैं, उससे कहीं बढ़कर अहित और दु ख गुणीजन द्वारा निंदित मदिरा से होता है ।

कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य जी के उपदेश से परमार्हत महाराज कुमारपाल ने साता दुव्यसनों को अपने राज्य से बहिष्कृत कर दिया था । मद्य निषेध भी उनम समाविष्ट था । इसस प्रजा सुखी, स्वस्थ और प्रसन्न थी । जबकि आज जहाँ-जहाँ इसकी छूट है वहाँ वहाँ अपराधो की सख्या, अकस्मात मृत्यु, बलात्कार आदि बढते जाते है ।

मदिरा का त्याग क्यो ?

१ मदिरा बनाते समय असख्य त्रसजीवो का नाश होता है ।
२ पीने के बाद पीने वाले का अपना भी होश नहीं रहता ।
३ चतुर मनुष्य भी रहस्य की बात उगल देता है ।
४ शरीर की कांति तथा सुन्दरता की हानि होती है ।
५ बुद्धि विकृत होती है ।
६ देह म दाह उत्पन्न होता है ।
७ मस्तिष्क पर नियत्रण नहीं रहता ।
८ मनुष्य अनाचारी बन जाता है ।

मदिरा एक प्रवाही पेय है जो महा भयकर दोषयुक्त है । कारण कि यह नशा युक्त है । पीने वाले इसे पाचक समझते हैं । वस्तुत यह शरीर पोषक नहीं, शोषक है । यह शरीर के लिए बाधक और आत्मा के लिए घातक प्रवाही है, अत इससे दूर रहना चाहिए ।

दारू–शराब–शरीर का शैतान

१ शरद पूर्णिमा मानकर रात्रि का नौका विहार की जगह हलसा विहार हो गया ।

२. अर्धमूर्छित अथवा मूर्छित अवस्था हो जाती है। पीने वाला सुशोभित घर का अतिथि न वनकर गदे नाले का अतिथि वन जाना है। फुटपाथ पर शय्या भूतल पर टकराता है।

३. अग अग पर विपरीत प्रभाव पडता हैं। शरीर प्राय. सक्रिय नही रहता। शिथिल हो जाता है।

४ मनुष्य मे मानवता का नाश होता है, पशुता के दर्शन होते हैं।

५. महाव्याधियो और महा रोगो का बीजारोपण होता है।

६. मद्य एक उत्तेजक मादक पेय है।

मानव शरीर का मुख्य केन्द्र मन है। आत्मा स्वामी है जवकि मन मैनेजर आहार के साथ मन का विशेष संवध है। जीवन सिद्धि के सुन्दर पुष्प मे रंग भरने की आवश्यकता है। शुद्ध सात्विक वस्तु शुद्ध विचार लाएगी।

मन प्रधान भवन है। मनुष्यता की खोज का, परिणाम का मुख्य साधन है। मन को विकृत होने से रोकना चाहिए।

मदिरा पान से विविध हानियां

१ सामान्यत कोई भी व्यक्ति आनन्द की प्राप्ति के लिए अथवा चिन्ता कम करने के निमित्त शराव का आश्रय लेता है। एक बार आदत पड़ जाने पर उसके पीने से कदाचित् ही आनन्द मिलता है। चिन्ता भी उसी प्रकार स्थिर रहती है। किन्तु मद्यपान के विना वह रह नही सकता। प्रारंभ मे एक

को पेग म काम चल जाता है।

२ पहले वह जीवित रहने के उद्देश्य से मद्यपान करता है। कुछ समय बाद वह केवल पीने के लिए जीता है। एक के पश्चात एक गिलास खाली होते जाते है। अब उस पीने में अणुमात्र आनन्द भी नहीं आता तो भी आदत के वश होकर वह पीता ही है।

३ शुरू में मित्रों के साथ पीता है। अब गुप्त रूप से बोतल रखता है। अकेले पीने लगता है।

४ पीने के बाद उसके मन में पछतावा होता है। वह जानता है कि उसे शराब नहीं पीनी चाहिए तब भी वह पी रहा है इसका ज्ञान होने पर भी पीने की आदत छूटती नहीं मानव स्वयं आदत डालता है, फिर पड़ी हुई आदत मानव को वश में कर लेती है।

५ अब उसका मस्तिष्क ठीक प्रकार से काम नहीं कर सकता। फलत कोई प्रश्न उपस्थित हो अथवा कोई चर्चा हो तो शराबी के विचार किसी भी विषय पर स्पष्ट नहीं होते। उसके मन में जो भी विचार आता है, वह डालता है। थोड़े समय में ही उसकी मर्यादा का सबको पता चल जाता है।

मदिरा पान से विविध हानियाँ—सचित्र

६ पीने के बाद घर में ही पड़े रहना उसे पसंद नहीं आता। परिणामत कभी कभी पुलिस के साथ उसकी मुठभेड़ हो जाती है, पीकर ड्राइविंग करता हुआ पकड़ा जाता है। कई बार न्यायालय में भी हाजिरी देनी पड़ती है। अनेकों बार रास्ते में उधम करते हुए पकड़ लिया जाता है।

७ शरावी को अपने पर नियत्रण नही रहता। जाम पर जाम का क्रम चलने लगता है। मद्य न मिलने पर भिक्षा मागने मे भी वह लज्जित नही होता मद्य के लिए वह हमेशा छटपटाता रहता है।

८. उसका व्यवहार अनपढ व्यक्ति के समान विचित्र और क्रूर हो जाता है। स्वभाव भी मिनिट मिनिट वदलता रहता है। कई वार वह घर तथा वाहर के व्यक्तियो पर क्रुद्ध होता है कुछ समय तो वाद ही उसकी आखो मे आसू छलकने लगते हैं। उसके पश्चात एक दो मिनिट मे ही वह खिल खिला-कर हसने लगता है. फिर लज्जित हो जाता है। उसे लेश मात्र भी यह विचार नही आता कि उसके कुटुम्वीजनो की क्या दुर्दशा है।

९ उसमें यदि कुछ सस्कार होते है, शिक्षा होती है तो वे दव जाते हैं। वह पहले जैसा गृहस्थ नही रहता। पीने वाले की ऐसी दशा हो जाती है जैसे कि किसी अच्छी पुस्तक का सस्ता संस्करण प्रकाशित हुआ हो। वह निर्वल और चिडचिडा वन जाता है। उसके वचनो पर विश्वास नही किया जा सकता सामाजिक मूल्य उसका स्पर्श नही करते। अनेक वार वह शराव न पीने की प्रतिज्ञा करता है वचन देता है परन्तु एक घन्टे मे ही पूर्ववत् व्यसनी वन जाता है।

१० यदि कोई उसकी सार सभाल करे, उसका ध्यान रखे तो यह वात उसे अच्छी नही लगती। फलत. वह पारिवारिक जनो और मित्रो से दूर रहना पसंद करता है। जी-हजूरियो और खुशामद करने वालो के ससवास मे उसे अधिक रुचि हो जाती है।

शरावी व्यक्ति की निकृष्ट वुद्धि का-चित्रण

११ अधिक पी जाने के कारण वह दिन के समय भी एकांत में पड़ा रहता है। काम पर जाना उसे अच्छा प्रतीत नहीं होता। यदि काम पर चला भी जाए तो उस पर अपना ध्यान केंद्रित नहीं कर सकता। अतः नौकरी से छुट्टी मिल जाती है या उसके व्यवसाय में बाधा पड़ जाती है। और वह आर्थिक कठिनाईयों में फस जाता है। पीने के लिए पैसे उधार लेना शुरू कर देता है। यह बात चारों ओर फैल जाती है। उसे कोई एक पैसा का भी उधार नहीं देता है। जिससे शराबी मुश्किल में पड़ जाता है।

१२ बिना कारण ही उसे कुछ व्यक्ति अनुकूल प्रतीत नहीं होते। उसे यह आग्रह रहता है कि अमुक व्यक्ति या मित्र घर में न आए। कई बार वह घर के बालकों का भी तिरस्कार करता है मार पीट करता है और कभी पत्नी से भी जूझ जाता है। सामने का व्यक्ति कोई प्रपंच या षड्यंत्र कर रहा है यह संदेह उसके मन में सतत रहता है।

१३ निरंतर खाली पेट मद्यपान करने से उसमें शोथ सूजन हो जाती है। लीवर भी ठीक प्रकार से काम नहीं करता फलतः भूख नहीं लगती। यही नहीं भोजन करने पर पेट में भार प्रतीत होने लगता है और पीड़ा के कारण खाने में कमी करनी पड़ती है। धीरे धीरे एक दो दिन भोजन भी छोड़ना पड़ता है।

१४ मद्यपान के फल स्वरूप नैतिक प्रवृत्तियों का ह्रास होने लगता है। पत्नी की अपेक्षा परस्त्री में रुचि बढ़ जाती है। यही नहीं अनेक बार किसी के भी यहाँ अपना अड्डा जमाकर बैठ जाता है।

१५ मस्तिष्क के रोगग्रस्त हो जाने के कारण शराबी को अच्छे बुरे का विवेक नहीं रहता। सत् असत् के विषय में अधिक विचार करने की शक्ति भी क्षीण हो जाता है।

१६ शराबी कार्यालय में जाकर बैठता जाता है किन्तु एक भी निर्णय नहीं कर सकता। फाइलें आती रहती हैं जाने की ओर की टोकरी (ट्रे) हमेशा के लिए खाली रहती है।

१७ अब उस प्रकाश में और अंधकार में अद्भुत दृश्य दिखाई देने लगते हैं। उसे सदैव यह लगन रहती है कि वह कोई धर्म या अवतार है कोई महा

डालने से मिथाईल उपर आ जाता है । यह मिथाइल लट्ठा में रहते मनुष्य को मौत के घाट उतार देते है ।

ईथाईल अल्कोहल अथवा स्पिरिट ये दो पदार्थ प्रत्येक शराब में मुख्य रूप से होते है। ईथाईल अल्कोहल औद्योगिक काम जैसे रंग पालिश वार्निश साबुन शम्पू, डाई रेयान ततु आदि में उपयोग होता है इसे मिथाइल मे परिवर्तन करके लट्ठा मे शराब मे उपयोग किया जाता है, जो मनुष्य के लिए प्राणलेवा सिद्ध किया जा चुका है ।

शराब मे त्यम होता है जो पीने वाले को कुछ देर में ही रामशरण पहुँचा देता है। गुजरात में बनने वाली लट्ठा प्रकार की शराब बहुत ही निकृष्ट कोटि के पदार्थों से बनती है। फ्रेंच पालिश को स्पिरीट के साथ मिलाकर इस मिश्रण में अनेक प्रकार के कीड़े व जीव जतु डाले जाते है, और अधिक तिक्तता लाने और लट्ठा जल्दी बनाने के लिए जग लगे चुक कीले जैसे अनुपयोगी पदार्थ भी मिलाए जाते है ।

शराब हेतु उपयोग में लाए गए सड़े हुए खाद्य पदार्थों मे असख्य जीव जंतु विद्यमान होते है जिन्हें मल मूत्र वाले कूड़े में फेंकना पड़ता है। महाराष्ट्र मे लट्ठा जैसी शराब को खोपड़ी कहते है। केरल में 'मूराशाई' नाम से प्रचलित शराब को बनाने हेतु अमोनियम सल्फेट टाच में प्रयुक्त समाप्त हो चुकी सेल, इमली, गटर का गंधाता पानी, कारखाना से निकलने वाला कचरा, जो नालो में बहता है उस पानी से उबालकर शराब बनाई जाती है ।

नशा बाज लोग ऐसी गन्दी वस्तु का अभक्ष्य पेय पीकर कमर, टी बी अंधापा पागलपन, आदि असाध्य दर्दो की पीड़ा पाते है इसमे ग्रस्त होकर मृत्यु की प्राप्ति करते है। अवधानिक रीति से भारत में ७५ करोड़ की शराब पी जाती है कैसी अज्ञान अवस्था है, रुपया का व्यय करके जीवन को जोखिम मे डाला जा रहा है और इसके बाद भी नशबाजों की तलप बुझती नहीं है ।

शराब के विविध प्रभावों पर वनानिको का दृष्टि —(१) शरीर शिथिल हो जाता है। (२) रक्त में अम्लता उत्पन्न होती है। (३) आख का पुतलियो के जीव मृत्यु पाने के कारण ददनाक अंधापा हो जाता।(४) सिर में दर्द होता है (५) निरन्तर उल्टी होती है (६) पेट में भयंकर वेदना होती है। (७) श्वास

लेने में तकलीफ होती है। (८) घबराहट होती है (९) नसो के तन जाने से मृत्यु हो जाती है।

गभीरता पूर्वक इस प्रत्यक्ष हानि पर विचार करके मदिरा का पूर्ण त्याग करना हितकर और सुखकर है। यह बात जयहिन्द के वैद्यक लेखक डा० एल जे. राठौर तथा डा० हेमावहिन राठौर ने कही है। (११-१०-१९७९)

शराब के कारण द्वारिका का नाश

जैन शास्त्रो के अनुसार श्रीकृष्ण के समय ४८ कोश के विस्तार मे विस्तीर्ण द्वारिका नगरी अतीव समृद्धिशाली थी। किन्तु द्वैपायन देव के प्रकोप से इसका विनाश हो गया इस प्रलय या विनाश की भविष्यवाणी २२ वे तीर्थ कर श्री नेमीनाथ ने पहले ही कर दी थी। इसका मूल कारण मदिरा पान बताया गया अत यादवों ने मदिरा को पर्वत की गुफाओ मे स्थापित कर दिया था।

परन्तु एक बार शाव आदि राजकुमार भ्रमणार्थ बाहर निकले। वे यौवन के उन्माद में वहाँ पहुँचे और मदिरा पान करके उन्मत्त हो एक तपस्वी द्वैपायन ऋषि का उपहास किसा। तपस्वी ने वहुत समझाया कि ऐसा न करो परन्तु मदिरा मे मदहोश कैसे समझे ? मदिरा पान दुष्ट मानव को उन्मत्त बनाकर विवेक को विस्मृत करवा देता है। शराब के नशे मे चूर व्यक्ति अनाचार का नग्न प्रदशन करते है।

जामबापु के दीवान का उत्कृष्ट चतुरता

ईस्ट इन्डिया कम्पनी के राज्य के समय एक यूरोपियन आफिसर (अधिकारी) ने एक भूतपूर्व राजा जामबापु जाड़ेजा की रात्रि के समय अत्यधिक शराब पीने की आदत देखी। उसने अवसर देखा। जामबापु को प्रलोभन दिया कि राज्य, कम्पनी सरकार को सौंप दिया जाय, योग्य अधिकारी नियुक्त कर कम्पनी तुम्हे राज्य सचालन में वहुत वडी सहायता देगी और राज्य को अधिक समृद्धि करेगी। मद्य ने नशे मे जाडेजा ने यह स्वीकार कर लिया तथा बयनामा पर हस्ताक्षर कर दिए। यूरोपियन बायनामा लेकर रात को ही प्रस्थान कर गया। प्रात.काल नशा उतरने पर उसे अपनी भयकर भूल का ध्यान आया और दीवान के साथ बात की।

दीवान ने कहा आपने यह क्या कर डाला ? इसमे तो समय व्यतीत होने

पर कम्पनी सरकार आपको अयोग्य घोषित कर पदच्युत कर देगी। अस्तु 'अब वयनामें को वृथा सिद्ध करने का एक मार्ग है। वयनामे की तारीख से चार दिन पहले की तारीख की अपने हस्ताक्षर से एक ऐसी अधिसूचना राज्य के कार्यालय में नोट कराओ कि रात के समय मुझे मद्यपान की आदत है। अतः रात के समय यदि मैंने किसी को कोई वचन दिया हो तो उसे रद्द समझा जाए।

ऐसा ही किया गया और बाद में जब कम्पनी सरकार दावा करने आई तो वह खारिज कर दिया गया। दीवान के चातुर्य से रक्षा हो गई यह बात अलग है। किन्तु मदिरा पान ने पहले कितना भयंकर घोटाला खड़ा कर दिया था। मदिरापान आत्म ज्ञान को विस्मृत करवाकर लौकिक विषय में भी जब इतना घातक अनर्थ करता है, तब परलोक के सम्बन्ध में कितना भयावह अनर्थ प्रस्तुत करेगा ?

ऋषि का शाप

शांब आदि राजकुमार मदिरामत्त थे समझाने पर भी न समझे। ऋषि का उपहास करते रहे। तब द्वपायन ऋषि ने क्रुद्ध हो शाप दिया, इस द्वारिका के लोग ऐसे उद्धत व्यक्तियों का पोषण करते हैं मैं सारी द्वारिका का नाश कर दूंगा।,

कुमार आकुल होकर भागे। उन्होंने श्रीकृष्ण से बात की। उन्होंने उस ऋषि की बहुत अनुनय विनय की, मनाने का प्रयास किया परन्तु ऋषि अडिग रहे। तब भगवान नेमिनाथ के पास जाकर पूछा गया कि अब रक्षा कैसे हो। प्रभु ने कहा, 'यह द्वपायन अनशन के साथ नियाणा करके मरणोपरान्त देवता होगा। यह द्वारिका का दाह करने आएगा परन्तु जब तक लोग आयंबिल आदि तप करते रहेंगे ब्रह्मचर्य पालन परमात्मभक्ति, जाप आदि का आचरण करेंगे तब तक यह देवता धर्म के तेज से चकित और स्तब्ध हो कर कुछ नहीं कर सकेगा '

धर्म का प्रभाव

द्वपायन देव बना और यहाँ लोग तप के साथ धर्म साधना में रत हो गए। बारह वर्ष तक देवता ने आकाश में चक्कर लगाए किन्तु लोगों के प्रबल धर्म

तेज से चकाचौध होकर कुछ भी न कर सका, तब लोगो ने समझा कि अब देवता स्वर्ग के सुखो मे लीन होकर भूल गया होगा। उन्होने तप, त्याग छोड दिया। तब देवता मे स्फूर्ति आ गई। उसने सारी द्वारिका को जला दिया। मदिरा के कारण पूर्व जन्म के वैर के संस्कारो से देवता ने कितना भयावह उत्पात मचाया। इससे शिक्षा ग्रहण कर आजीवन मदिरा को तिलाजलि देकर सुखी बनो ।

८. अभक्ष्य मांस

मुख्यत मांस के तीन प्रकार हैं—१ जलचर का मांस २ थलचर का मांस ३ खेचर का मांस। जलचर का अर्थ है मछली, मेंढ़क, कछुआ आदि जल में रहने वाले प्राणी। थलचर से तात्पर्य है हिरण, बकरा गाय, कटड़ा (भैंस का बच्चा) भेड़ा खरगोश आदि धरती पर चलने वाले प्राणी। खेचर अर्थात मुर्गा कबूतर, तीतर चिड़िया आदि आकाश में उड़ने वाले पक्षी। इन तीनों प्राणियों का मांस खाना पंचेन्द्रिय जीव की हत्या का महापाप है।

पंचेन्द्रिय प्राणियों का वध किए बिना मांस तैयार ही नहीं होता अपितु उसमें प्रतिपल सम्मूर्छिम जीव, अनन्त निगोद के जीव, सूक्ष्म कीट उत्पन्न होते हैं अतः मांस सर्वथा अभक्ष्य माना गया है।

मानव को मांसाहार का त्याग करके केवल वनस्पति का आहार क्यों करना चाहिए इस विषय में निम्नलिखित प्रमाण मनन करने योग्य हैं —

(१) अन्न शाक, फल रूप वनस्पति से शुद्ध पुष्टिकारक, स्वादिष्ट और उपयोगी भोजन मिल सकता है अतः महाहिंसा द्वारा प्राप्त होने वाले मांस के उपयोग की लेश मात्र भी आवश्यकता नहीं है। अनाज की उपज कम है अतः मांसाहार करना चाहिए, यह युक्ति मूर्खता पूर्ण है। प्राणियों का शिकार करने

मे अथवा मछलिया पकडने मे अनेक शक्तियो का व्यय किया जाता है इससे अनेक रोग होते है। उसके प्रतिकार के लिए दवाईयां बनानी पड़ती है, औषधालय खडे करने पडते है। मानव को निरोगी और सुखी रखने के लिए मांस मछली की अपेक्षा अन्न पर उन शक्तियो का व्यय हो तो सब को आवश्यकतानुसार अन्न मिल सकता है।

(२) मानव शरीर स्वभाव से ही मासाहार के योग्य नही। मास सरलता से पचता नही है। अभ्यास द्वारा मास को हजम करने की शिक्षा लेते हुए लाखो व्यक्ति केसर तथा अन्य अनेक रोगो का शिकार बन गए।

३. मास मे पल-पल अनेक त्रसजीव जन्म लेते है। उसे अग्नि पर पकाते समय तथा बाद मे भी त्रस जीव उत्पन्न होते रहते हैं। इस बात का प्रमाण यह है कि रखे हुए मृतक देह मे मोटे-मोटे कीड़े पड़ जाते हैं किन्तु वे कीड़े समय व्यतीत होने पर मोटे होते हैं। पहले वे सूक्ष्म होते है। शरीर से पृथक हुआ मास शरीर का मृत भाग है। अत· शरीर से अलग होते ही वह सडने लगता है तत्काल उसमें उसी वर्ण के बारीक-बारीक जन्तु उत्पन्न हो जाते हैं। इस प्रकार मास खाने से पचेन्द्रिय जीवो के साथ-साथ असंख्य त्रसजीवो की और अनन्त निगोद के जीवो की हिंसा होती है।

प्रत्येक प्राणी को अपने समान मानकर और उसकी हिंसा से बचते हुए मासादि प्राणी जन्य खान पान व औषधि आदि का किसी भी प्रकार उपयोग नही करना चाहिए।

कृत्रिम रीति से बनी चीजों से सावधान

कुछ धोखेबाज लोग घी में चर्बी का मिश्रण करते हैं। विशेष विदेशी बिस्कुट आदि में अभक्ष्य पदार्थ के मिश्रण की संभावना रहती है। यह खेद का विषय है कि आज अनेक व्यक्ति ऐसे पदार्थ खाते हैं। कुछ बिस्कुटो और चाकलेटो मे स्वाभाविक रूप से अडे के रस का मिश्रण होता है, ऐसा सुनने मे आया है। गो—मास से निर्मित चाकलेट भी आते हैं। हम पतासे आदि के स्थान पर प्राणियो के आकार की पीपरमेंट की गोलिया बच्चो मे बाटते है। यह बहुत बडी भूल है। भविष्य मे हमारी इस पीढ़ी को मासाहारी बनवाने की यह प्राथमिक योजना है। मछली आदि के आकार की पीपरमेट की गोलियो से

छोटी व बडी चाक्लेट बनाई जाती हैं। प्राय व मास चर्बी से भी बनती हैं। अत वर्तमान म प्रचलित इस मीठे विष से बहुत सावधान रहने की आवश्यकता है। स्कूलों में दिए जाने वाले नास्ते से बच्चों को बचना चाहिए।

मनुष्य के रक्त के एक हजार भाग मे फाइब्रान नामक तत्व तीन भाग स अधिक हो तो उपयुक्त नहीं। वनस्पति आहार से यह फाइब्रीन तत्व परिमाण के अनुसार नियत रहता है। मासाहार स खून मे इस की मात्रा बढ जाती है। फलत अनेक रोग ज म लेते हैं।

डाक्टर पाक नाम क एक यूरोपियन विद्वान ने प्राणिजन्य तथा वनस्पति जन्य आहार के विषय में सूचित किया है कि उत्तम मांस में उष्णता एवं उत्साह को उत्पन्न करने वाल तत्व ६% है जबकि गहूँ, चावल, फली म ४५% स ८०% तक होते है।

मासाहार से होने वाली विविध हानिया

१ मैथुन म माम मलिन, दुगन्ध युक्त और कपाने वाला है।

२ वह अधिक समय तक नही टिक सकता, सड जाता है।

३ उसक भक्षण स नीति बिगडती है और अपव्ययता तथा मद्यपान की आदत बनती है।

४ मनुष्य जिस प्रकार वनस्पति के भोजन द्वारा स्वस्थ स्थिति मे जी सकता है वसे अकेले मास भक्षण से जीवन भर शरीर का स्वस्थ नहीं रख सकता।

५ मासाहार म कसर, क्षय, गडमाल रक्त पित्त वात पित्त, और पथरी क रोग होते हैं, ऐसा आज क डाक्टरों का मत है।

६ हैजे क रोगी के लिए मास का पानी भी हानिकर है।

७ मास म नाइट्रोजन आवश्यकता स अधिक होने क कारण मनुष्य मोटा हो जाता है। अधिक उष्णता के उत्पन्न होने स तामसिक व क्रोधी बन जाता है।

८ मछली का मास खाने वालों में एक प्रकार का विशाल मस्तक वाला, रस्से के समान कृमि दृष्टि गोचर होता है। यूरोप के उत्तर रशिया, नार्वे, स्वीडन और आयरलैड में इस टपनोम कृमि से जनित व्याधि प्राय देखने म आता है। उससे मृत्यु शीघ्र हो जाती है।

जान लेवा बनता मत्स्याहार—संयुक्त राष्ट्र सघ की समिति क अनुसार तालाब और दरिया में प्रविष्ट होने वाले कचरे के प्रदूषण के कारण मछलिया

में पारे का परिणाम भय जनक रीति के बढ गया है। इसमे अल्फीला नामक पारा सीधा मस्तिष्क और केन्द्रीय मज्जा तत्र पर प्रभाव डालते है। जापान मे मिनामेटा अखात में से पकडी गयी मछलियो के भक्षण से सैकड़ो व्यक्तियो की मृत्यु हो गई।

अत्यधिक परिणाम मे डी. डी. टी. तालाबो मे डाला जा चुका हैं, और हर वर्ष १० करोड टन वृद्धि होती है। फिर तालाबो व समुद्रो मे स्टीमरो का धुआँ और सेल के बैक्टिरीयाँ मछली के पेट मे जाते हैं, जिससे कंसर को जन्म देने वाला हाइड्रोकार्बन मनुष्य के पेट मे प्रवेश करके कैसर का रोगी बनाता है और मनुष्य को मृत्यु के पेट में ढकेलता है।

आणविक कचरा (न्यूक्लीअर वेस्ट) से निर्मित रासायनिक कचरा इतना खतरनाक है कि इसके एक ग्रास का दस लाखवां भाग भी मनुष्य के प्राण का हरण करने के लिए पर्याप्त है।

कलकत्ते की हुगली नदी में ६ करोड गैलन मानव बस्ती का कचरा तथा ६ करोड़ ६० लाख गैलन उद्योगो का कचरा बगाल की खाड़ी मे गिरता है। इससे भी अधिक बम्बई की शिव व बसई खाडियो मे प्रदूषण कचरे के कारण वृद्धि गत होता है। मनुष्य और उद्योग की प्रदूषण वृति इतनी अधिक बढती जा रही है, कि उत्तर-दक्षिण ध्रुव के विस्तार तक जितने भी तालाव, नदी या सरोवर है उनमे कोई भी स्रोत ऐसा नही है कि जो प्रदूषण से मुक्त हो। दूषित द्रव्यो का परिमाण बढ़ने के साथ-साथ इनका जहरीला पन भी बढता जा रहा है।

इन सभी स्थानो में से पकडी जाने वाली मछलियो का आहार मनुष्य के लिए श्राप रुप है, ऐसा सशोधनकार कहते है, इसलिए सभी को मत्स्याहार का त्याग करना चाहिए-इसी में मानव जीवन का हित है।

९. सूअर का मास खाने से घुघराले धागे जैसे कृमि शरीर मे उत्पन्न होकर मनुष्य के मरण का कारण बनते है।

१०. गाय, बैल के कलेजे तथा आतडियो के उपर जो श्वेत दाने दिखाई देते हैं, वे एक प्रकार के कीडे हैं। ऐसा मास शरीर मे प्रवेश करके अनेक रोगो के जीव उत्पन्न करता है और खाने वाले को रोगी बनाता है।

मास से होने वाला अहित

१ मांस के लिए जाव हत्या का परामर्श देने वाले काटने वाले, मारने वाले, लेने वाले, देने वाले, पकाने वाले परोसने वाले और खाने वाले— इन सबको पचेन्द्रिय जीवों के वध का महापाप लगता है और वे दुर्गति में, नरक में जाते हैं।

२ शुक्र और रक्त से उत्पन्न विष्ठा के रस से वर्धित तथा रक्त से जमे हुए मलरूप मांस का कौन बुद्धिमान व्यक्ति भक्षण करेगा ?

३ मांस भक्षी लोग अमृत रस का त्याग कर तीव्र विष खाते हैं।

४ जो मनुष्य अपने शरीर में घास का एक तिनका भी चुभने पर वेदना का अनुभव करता है क्या वह निरपराध प्राणियों का तीक्ष्ण शस्त्रों से मारता हुआ कांपता नहीं ?

५ निर्दयी मनुष्य में धर्म नहीं होता तब मांस भक्षी में दया कहां होगी ?

६ पाप के भय के बिना मानव भव तक ऊंचे उठना दुष्कर है। जिसमें मांस सो अधःपतन करके नीचे दुर्गति में आ जाते हैं। पुन मनुष्य भव मिलने में युग बीत जाते हैं।

७ परलोक में, नरक निगोद के अनन्त दुःख के लिए इस लोक में केवल क्षणिक सुख देने वाली मांस भक्षण की प्रवृत्ति कौन विवेकशील व्यक्ति करेगा ?

८ प्राणी वध न करने वाला तथा दया धर्म का आचरण करने वाला जीव जन्म जन्मांतर में सुखी होता है। जबकि मांसाहारी जीव जन्मों तक दुःखी होता है।

९ मांस भक्षण के त्याग के अभाव में इन्द्रिय दमन, शान्ति धर्म और तप इत्यादि सब निष्फल हैं।

१० मांसाहार के महापाप से निराधार स्थिति प्रिय वियोग दुःख, दरिद्रता, दुर्भाग्य आदि पीड़ाएं पराधीनता वश सहनी पड़ती हैं।

मांसाहारी और शाकाहारी में अन्तर

मांसाहारी पशु के लक्षण	शाकाहारी मनुष्य के लक्षण
१. दूसरो को फाड डालने के लिए टेढे और वज्र समान तेज नख।	१. मनुष्य के नख वैसे नही है। वध-शाला मे शस्त्र से काम लेना पडता है।
२ जठराग्नि मे कच्चा मास पचाने का शक्ति है।	२. मनुष्य मे यह शक्ति नही है।
३. दिन मे सोते हैं, रात्रि मे भोजन ढुंढते है।	३. दिन में भोजन और रात को आराम करते है।
४. भोजन चबाना नही पडता।	४. चबाकर भोजन खाता है। (तभी पचता है और रोग नही होता।)
५. जीभ से चाट कर पानी पीते हैं।	५. घूट भरकर जल पीते है।
६. श्रम करने से पसीना नही आता।	६ श्रम करने मे पसीना आता है।
७. जब शेर आदि जानवरो को पसीनत आता है, तब उनको प्रकृति विकृी मानी जाती है।	७. मनुष्य को पसीना न आए तब ज्वरादि के कारण बीमार माना जाता है, पसीना आने पर स्वस्थता के योग्य।
८. हिंसक प्राणियो के दातो व दाढो मे दाता जैसी तेजी है मानव केवल मासाहार से जीवन निर्वाह नही कर सकता। उसे वनस्पति जन्य भोजन लेने की अनिवार्य आवश्यकता पडती है।	८. मनुष्य के दातो, दाढो मे ऐसी तीक्षणता नही होती। शाकाहारी को मास की कदापि आवश्यकता नही। वह शाकाहार से समस्त जीवन सुख पूर्वक व्यतीत कर सकता है।

मास का उपयोग किस लिए नहीं ?

(१) क्योंकि यह मनुष्य का वास्तविक भोजन नहीं, सृष्टि के विरुद्ध है। (२) आरोग्य तथा आयु मे बाधक, अनुचित, अपथ्यकर, अहितकर भोजन है। (३) मास का रूप नेत्रो को भी रुचिकर नहा लगता है। (४) इसस दुर्गन्ध आती है। (५) अपवित्र माना जाता है। (६) मास का भक्षण क्रूर कृत्य है। (७) प्राणी का वध करते समय उसका खून इतना उग्र उठता है कि इसका उग्र प्रभाव भक्षक पर पडता है। (८) मास खाना धर्म नही, अधर्म है। यथार्थ में जीवन दयावान होता है। दया के बिना जप, तप व्रत व्यर्थ हो जाते हैं। (९) मनुष्य का आधार वीर्य शक्ति पर है, मास पर नही। (१०) मास खाने से शक्ति बढ़ती नही। मास न खाने वाले, हाथी, ऊँट जिराफ, हिरण, घोडा बंदरादि प्राणी शक्तिशालियों में विशेष स्थान रखते हैं। (११) अन्न, फल, दूध आदि पदार्थों से शारीरिक स्वस्थता अति उत्तम रहती है। मांस स स्वास्थ्य का नाश होता है। (१२) जाज बर्नार्डशा ने एक भोज मे कहा था मेरा पेट कब्रस्तान नही ह। (१३) प्रकृति का नियम है कि बडे छोटो की रक्षा करें। (१४) मास इस लोक म कैंसर जैसे भयकर रोग का और परलोक में भयावह नरक का उपहार देता है।

मासाहार पर डाक्टरो के अभिमत

१ डाक्टर रोबर्ट बेल एम डी ने कैंसर स्वज एण्ड हाउ टू डिस्ट्रोय इट नामक अपनी पुस्तक मे लिखा है दो करोड और पचास लाख मनुष्य तथा केवल इग्लैंड और वेल्स मे तीस हजार मनुष्य कैंसर से मरे, मुख्य कारण मासाहार था। अत मैं इसका प्रबल निषेध करता हू।

२ डाक्टर बज चीन का यात्रा करने गए। उस समय उन्होंने चार शाकाहारी श्रमिक अपने को उठाने क लिए रख। बारी बारी स दो-दो व्यक्ति उन्ह उठात थ। तीन दिन पश्चात उन्ह मासाहार दिया गया तब व श्रमिक थक जात थ। इससे प्रत्यक्ष सिद्ध होता है कि मासाहार स श्रम क्षमता घट जाती है।

३ डा० सरवाल्टर स्काट फरग्युसन ने लिखा है कि ६५ वर्ष की आयु में अपना कक्षा में भाषण देते हुए उन्हें सकवा हो गया। उनकी स्वा सम्प्रदा के

लिए उनके मि त्र डाक्टर ने रसायन शास्त्री डा० ब्लेक को बुलाया। उन्होंने शाकाहार का परामर्श दिया। वे निरोग और बलशाली शरीर के साथ तीस वर्ष अधिक जीवित रहे।

४ डा० स्मिथ का कथन है कि ईरान के एक अप्रसिद्ध वन स्थान से अतीव सत्ताशाली और भव्य राज्य का निर्माण करने वाला बादशाह सैन्ल बाल्यकाल से ही बहुत ही सादा वनस्पति भोजन खाता था। उसके सैनिक रोटी, सागपात तेल से निर्वाह करते थे। तो भी थोडे समय मे ही हजारो मील की कूच करने मे समर्थ थे। उन्होने अनेक युद्धो मे विजय प्राप्त की। वे रूम की सेना से भी नही डरते थे।

५ डा० हेग का कथन है कि पाचन शक्ति की, हृदय और पित्त बढने की तथा सिर दर्द के साथ की अन्य पीडाएँ रक्त मे मासाहार से बडे हुए यूरिक एसिड के कारण होती है।

६ डा० हेम लिखता है कि मास खाने वालो और चाय पीने वालो मे घाव या चोट के कारण जो भय, अग अंग का टूटना तथा उनसे भी बढ़कर अन्य अनिष्ट परिणाम दृष्टि गोचर होते हैं। वे उनकी तुलना मे मास तथा चाय का परहेज रखने वालो मे बहुत कम दिखाई देते है। मासाहारी अधिक पीड़ा के शिकार बनते है। शारीरिक हानि के अतिरिक्त उपचार मे आर्थिक हानि भी होती है।

७. अमेरिका के हार्वर्ड मेडिकल स्कूल के डाक्टर.ए वाचमैन व डा० बी. एस. बर्नस्टीन लेंसेट १९६८ भाग एक तथा६५८ पृष्ट पर अपनी वैज्ञानिक शोध के परिणाम मे लिखते है कि मास भक्षण से हड्डिया कमजोर हो जाती है।

मासाहारियो का मूत्र (यूरिक एसिड) तेजाब जैसा होता है। अतः रक्त व तेजाब के क्षार की मात्रा सुरक्षित रखने के लिए अस्थियो से क्षार और तेजाबी नमक रक्त मे मिल जाता है। इसके विपरीत शाकाहारियो का मूत्र क्षार युक्त होता है उनकी हड्डियो का क्षार रक्त मे न मिलकर वही रहता है। वह उन्हे दृढ बनाता है। इस प्रकार जिन व्यक्तियो की हड्डिया निर्बल होती हैं, उन्हे विशेषत. फल फूल, शाक भाजी, प्रोटीन और दूध का आहार लेना चाहिए। मास का अल्पाश भी उनके जीवन के लिए हितकर नही।

८ रसायन शास्त्री डा० विसगाल्ट अपनी पुस्तक मे लिखते है कि मास के प्रत्येक १०० भाग म ३६ भाग पौष्टिक अश और ६४ भाग पानी होता हैं। अन्न म ८०% स ९०% पौष्टिक तत्व हाते हैं। इसके अतिरिक्त विद्युत अग्नि का तत्व भी अनाज में है। उसम अस्थियों म वद्धि और प्रबलता होती है यह तत्व जिस अश मे वनस्पति में ह, उस अश म मास म नही।

९ डा० ज्याज विलसन का मत है कि मास में उष्णता उत्साहजनक अश ८ से १० तक हैं गहू चावल चने आदि में ६० से ८० अश तक है।

१० एडम स्मिथ की पुस्तक Wealth of Nations के पष्ठ ३८० पर लिखा है कि अनाज, घी दूध व अन्य वनस्पति के भोजन से, बिना मास भक्षण किए सरलता स यथष्ट स्वस्थता, पौष्टिकता और शारीरिक, मानसिक शक्ति प्राप्त का जा सकती है।

११ डबल्यु गिन्सन बॉड F R C S ने The Times पत्र में लिखा है कि मैं ३० वष से मदिरा मास किंवा मछली का उपयोग न करते हुए केवल वनस्पति व फलाहार पर निर्वाह करके पूर अनुभव क साथ लिख रहा हू कि चरबी वाले एक हजार मनुष्यों में स एक व्यक्ति भी फेफडों के विषय म मेरी तुलना में नही ठहर सकता। शरीर के अवयवों क बल म कुछ बराबरी कर सकता है। इस अनुभव क आधार पर साहसपूवक कहता हू कि वनस्पति आहार द्वारा पोषण प्राप्त करने वाले बालक सुखी और सबल रहने चाहिए।

१२ मिस्टर फ्लेमिंग का कथन है कि मांस काटने स पूव प्राणी में होने वाले रोगा की परीक्षा उसकी जीवित अवस्था में नही हाती। फलत उसके रोगा का उत्तराधिकार मांसाहारी को मिल जाता है और उसका जीवन सकट में पड जाता है।

१३ डा० मेमेरा ने अनुभव स कहा है कि कंधे और पांव म होने वाली सूजन के रोग पशुओं के ही हैं। मांसाहार के साथ व मानव शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं।

निर्दयता का रविन्द्रनाथ टैगोर द्वारा सक्रिय विरोध

Animal Welfare Board की ओर से प्रकाशित Animal citizen नामक त्रमासिक क अंतिम सस्करण म बताया गया है –

'जब मैं नदी की ओर जा रहा था, तब सहसा मैंने एक विचित्र दिखाई देने वाले पक्षी को पार जाने के लिए कठिनाई से तैरते हुए देखा। अचानक एक सनसनी हुई। मुझे प्रतीत हुआ कि वह एक पला हुआ मुर्गा था, जो कटने से बचने के लिए पानी में कूद पडा और अब तट तक पहुँचने के लिए प्राणों की बाजी लगा रहा था। वह तट के निकट पहुँचा ही था कि उसके निष्ठुर हत्यारो ने उसे दबोच लिया और गर्दन पकड कर रसोईये को सौंप दिया। मैंने उसी समय रसोईये को बता दिया कि मैं भोजन मे मास नही खाऊंगा।

मैंने निश्चय कर लिया कि मासाहार छोड ही देना चाहिए। मासाहारी इसलिए मास खाते है कि वो मास के निमित्त होने वाले पाप और निर्दयता पर विचार नही करते। मानवकृत ऐसे अनेक अपराध है कि जो पाप व अनैतिकता आदतो और परम्परा के दबाव से विस्मृत हो जाते है। किन्तु निर्दयता ऐसा प्रसग नही। यह मूलभूत पाप है और इसके विरूद्ध कोई भी युक्ति या अपवाद लागू नही हो सकता। यदि हम केवल अपने हृदय को निष्ठुर न होने दे तो निर्दयता के सम्मुख वह हमेशा कुहराम मचा देगा उसका सामना करेगा। तो भी हमे समझ लेना चाहिए कि जो हत्या और वध के उत्तरदायी हैं वे अपने को पागल समझेगे। ऐसा होने पर भी हम सुगमता से और अपने मे करुणा उत्पन्न होने के पश्चात भी अपनी निष्ठा को घोट कर दबा कर जीव हत्या करने मे दूसरो को सहयोग देते रहेगे तो हमारे मे जो सज्जनता है, हम उसका अपमान् करेगे। अत. मैंने शाकाहारी रहने का निर्णय किया है।,

—**रवीन्द्रनाथ टैगोर**

प्र०—मांसाहार से होने वाली हानि का वर्णन करो।

उ०— दांत–प्रकृति ने मनुष्य जाति मे जिस प्रकार की दात रचना की है, उसके विवरण की यदि तलाश की जाए तो स्थूल रूप मे ही यह सिद्ध किया जा सकता है कि हमारे दात तोडफोड कर खाये जाने वाले भोजन की अपेक्षा सुरीत्या काट कर, टुकडे करके चबा चबा कर खाये जाने वाले आहार के अधिक अनुकूल हैं। भोजन करने में यदि हम प्रकृति को दूर रखे, उससे विमुख हो जाये तो उतने अश मे हमें दुःख भोगना पड़ता है। मांसाहारी के दांत पीले पड जाते हैं, मसूडे खराब हो जाते है, दांत ढीले हो जाते है या थोडे समय मे ही नकली दात लगवाने पड़ते हैं। मुख में दुर्गन्ध आती है, दात सड भी जाते है।

दातों के कमजोर हो जाने से भोजन करने में स्वाद और मिठास मिलता है उससे मांसाहारी वंचित हो जाते हैं मिठास और पाचक रस के अभाव में पाचन ठीक नहीं हो पाता शरीर का फूल जाना दस्त लगना अथवा अजीर्ण आदि उदर के रोग पैदा हो ते हैं। जैसे दांतों के कारण जठर और पेट में रोग होता है वैसे ही प्राय गले में भी बीमारी होती है। मांसाहारी प्रजा में गले टांसिल आदि की जो व्याधि देखने में आती है, वह शाकाहारी में नहीं।

२ रक्त में यूरिक एसिड—हमारे शरीर में जो आहार लिया जाता है उसका उचित स्थानों पर समुचित परिवर्तन होकर अंत में उसके तत्व रक्त में गतिशील होते हैं। वहां यथेष्ट काम करने के पश्चात उनका अनावश्यक भाग बाहर निकलता है। उसके निकास के चार मार्ग हैं—मूत्र मल श्वासोश्वास पसीना। जिस परिणाम में ये मार्ग खुले न हों उस परिमाण में ही शरीर में में चलने वाली प्रत्येक क्रिया का अवरोध हो जाता है। तदनुसार शरीर में व्याधि होती है।

मांस में यूरिक एसिड नामक तत्व विशेषत हमारा ध्यान आकृष्ट करता है। उसके बाहर आने का मुख्य मार्ग मूत्र है अधिक मांस खाने से यह एसिड अधिक उत्पन्न होता है। उचित परिवर्तन के उपरांत मूत्र मार्ग से बाहर आने की अवधि में रक्त में उसकी विद्यमानता से ऐसा परिवर्तन हो जाता है कि रक्त की नसों में से वह पर्याप्त मात्रा में बाहर नहीं निकल सकता और रक्त में ठहर जाता है। इस प्रकार विकृत रक्त जहां जहां प्रवाहित होता है वहां २ प्रभाव डालता है। जिससे कि लकवा मजजा, सर दर्द पित्त की वृद्धि आदि रक्त विकार के दोष मांसाहारियों में सरलता से होते है।

३ मद्यपान की आदत पड़ती है—मांसाहार के परिणाम स्वरूप एक प्रकार की प्यास लगती है उसे शांत करने के लिए मद्यपान करना पड़ता है। धीरे-धीरे इसकी आदत बन जाती है। मद्य भी एक व्यसन है। अत: दो बुरा इयां गले पड़ जाती हैं। फलत स्थिति यह होती है कि नमाज छुड़ाने गए रोजे गले पड़े अथवा बिल्ली निकालने लगे, ऊंट घुस गया।

डा० हेग M A M D का मत है कि शराब एक कृत्रिम उत्तेजक है। जितने परिमाण में इस बल का पहले उपयोग हो चुका हो उस परिमाण में अधिक बल उत्पन्न करने के लिए अधिक उत्तेजक की जरूरत होती है। वृद्ध

भोजन बाहर से नये बल की वृद्धि करता है और उत्तेजक भोजन सचित तेज या बल को बाहर निकालता है। वास्विक बल उतना होता है जितना हम भोजन करते है न कि उत्तेजक पदार्थो के परिमाण के अनुसार। जो व्यक्ति बल या शक्ति के लिए उत्तेजक पदार्थो का आश्रय लेते है, वे अपनी लक्ष्य सिद्धि मे असफल होते हैं। उनकी मृत्यु भी सभावित है। कारण यह है कि उत्तेजक पदार्थो के कारण उनके बल मे कमी हो जाती है। उसकी पूर्ति न हो सकने से शारीरिक सपत्ति का निश्चय ही दिवाला निकल जाता है।

४. प्रकृति तामसी होती है—तामसिक प्रकृति मे वृद्धि होती है, हम जानते है कि तामसी प्रकृति वाले व्यक्ति अपने स्वभाव को वश मे नही रख सकते। फलतः इच्छा न होने पर भी किसी साधारण सी बात पर उन्हे सहसा क्रोध आ जाता है। क्रोध का परिणाम कैसा होता है ? अमुक स्थान पर अमुक व्यक्ति ने क्रोध के वश होकर किसी के पेट में लात या छुरी मारकर उसे यम-लोक पहुँचा दिया डडा मारकर सिर फोड दिया यह सब मासाहार का ही परि-णाम है।

लेसेट(Vol. I 1869) में मीलीबीग सिद्ध करना चाहते हैं कि मासाहार के कारण मासाहारी जातियो मे हत्या तथा कलह प्रिय स्वभाव का प्रादुर्भाव होता है और उसके कारण उन्हे शाकाहारियो के पृथक पहचाना जा सकता है। गीसन के एनेटोमीकल म्युजियम मे एक रीछ रखा गया था जिसका स्वभाव तब तक नम्र और शात था, जब तक कि उसे केवल रोटी का ही भोजन दिया जाता था। थोडे दिनो के मासाहार से वह दुर्गुणी, क्रूर और क्रोधी बन गया।

५ पागलपन बढ़ता है—यह रोग मांस से होने वाले रक्त के परिवर्तन से मस्तिष्क पर पडे हुए प्रभाव से उत्पन्न होता है। भारत की अपेक्षा मासा-हार का विशेष उपयोग करने वाले यूरोप और अमेरिका मे मेंटल अस्पतालो व(पागलखानो) की सख्या अधिक है। हजारो मानसिक चिकित्सक है, और अनगिनत रोगी।

६. सौन्दर्य में भी मांसाहार स्पर्धा नहीं कर सकता— मासाहार से शरीर के अवयवो में न्यूनता रह जाती हैं। विभिन्न रोगो से शरीर तेजहीन लावण्य, सौन्दर्य हीन कोटि का बनता जाता है। शाकाहारी के रूप के साथ

अकाल मरण होता है। बुढापा भी शीघ्र आता है। अस्वस्थता और रक्त विकार के चिन्ह जल्दी प्रगट होते हैं।

मांस का विरोध करने वाले सभी धर्मशास्त्र

मांसाहार के विषय मे स्वादलोलुप लोगों ने धर्मशास्त्र का उल्लंघन करने में लज्जा, संकोच तक नही किया। आत्मा को सुखी बनाने वाला परमतत्व जीव दया, अहिंसा, सयम, करुणा है। सभी धर्मशास्त्रो मे इसके विकास का विधान है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने धर्मशास्त्र का सम्मान कायम रखे तो मासाहार स्वय बंद हो जाए। धर्म की आज्ञा का उल्लघन ईश्वर की आज्ञा का उल्लघन है। सब जीवो को अहिसा सुखी करती है, हिंसा दुखी।

आज लोगो को अपने धर्म तथा धर्मशास्त्रो मे मांसाहार की लोलुपता के कारण श्रद्धा नही रही, किन्तु अपने द्वारा किए गए अशुभ का भोग, कर्म की वेदना स्वयमेव सहना है। किसी को दुख देकर कभी सुख नही मिलता। अपितु ऐसे नरक मे रहना पडता है, जहा अनन्त वेदना सहनी होती है। ज्ञानी पुरुषो ने धर्मशास्त्रो मे ऐसा ही कथन किया है। प्रत्येक जाति के धर्मशास्त्र मे मासाहार का निषेध उपलब्ध है। कुछ उल्लेख ये हैं—

वाइवल के जेन्सीस मे स्पष्ट आदेश हैं—

1. Behold I have given you every herd bearing seed, which is upon the face of all the earth, and every tree in which is the fruit of a tree yielding seed to you it shall be for your food (Genses chap-1-297)

परमेश्वर ने कहा है–आप देखे, मैंने तुम्हे बीज देने वाले प्रत्येक जाति के जो पौधे दिए हैं वे पृथ्वी के प्रत्येक भाग मे मिल सकते है। हर प्रकार के वृक्ष भी प्रदान किए हैं, जो बीज व फल की पूर्ति करेंगे। वे पदार्थ तुम्हारे भोजन का काम देंगे। (अतः मास भक्षण की आवश्यकता नही)

2 And you shall be holy men unto me, neither shall you eat any flesh that is torn of beasts in the fields.

तुम मेरे प्रति पवित्र रहोगे। किसी भी प्रकार का मास नही खाओगे जो कि वन के निरपराध पशुओ को चीर फाडकर, दुख देकर उत्पन्न होता है।
–बाइवल– करण २२

3 And when you spread forth your hands, I will hide mine eyes from you, and when you make many prayers, I will not hear, because your hand are full of blood हे मांसाहारी जब तक तू अपने हाथ फैलायेगा तब मैं अपनी आंखें बंद कर लूंगा तुम्हारी प्रार्थनाएँ नहीं सुनूंगा। क्योंकि तुम्हारे हाथ रक्त-रंजित हैं।-इशिया-अध्याय ८, आयात १५

4 हे भला तेरा इसी में मास खाना छोड दे।

इस मुबारक पेट को कब्र बनाना छोड दे॥

५ गुरु नानकजी ग्रंथ साहिब म फरमाते हैं—

जेरत्त लगे कप्पडे जामा होय पलीत ।

तेरत्त खावो मानसा ते किम निरमल चित्त ॥

वस्त्र पर रक्त का एक दाग (धब्बा) लग जाने से शरीर अपवित्र हो जाता है। फिर वह खून या रक्त पेट म जाने से चित्त कैसे निर्मल रह सकता है ?

बाहर की अपवित्रता पानी से दूर हो सकती है किन्तु हृदय की अशुचि दूर करना अति कठिन है।

६. भक्त कबीर जी कहते हैं —

तिलभर मछली खाय के कोटी गौ दे दान,

काशी करवट ले मरे तो भी नरक निदान।

जो मनुष्य तिल जितनी मछली खाकर बाद म करोडों गायों का दान दे अथवा काशी जाकर मरे तो भी उसकी नरक गति मिटती नहीं है।

७ कुरान शरीफ-(सुरा-२२, आयात ३७) उनका (पशुओं का) मांस और खून खुदा के पास नहीं पहुचता किन्तु तुम्हारी परहेजगारी दया-वृत्ति पहुँचती है।

इस्लाम धर्म के अनुसार प्राणियों की उत्पत्ति नापाक-अपवित्र वस्तु से है, अतः मांस भी नापाक है इसलिए मांस त्याज्य है धर्म विरुद्ध भोजन है।

८ महाभारत के अनुशासन पर्व म कहा गया है—जो दूसरे के मांस से अपना मांस बढ़ाना चाहता है उससे बढ़कर अधम कोई नहीं। वह अतिक्रूर है।

९ मनुस्मृति—मास की प्राप्ति प्राणि वध के विना नहीं होती। प्राणि वध से कभी स्वर्ग नही मिलता। (किन्तु नरक गति प्राप्त होती है।) इसलिए मास भक्षण का त्याग करना चाहिए।

१०. श्री वृद्ध पराशर स्मृति—जो पुरुष प्राणी-हिंसा करके उसके मास से पितृ देव की तृप्ति करता है वह मूर्ख अच्छे सुगंधित चन्दन को जलाकर उसकी राख से अपने शरीर का लेपन करता है। यज्ञ तथा श्राद्ध के लिए किसी भी जीव की कभी हत्या न करें।

११ 'फला तजअल् वुतुन, कुम मकावरल हयूवानात'—तू अपने पेट मे पशु पक्षियो की कब्र मत बना। —मीशरी

१२. कुरान शरीफ मे मूनाअन—अल्ला ने चार पाव वाले जानवर भार उठाने के लिए पैदा किए है। खाने के लिए जमीन पर लगी हुई वनस्पति और अनाज उत्पन्न किया है। तुम उसे खाओ। (न कि पशुओ का मास)

१३ मक्का तीर्थ भूमि पर किसी पशु को नही मारना। दया मे धर्म है, हिंसा मे नही।

१४ इजस्नै—जो चौपाए जानवरो को पीडा पहुचाने मे या उन्हे जान से मारने मे जीवन को सुखी मानते हैं अथवा उन्हे काटने या मारने का आदेश देते हैं उन्हे पारसियो के परमेश्वर होरमजद ने कठोर दण्ड देने तथा दूर रखने के लिए कहा है।

१५. Be you there fore merciful as your father is merciful.

जिस प्रकार तुम्हारे पिता प्रभु दयालु है, उसी प्रकार उनके पुत्र तुम भी दयालु बनो। किसी जीव को मत सताओ।

१६ जमीयाद यस्त ५८—एक जीवित प्राणी के शरीर अथवा अण्डे को हानि पहुचाने वाले परमात्मा होरमजद के विरोधी हैं और शैतान आहेरमन्द के साथी हैं।

१७. कवि वर्डस्वर्थ ने Pleasures of life मे लिखा है।—

Don't mingle the pleasure or joy, with the sorrow of the meanest thing that feels हे भाई! ऐसी किसी बात मे हर्ष या आनन्द नही मानना, जिससे अनुभव शक्ति वाले किसी भी जीव को पीडा पहुँचे या उसकी मृत्यु होवे।

१८ मनु ऋषि कहते है—जो मांस नही खाते, दूसरे प्राणियों की हिंसा नही करते, व प्राणीमात्र के मित्र बनते हैं।

१६ श्रुति और स्मृति ग्रन्थ—सम्पूर्ण स्वर्ण दान गोदान, भूमि दान से भी बढ़कर मांस भक्षण का त्याग विशिष्ट धर्म माना गया है।

२० भगवान् बुद्ध ने कहा है—सब प्राणियों को आयु और सुख प्रिय है तथा दुःख और हत्या अप्रिय एवं प्रतिकूल है। सभी प्राणी जीवन के इच्छुक हैं और उसे प्रिय मानने वाले हैं अतः जीओ और जीने दो। अपने प्राणों के रक्षार्थ भी किसी प्राणी का वध न करो। प्राणी मात्र के प्रति अपने ऊपर, नीचे और चारों ओर निर्बाध रूप से वैर रहित और मैत्री की असीम भावना का विस्तार करना चाहिए।

२१ कबीर जी कहते हैं किसी भी जीव को दुःख न दो और जो चाहे करो, क्योंकि धर्म में इससे बढ़कर और कोई अन्य महापाप नही।

२२ फिरदौसी का शाहनामा—प्राणियों की रक्षा करना धर्म है। अहुरमज्द ने पशु वध का पाप बताया है।

२३ ईसामसीह ने कहा है, Thau shall not kill किसी की भी हत्या न करो, मैं दया चाहता हूँ, बलि नहीं।

२४ महाभारत के शांति पर्व में कहा गया है—जीव दया करोड़ों कल्याणों की जननी है। अति कठिनाई से त्याज्य पाप रूपी प्रचंड शत्रु वर्ग का नाश करने वाली है। केवल जीव दया ही संसार रूपी समुद्र को पार कराने में समर्थ है।

२५ भगवान् कृष्ण ने युधिष्ठिर से कहा, हे भारत! समस्त जीवों को अभयदान देकर जीव दया के पालन से जो लाभ होता है वह सब वेदों के पठन पाठन से भी नहीं हो पाता। जीवदया से जो पुण्य प्राप्त होता है वह समस्त यज्ञों के करने से भी नही होता। जीव रक्षा से होने वाला लाभ सब तीर्थों पर स्नान के लाभ से बढ़कर है।

२६ मार्कण्डेय पुराण में उल्लेख है—हे आत्मनो! तुम्हें विचार करना चाहिए कि जिस प्रकार अपने प्राण तुम्हें इष्ट हैं उसी प्रकार दूसरे प्राणियों को भी अपने प्राण अत्यन्त प्रिय हैं। यह जानकर ज्ञानी पुरुष घोर भयंकर प्राणी वध से दूर रहते हैं।

२७ एक व्यक्ति किसी जीव को मारने के लिए तत्पर हुआ है। उस समय उस जीव से यदि यह कहा जाय कि तुम एक करोड के धन और जीवन दान में से किसी एक को स्वेच्छानुसार मांग लो तो मृत्यु से भयभीत जीव करोड़ की संपत्ति छोडकर जीवन दान की प्रार्थना करेगा। बड़ी भारी लक्ष्मी की अपेक्षा प्राणियो के लिए अपने प्राण सबसे अधिक प्रिय होते हैं।

२८. महाभारत में कहा गया है कि

यो दद्यात् कांचन मेरू कृत्स्ना चव वसुंधरा।
एकस्य जीवितं दद्यात् न च तुल्यं युधिष्ठिर॥

महाभारत मे लिखा है—यदि मनुष्य काचनमय मेरु पर्वत तुल्य स्वर्ण दान करे तथा सारी धरा भी दान मे दे दे और एक प्राणी को अभयदान दे, तो भी हे युधिष्ठिर! दोनो समान नही होते। अर्थात् उपर्युक्त दान की अपेक्षा एक प्राणी के प्राणो की रक्षा, महाफल देने वाली है।

२९ महामुनिश्वर नारद जी कहते हैं--जो व्यक्ति दूसरो का मांस खाकर अपनी पुष्टि चाहता है, तो वह निश्चय पूर्वक नरक जाएगा।

३०. महर्षि व्यास का कथन है जो अहिंसक पशुओ का अपने सुख के लिए घात करता है, वह स्थावर योनि प्राप्त करता है। (दीर्घकाल तक वेदना से पीडित होता है।)

३१. शुकदेव फरमाते हैं—जो हिंसा नही करते वे ससार मे सुन्दरता, लक्ष्मी, स्वास्थ्य तथा विद्यादि शुभ गुणो से सम्पन्न होते हैं। मृत्यु के वाद वे स्वर्ग जाते हैं।

३२ कवीर जी का कथन है—

मांस मछलिया खात है, सुरापान सेवेत।
ते नर नरक ही जायेगे, माता पिता समेत॥१॥

तिल भर मछली खाय के, कोटि गौ दे दान।
काशी करवट ले मरे, तो भी नरक निदान॥२॥

केवल मांसाहारी ही नही उसके माता पिता भी नरक में जाते हैं। इसी प्रकार हिन्दू धर्म में गोदान महान पुण्य का कारण है तो भी कबीर जी कहते हैं कि एक दिन भी प्राणी हिंसा करने वाला हिंसक यदि एक ही समय करोड़ो गायों का दान दे दे तो भी उसका पाप अक्षम्य है।

३३ गुरुनानक जो ग्रंथ साहिब मे फरमाते हैं —

> जो पीते हैं प्याले और खाते हैं कबाब,
> सो देखो रे लोगो वे होते खराब ॥१॥
> सो तोबा पोकारे की पीवे अजाब,
> जो लेखा मगीजे क्या कीजे जवाब ॥२॥

जो शराब पीते हैं और मास खाते हैं, उन दोनों प्रकार के लोगो को देखो, वे भ्रष्ट होते हैं और फिर तोबा करते हैं। उनका क्या हाल होगा? प्रभु के घर जब हिसाब मागा जाएगा तब क्या उत्तर देंगे।

३४ हजरत ईसा ने अपने शिष्यों को बार बार कहा था- Do not kill किसी का भी खून न करो, यही उनका मूल मन्त्र था। उनका यह भी कथन था कि यदि कोई व्यक्ति तुम्हारे गाल पर एक थप्पड मारे तो तुम तत्काल अपना दूसरा गाल उसके सामने पर दो। इससे सुस्पष्ट है कि वे अहिंसा के पुजारी थे। ससार के भाग्य से यदि वे आज जीवित होते तो उनके शिष्यों (ईसाइयों) ने जो रक्तपात मचाया है, वह स्वप्न मे भी सम्भव न होता।

३५ इस्लाम के अनुयायी भी आज भयकर रूप से क्रूर हिंसा करने में अपना गौरव समझते हैं। किन्तु इस्लाम भी करुणा के सिद्धात से शून्य नहीं हैं। इतना ही नही पाक धर्म में तो अहिंसा के ऐसे ऐसे दृष्टात दृष्टि गोचर होते हैं कि हम चकित हो जाते हैं।

३६ हजरत मुहम्मद का कथन है (१) गो हत्या करने वाले अथवा कसाई, (२) शराब पीने वाले (३) दास बचने वाले, (४) पेड पौधों को काटने वाले इन चारों की सद्गति नही होती। उन्हें घोर हिंसा के परिणाम स्वरूप दुःख भोगना पड़गा।

३७ प्राणियो के प्राण का नाश करके जो लोग मास भक्षण की इच्छा करते हैं, वे दया नामक वृक्ष को मूल से उखाड़ फेंकते हैं।

३८. जो मानव सुन्दर, सरस, दिव्य भोजन के प्राप्त होने पर भी मांसाहार करते है, वे अमृत रस का त्याग कर विष का सेवन करते हैं।

३९. जो व्यक्ति मद्यपान करते हैं, मास खाते है, रात के समय खाते है और कन्द का उपयोग करते हैं, उनकी तीर्थ यात्रा और जप तप व्यर्थ जाता है।—महाभारत

४०. निर्धनता, भाग्यहीनता, लंगड़ापन, कोढ, पागलपन, तीव्र वेदना, पशु योनि मे जन्म तथा नरक गति के विविध दु ख जीव हिंसा से मनुष्य को प्राप्त होते हैं—। श्री नरवर्म चरित्र

४१. जैसे हमे सुख प्रिय हैं तथा दु ख अप्रिय है, वैसे ही सभी जीवो को है, अत. किसी के अनिष्ट का चिंतन तथा दूसरो की हिंसा नही करनी चाहिए। —योगशास्त्र

४२. जैसे मुझे अपने प्राण प्रिय है, वैसे दूसरे जीवो को भी अपने प्राणो से प्यार है, ऐसा समझ कर सुज्ञ पुरूषो को प्राणी मात्र का वध नही करना चाहिए। किसी जीव का वध करना अपना ही वध है। उस पर दया करना स्वयं पर दया करना है। —सूक्ति मुक्तावली

४३. एक सूई की नोक अथवा घास की नोक चुभने पर हमे कितनी वेदना होती है ? यह तो अनुभव सिद्ध बात हैं। ऐसी स्थिति मे अपराध रहित प्राणियो पर छुरी चलाते समय उन्हे कितनी वेदना होती होगी. इस पर लेश मात्र विचार तो करो। किसी भी जीव के लिए मरण की पीडा सब दु खो से बढकर है। दूसरो की मृत्यु का साधन बनकर अनेक मरणो का दण्ड भोगना पडता है। कर्म का नियम अटल है।

४४. मांसाहारी को अनेक बार जन्म मरण का दु.ख भोगना पडता है। अत: बुद्धिमान मनुष्य मन मे भी मांसाहार की अभिलाषा नही करते।

४५ पुराणकारो का कथन है—समस्त शुक्र (वीर्य) ब्रह्मा है, मास विष्णु है, अस्थि समूह ईश्वर रूप हैं। अत : मांस नही खाना चाहिए। मांसाहारी ब्रम्हा

विष्णु महेश का अपमान करते हैं। मांस के त्यागी इनके भक्त बनकर सम्मान करते हैं।

४६ मांसाहार से देह की लावण्य लक्ष्मी, सुमति सुख, पवित्रता, सत्य, यश, कीर्ति, पुण्य, श्रद्धा, विश्वास, स्वस्थता, सद्गति—इन सब का नाश होता है।

४७ मनुस्मृति में लिखा है–मांसाहार का अवलम्ब देकर उसका अनुमोदन करने वाले, प्राणियों का अंग विच्छेद करने वाले उनके प्राणों का नाश करने वाले, मांस बेचने वाले उसे खरीदने वाले, मांस पकाने वाले, मांस परोसने वाले उसे खाने वाले—इन सबको पंचेन्द्रिय जीव की हत्या का पाप लगता है। यह पाप नरक का कारण है।

४८ दया युक्त हृदय वाले व्यक्ति की आयु बढ़ती है, शरीर सुशोभित होता है नाम और यश उज्ज्वल बनते हैं, धन बल प्रतिष्ठा की वृद्धि होती है, निरन्तर आरोग्य की प्राप्ति होती है तीनों लोकों में प्रशंसा होती है और भव सागर सुख से पार होता है।

४९ विभिन्न धर्मों के सारभूत मत—(१) अभय दान श्रेष्ठ धर्म है। (२) अहिंसा परमो धर्म। (३) दया धर्म का मूल है। (४) मा हिंस्यात् सर्व भूतानि। (५) Thou shall not kill। (६) सब जीवों के साथ मैत्री, प्रेम और वात्सल्य का विकास करो। (७) जीवों की रक्षा में जगत् की रक्षा है। (८) जीओ और जीने दो।

विलायती औषधियों में अभक्ष्य पदार्थ

[१] कोड लिवर पिल्स—मछली की मछ्या के कलेजे के तेल की गोली
[२] स्याट इमल्शन वायरील—बल व रक्त के विशेष भाग का मांस
[३] विरोल—गाय के मस्तिष्क का मांस रस
[४] बोफाइरन वाइन—मुर्दा के मांस वाली शराब
[५] कारनिकलीवडिड—मांस के मिश्रित पदार्थ

[६] सरवानी टानिक=मदिरा (स्पिरिट) युक्त
[७] येक्स्ट्रेक्ट मोल्ट=मधु व मांस से मिश्रित
[८] येक्स्ट्रेक्ट चिकन=मुर्गी के बच्चो का रस
[९] विसेन इन=सूअर की चर्बी
[१०] पेप्सीट पावडर=कुत्ते व सूअर के अण्ड का चूर्ण
[११] पेलोल और अनेक टीके, कैपस्यूल. गोलियां तथा तरल औषधियाँ विविध -प्राणियो बन्दर. बैल, गाय, खरगोश भेड, मेढक मछली आदि के जिगर, कलेजे, आतडियो आदि भागो के अर्क खीचकर बनाई जाती है। इन सब को अभक्ष्य मानकर छोड देना चाहिए।

वनस्पति आहार की श्रेष्ठता

१. मनुष्य के लिए माँसाहार की अपेक्षा शाकाहार अधिक प्राकृतिक आहार है। २. शाकाहार से सहन शक्ति बढ़ती है। ३ आरोग्य की वृद्धि के लिए भी यह मासाहार से अधिक अच्छा है। ४ यह माँसाहार के समान अपवित्र और रोग वर्धक नही है। ५. क्षार. विटामिन तथा जीवन द्रव्य की दृष्टि से भी मासाहार की अपेक्षा यह उत्कृष्ट है। ६ दीर्घायु के लिए यह उत्तम है। ७ आर्थिक दृष्टि से यह सस्ता है। ८. इनकी उत्पत्ति करने से किसी व्यक्ति का नैतिक अध.पतन नही होता। ९ इस आहार के लिए शिकार जैसे घातक शौक और अनेक प्रकार की क्रूरता की आवश्यकता नही। १०. शरीर शास्त्र तथा विकासवाद के अनेक विद्वानो ने इसे आशीर्वाद प्रदान किया है। अत यह वैज्ञानिक भी है। ११. धर्म की योग्यता और हृदय की कोमलता के लिए शाकाहार अनुकूल है। १२ सात्विक है।

९. अभक्ष्य मक्खन

मक्खन को छाछ से बाहर निकाले जाने के तत्काल बाद अन्तर्मुहुर्त मे अनेक सूक्ष्म व उसी वर्ण के त्रस जन्तुओ का समूह पैदा होता है। उनकी हिंसा के कारण मक्खन अभक्ष्य माना गया है।

मक्खन १ गाय का २ भैंस का ३ बकरी का ४ भेड का—इस प्रकार चार प्रकार का होता है। जब तक मक्खन छाछ सहित होता है तब तक छाछ की अम्लता के कारण उसमें त्रस जीवों की उत्पत्ति नहीं होती। जब उसे छाछ से पृथक किया जाता है तब वह उसी वर्ण के होने के कारण न दिखाई देने वाले सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति के योग्य बन जाता है। फलत त्रस जीव उत्पन्न होने लगते हैं। विधि दो तीन दिन के दही को बिलोने मथने—से वह चलित रस हो जाता है अत अनेक त्रस जीवों का नाश होता है। मक्खन का भोजन कामवासना को उत्तेजित करने वाला होता है। वह मन में कुविचार उत्पन्न करता है और चरित्र के लिए हानिकारक है। इन सब कारणों से अभक्ष्य मान कर उसका त्याग करने को कहा गया है।

मक्खन तथा द्विदल आदि में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे आगमगम्य हैं। आगम को सत्य बताने वाले केवली भगवान् हैं। उनके द्वारा बताए गए तथ्यों को सत्य न मानने का कोई कारण नहीं। वे सर्वज्ञ हैं, अत अपने ज्ञान से समस्त पदार्थों को उसी रूप में जानते हैं जिसमें वे हैं और उनके उसी यथार्थ रूप का कथन करते हैं। उन पर विश्वास करने से उनके वचनों पर विश्वास होता है।

जैन दर्शन तथा अन्य दर्शनो मे कहा गया है :—

मद्य मांसे मधुनि च नवनीते चतुर्थ के ।
उत्पद्यन्ते विलीयन्ते सुसूक्ष्मा जन्तु राशयः ॥

शराब, माँस, मधु और मक्खन इन चार पदार्थो में अतिसूक्ष्म जीव समूहवद्ध पैदा होते है और नाश को प्राप्त होते है।

एकस्यापि हि जीवस्य हिंसने किमघ भवेत् ।
जन्तुजातमयं तत् को नवनीतं निषेवते ॥

एक जीव को मारने से भी महान् पाप होता है तव जन्तुओ के समूह से भरपूर मक्खन कौन वुद्धिमान व्यक्ति खाएगा ? अर्थात दयालु मनुष्य तो भक्षण नही करेगा।

मक्खन के पैकेट वनाकर पोलसन वटर आदि के नाम से इन्हे वेचा जाता है। पश्चिम के लोगो से वढते हुए सम्पर्क के कारण हमारे देश के निवासी भी Bread & Butter डवल रोटी और मक्खन का प्रयोग करने लगे हैं। यह बात धार्मिक दृष्टि से उचित है ही नही। आटे मे जिस प्रकार का खमीर उत्पन्न करके डवल रोटी तैयार की जाती है, वह अभक्ष्य है। सात्विकता की दृष्टि से भी वह रोटी, खाखरा, पूरी अथवा शकरपारा की अपेक्षा निम्न कोटि की होती है। यह नरम और वासी होती है, इस कारण इसमे अनेक त्रस जीवो की उत्पत्ति होती है, चलित रस बनता हैं, इसलिए भी यह अभक्ष्य है। यह समझ नही आता कि लोग रूचिपूर्वक उसका उपयोग क्यो करते हैं ? मक्खन की अपेक्षा घी का उपयोग इष्ट है। कारण यह है कि मक्खन थोडे समय मे ही विकृत हो जाता है। और यह विकृत मक्खन वमन, बवासीर, कोढ तथा स्थूलता को उत्पन्न करता है। घी दीर्घ समय तक विगड़ता नही और वह रसायन, रुप, मधुर, नेत्रो के लिए हितकारी, अग्नि दीपक, शीतवीर्य युक्त, वुद्धिवर्धक, जीवन प्रद, शरीर को कोमल रखने वाला, वल, काति, वीर्य को वढाने वाला मल नि सारक तथा भोजन मे माधुर्य देने वाला है। अत. अभक्ष्य मक्खन का प्रयोग न करके प्राचीन प्रथा के अनुशार प्रात कालीन कलेवे मे खाखरा, घी, दूध, दही आदि का उपयोग अभीष्ट है। डवल रोटी व मक्खन का प्रयोग इष्ट नही है। खमीर तथा प्रयुक्त होने वाला जीव जन्तु युक्त मैंदा तथा मक्खन अभक्ष्य होने से अनेक त्रसजीवो के नाश के साथ-साथ शारीरिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। इनका त्याग करना पूर्णत. उचित है।

स्वाध्याय

प्र० १ बाईस अभक्ष्या के नाम लिखो।

२ जन दशन की विशेषता का वणन करो।

३ अभक्ष्य की व्याख्या तथा अभक्ष्यता के कारण लिखो।

४ पाच उबर के नाम लिखो। वे अभक्ष्य क्यों हैं ?

५ मधु की उत्पत्ति और अभक्ष्यता स्पष्ट करो।

६ मदिरा के अन्य नाम लिखकर उसकी हानिया का वर्णन करो।

७ मदिरा का त्याग क्यो ? वह शरीर का शतान कैसे है ?

८ मदिरा की विविध हानिया चित्र के अनुसार लिखो।

९ मदिरा के कारण द्वारिका का नाश कसे हुआ ?

१० मास किस लिए अभक्ष्य है ? उसमे कौन २ से जीव मरते हैं ?

११ भोजन की दृष्टि से अनाज की उत्तमता सिद्ध करते हुए उसके लक्षण लिखो।

१२ पीपरमेंट व चाकलेट मे अभक्ष्य द्रव्य कौन से हैं ?

१३ मासाहार से क्या हानिया होती हैं ?

१४ मासभक्षण मे क्या अहित हैं ?

१५ मासाहारी और शाकाहारी में अन्तर स्पष्ट करो।

१६ मास का उपयोग किस लिए नहीं करना चाहिये ?

१७ मासाहार के सबध में आठ डाक्टरो के अभिप्राय लिखो।

१८ रविन्द्रनाथ टगोर ने निर्दयता का विरोध कैसे किया ?

१९ मासाहार से होने वाली शारीरिक हानिया की चर्चा करो।

२० मास निषेध विषयक धर्मशास्त्रो के प्रमाण लिखो।

२१ मक्खन व डबल रोटी क्यों नहीं खाना चाहिए ?

------

१०. अभक्ष्य हिम (बरफ)
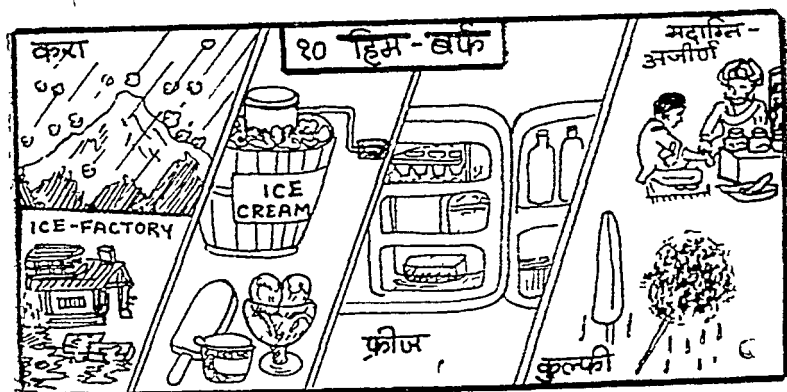
अभक्ष्य हिम (बरफ) द्वारा निर्मित किये गये शीतल पेय

वरफ, हिम और ओले इन तीनो मे एक समान दोष हैं। अप्काय के एक विन्दु मे असख्य जीव होते हैं। वे इतने सूक्ष्म शरीर वाले होते हैं कि उनमे से एक जीव का शरीर सरसो जितना मान ले तो पानी के एक विन्दु के जीव लाख योजना वाले जम्बूद्वीप मे न समा सकेंगे। मुमुक्षु आत्मा, जल का उपयोग भी आवश्यकतानुसार ही करती है और वह भी यथा सम्भव अचित जल का। ऐसी स्थिति मे जिस वस्तु का उपयोग जीवित रहने के लिए आवश्यक नही उस हिम (वरफ) का भक्षण वह क्यो करेगा ? हिम पानी का जमा हुआ घन स्वरूप है। कैपटन स्कोर्सबी ने सूक्ष्मदर्शक यंत्र की सहायता से पानी के एक प्रवाहशील विन्दु मे ३६४५० हिलते जुलते त्रसजीवो को देखा था और उसका चित्र भी प्रकाशित किया था। अत सर्वज्ञ भगवान् द्वारा पानी की एक बूंद मे असंख्य जीवो के अस्तित्व के विधान को असंभव मानना निष्कारण है। मशीन मे पानी को वहुत ज्यादा ठण्डा करने से वरफ वनती है इनके। कण-कण मे असख्य अप्काय जीव होते है। पानी के विना जीवन निर्वाह नही हो सकता, अतः उसे अभक्ष्य नही गिना गया परन्तु वरफ तो जीवन निर्वाह के लिए अनावश्यक हैं, अधिक जीवो के नाश के कारण उसे अभक्ष्य की कोटी में रखा गया। वरफ के वनाने मे वहुत आरंभ है और वह शरीर के लिए हानिकर

है। बरफ में पानी के जोव तो मरते ही हैं किन्तु जब उस बरफ को दूसरे पानी में डाला जाता है, तब उसमे विद्यमान पानी के त्रसजीव अधिक शीत के कारण मर जाते हैं। इस हिंसा को लक्ष्य म रखकर ज्ञानी पुरुषों ने बरफ–हिम–ओले को अभक्ष्य बताकर उसके त्याग का उपदेश दिया।

आज नगरों में और गावों म भी बरफ की लारियाँ घूमती हैं। बरफ के गोले आइस फ्रूट के शरबत आइसक्रीम व कुलफी बनाकर बेचे जाते हैं। उन्हें बालक बडे शौक स खाते हैं। उससे गले का दर्द, टॉसिल, सर्दी का ज्वर खासी आदि रोग होते हैं। शरीर की शक्ति क्षीण होती है। इस प्रकार बरफ स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद है।

जिस प्रकार बरफ से दूध आदि जम जाता है उसी प्रकार शरीर मे रुधिर भी ठोस हो जाता है या जम जाता है। ऐसा रक्त जब हृदय म प्रविष्ट होता है तब उसे निर्बल बना देता है और इसस हृदयाघात होने में अधिक समय नही लगता है। फलत अन्य रोगो का निमत्रण मिल जाता है। इसकी अपेक्षा चढते हुए ज्वर को उतारने के लिए नौसागर स मिले हुए पानी को पट्टी का प्रयोग किया जाय तो उसस हानि नही होती।

शरीर के दाह को दूर करने के लिए जो काम बरफ नही कर सकता वह चदन बरास अथवा कपूर का विलेपन कर देता है। दाह से होने वाली प्यास सहमलिया पित्तपापडा, मिश्री का पानी, बादाम या सदल क साथ पानी पीने मे शात हो जाती है। वह बरफ के पानी स शात नही होती। पका हुआ केला गले पर बाधने से भी ठण्डक मिलती है।

आज के एक सुप्रसिद्ध डाक्टर ने बरफ के विषय म लिखा है—इस देश में बरफ ने जितनी हानि की है उतनी शायद ही किसी और चीज ने की हो। अत्यन्तशीत पदार्थ स शोप, मद मुर्छा वमन, भ्रम, तृष्णा और अरुचि जैसे अनेक उपद्रव होते हैं। पानी को अधिक ठण्डा करने के लिए उसम बरफ डाली जाती है। उससे मदाग्नि का रोग हो जाता है। खाया हुआ अन्न भली भाति पचता नहीं है। अजीर्ण हो जाता है उसस अन्य अनेक रोग जन्म लेते हैं। बरफ का उपयोग आम रस मे अथवा श्रीखड आदि में करने से वे भी अभक्ष्य बन जाते हैं।

अभक्ष्य आइसक्रीम से बचो

(निर्देशक—श्री कांति भाई भट्ट—जन्म भूमि १५-५-७३)

आइसक्रीम, बरफ और मीठे के योग से साचे मे यंत्र द्वारा अथवा हाथ से बरनी (डिब्बा) घुमाकर बनाई जाती है। जिससे असख्य मीठे के जीव नष्ट होते हैं तब दूध आदि पदार्थों के जम जाने से आइसक्रीम बनती है। इस प्रकार अभक्ष्य बरफ तथा मीठे के उपयोग जीवन निर्वाह हेतू अनुपयोगी व रोग त्पादक होने के कारण आइसक्रीम को अभक्ष्य मानना उचित है।

आइसक्रीम की बरनी (डिब्बा) साफ न हो तो वासी दूध के रस में अनेक बैक्टीरिया—रसज जन्तु उत्पन्न हो जाते हैं। उसके साथ नया दूध मिल जाने से अन्य अनेक त्रसजीवो की उत्पत्ति होती हैं। अतः त्रसजीवो के नाश के कारण आइसक्रीम अभक्ष्य गिनी जाती है। यह शरीर के लिए भी हानिकर है। गले का टासिल, स्वर की नली, अनाज नली आदि में सूजन हो जाती है। कफ से खासी, सर्दी और ज्वर हो जाता है। इस प्रकार आरोग्य के लिए हानिकर होने के कारण वैद्य आइसक्रीम, आइसफ्रूट, बरफ के गोले, वासी शरवत का निषेध करते हैं।

शरवत के पानी की बोतले मुसलमान, हरिजन, भील, रुग्ण आदि व्यक्तियो द्वारा मुह से लगी होने के कारण जूठी होती हैं। ये ठीक प्रकार से अभी साफ नही होती कि, उनमे नए पेय डाल दिए जाते हैं। इनमे समूर्छिम जीव, वासी होने के कारण और अधिक समय तक पडे रहने के कारण, चलित रस बनने से रसज त्रसजीव पैदा होते हैं। इसे पीने से तबीयत खराब होती है, रोग के कीटाणुओ का प्रभाव पडता है, आंतियो अथवा अन्न नली मे सडन, अल्सर अथवा कैंसर जैसे रोग उत्पन्न होने मे देर नही लगती।

भारत तथा विदेशो मे मिलने वाले अनेक रंगो की तथा फलो के कृत्रिम स्वाद वाली आइसक्रीम बनाने मे जिन रसायनो का प्रयोग होता है, वे शरीर के अनुकूल नही होते अपितु प्रतिकूल होते है।

बेजील एसीटेट—आइसक्रीम मे स्ट्रोबेरी नामक फल का स्वाद आता है। वह आइसक्रीम मे मिलाए गए बेजील एसीटेट से आता है। यह रसायन नाईट्रेट जैसे तेज तेजाब के साल्वेट के रूप मे प्रयुक्त होता हैं, तेज होने के कारण

यह पेट पर कुप्रभाव डालता है। हमे व पदार्थ रुचिकर लगत हैं जो स्वादिष्ट हो, कि तु उनकी पृष्ठ भूमि म कितने दु ख और पीडाएँ निहित हैं यह जानने के लिए रसायन शास्त्र के रहस्य प्रगट करें तो विदित होगा कि आइसक्रीम म भयानक पदार्थों का उपयोग होता हैं।

एमील एसीटेट—आइसक्रीम म केल क स्वाद लाने क लिए इस प्रयुक्त किया जाता है। वास्तविकता यह है कि हमारे घरो का दीवारो पर लगने वाले नायलन पेंट को पतला करने के लिए इसका उपयोग होता है। यही पदार्थ आइसक्रीम बनाने के काम आता है। इसका पाचक रस पर गभीर प्रभाव पडता है। स्वाद के लाभ म अच्छा लगने वाला और फल जसी सुगध वाला यह रसायन स्वास्थ्य की हानि करता है।

डियील ग्लूकोल—अनेक आइसक्रीम वाले यह दावा करत हैं कि व उसम अडा डालत है। इसस प्रत्यक अड म पचेन्द्रिय गभज जाव की हत्या होती है। अडे स होने वाली गभीर हानियो का वर्णन पहले किया जा चुका है। अडे की महगाई क कारण आइसक्रीम म उनक स्थान पर डियाल ग्लुकोल का मिश्रण किया जाता है जो अण्डे के स्वाद का आभास पूरा कर दता है। कुछ में कुछ लोग अण्डे का और कुछ लोग डियाल ग्लुकोल का उपयोग करत है। किसी भी पक्के रग को दूर करन म यह पदार्थ काम म आता हैं। इसलिए यह रक्त के लाल कणों पर बहुत बुरा प्रभाव डालता हैं और स्वास्थ्य कमजोर करता है

एलडी ह इड्सी १७—आइसक्रीम मे चेरी' नामक फल का स्वाद इस रसायन क मिश्रण का परिणाम है। यह आतडियो और पेट म फोडा फुसी करने वाला है। प्लास्टिक और रबड म इसका प्रयोग होता है।

इथील एसीटेट—इसका उद्देश्य अनानास का स्वाद उत्पन्न करना है। कारखाना म इसका उपयोग चमडे और कपडों को साफ करन के लिए होता है। इस उद्योग म काम करने वाले व्यक्ति, जो इथील एसीटेट की वाष्प के सपर्क हुए हैं, तब स उनके फफड़े, हृदय, और विशेषत लीवर की हानि हुई है। अनानास के स्वाद वाले शरबत और अन्य अन्य पदार्थ खान पाने के काम में आत है जिनके साथ इथील एसीटेट को उदर में स्थान देकर हम अपने आरोग्य को जानबूझकर सकट म डालत है।

बुट्रालहेड—आइस्क्रीम मे यदि महगे भाव के सूखे मेवो का उपयोग उत्पादक करे तो विक्री वढ नही सकती। अतः ने काजू, वादाम या पिस्ते का एकाध कतला टुकडा डालकर वाद मे इनका स्वाद उत्पन्न करने के लिए इस रसायन को मिला देते है। इस का असली उपयोग रवर और सीमेंट वनाने मे होता हैं आरोग्य के लिए तो यह हानिकर ही है।

पीपरोहाल—श्वेत वर्ण का वेनीला आइस्क्रीम हमे वहुत पसंद आता है। वेनीला को वनाने मे पीपरोहाल का उपयोग होता है। यह एक प्रकार का मंद गति से प्रभाव डालने वाला विष हैं। यह रसायन अनेक जन्तुओ का नाशक है। इस प्रकार ये सभी रसायन केवल स्वाद उत्पन्न करने के लिए हैं।

बालको को अथवा प्रीति भोजो मे आइस्क्रीम खिलाने से पहले उपर्युक्त बाते स्मृति पट पर अंकित रहे तो जीवन पर्यन्त अभक्ष्य आइस्क्रीम खाने की रुचि नही हो सकती। अनतज्ञानी महापुरुषो ने वस्तुत. हमे अभक्ष्य के त्याग का पाठ पढाकर हम पर महान् उपकार किया है और हमारी पूर्व रक्षा कर दी है। महा उपकार के प्रतिदान हेतु सभी को अभक्ष्य का त्याग करना चाहिए। यही स्वास्थ्य, सुख और समृद्धि का उत्तम उपाय है

११ अभक्ष्य विष
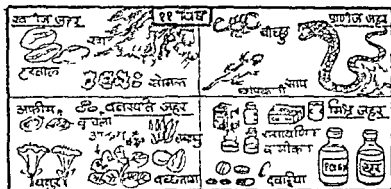
विष अर्थात् जहर। यह आहार का एक भाग नहीं है, क्योंकि पेट मे प्रवेश पाते ही यह मनुष्य के प्राणों का हरण कर लेता है। पेट में विद्यमान कृमि आदि का भी नाश करता है। अथवा भ्रम, दाह आदि दोष उत्पन्न करके धीरे धीरे वेदना देकर मार डालता है। विष स्व पर जीवों का घातक है, अतः अभक्ष्य माना गया है।

विष प्राण घातक हैं

१, खनिज विष—संखिया हरताल
२ प्राणियों का विष—सांप का, बिच्छु का विषाक्त जीवका, छिपकली का,
३ वनस्पति विष—बछनाग, अफीम विषला कोयला धतूरा अकडा
४ मिश्रक विष—तान पुट, मधु+घी, विषली औषधियाँ नारियल का पानी+कपूर, डी०डी०टी० आदि।

इस प्रकार विष मुख्यतः चार प्रकार क होते है—खनिज, प्राणीज, वनस्पतिज, मिश्रज

कुछ विष तत्काल प्राणांत कर देते हैं कुछ भ्रम, दाह मूर्छा गले की शुष्कता, सूजन आदि उत्पन्न कर धीरे २ प्राण हरण करते हैं। ये असमाधिमरण का कारण हैं, अतः अभक्ष्य है।

व्यसनी को समय पर अफीम न मिले तो चेतना मे व्याकुलता उत्पन्न होती है, क्रोध उग्र होता है। ऐसा अफीमची जहा मल मूत्र का त्याग करता है, वहा त्रस व स्थावर जीवो की हिंसा होती है।

विष खाकर आत्म-हत्या करने से अगले भव मे नरकादि तुच्छ गति की प्राप्ति होती है। इसका व्यसन मे या आत्म घात करने मे उपयोग नही करना चाहिए। जिन १५ कर्मादानो का त्याग सर्वज्ञ ने फरमाया है, उनमे विष का व्यापार भी है। इसके अनेक अनर्थ होते हैं, और आत्मा कर्म के भार से भारित होती है।

संखिया—जिन्हे संखिया खाने की आदत पड जाती है, उन्हे अधिक भोजन चाहिए। इससे विषय वासना पर नियत्रण नही रहता। उसे अत्याधिक आहार की जरुरत रहती है। फलत. स्वास्थ्य की हानि होती है।

अफीम—इसे खाने से बुद्धि तुच्छ हो जाती है, मस्तिष्क मे खुश्की बढ जाती हैं. शक्ति न्यून होती है, व्यक्ति आलसी बनता है, मुख की कान्ति क्षीण होती जाती है, मास सिकुडता है त्वचा पर शीघ्र ही झुर्रियां पड जाती हैं तथा वीर्य मे कमी होती है। अफीमची, को रात मे देर तक नीद नही आती और प्रात काफी समय तक शय्या पर पडे रहना पडता है। शौच जाने मे बहुत समय लगता है। कारण यह है कि अफीम से बहुत ज्यादा अजीर्ण होता है। अफीम की आदत भी शीघ्र नही छूटती। अत. पराधीन होना पडता है, स्वभाव भी बदल जाता है।

भयानक व्यसन से सावधान रहो

स्वास्थ्य के बिगड़ने के विषय मे विलसडे के विचार

विलसडे नामक एक अमेरिकन विद्वान ने विद्यार्थियो के स्वास्थ्य के बिगाड़ के विषय मे लिखा है —

डी. टी. टी अथवा गेमेक्सिन पावडर, विषैले रसायन वाले तरल द्रव्य -फ्लिट, टिक-ट्वेंटी, डाल्फ आदि स्व-पर उभयपक्ष के लिए हानिकारक हैं, दया के भावो के घातक है। अत. विवेक शील जनो को अपनी आत्मा के समान दूसरे जीवो को भी उसी प्रकार रक्षा करने की भावना के अभ्यासार्थ उनका त्याग करना चाहिये।

डी टी टा की फुहारें अनाज की बोरियों पर पड़ने से उनके विषैले प्रभाव के कारण मुर्गा पालन केन्द्र में २५० से अधिक मुर्गों की मृत्यु हो गई। इसकी जाँच में ज्ञात हुआ कि डी टी टी छिड़कते समय उनके अनाज में मिल जाने से यह भयंकर परिणाम सामने आया।

खेतों में जन्तु नाशक जहरीले द्रव्यों को छिड़कने वाले अनेक व्यक्ति मूर्छित हुए अथवा मर गए ऐसे उदाहरण अत्यन्त दृष्टिगोचर हुए हैं। जहरीली चीजों से चूहों, कुत्तों आदि को मारने पर उनसे प्रभावित खाद्य पदार्थों से किसानों के पशु आदि मृत्यु का शिकार बने हैं। अतः यह विवेक अत्यावश्यक है कि विषयुक्त द्रव्यों से किसी जीव की हिंसा न हो। हिंसा की समाप्ति से किसी भी देश और उसकी प्रजा का कल्याण संभव रहा है।

कालेज के छात्रों की स्वास्थ्य विकृति का मुख्य कारण अधिक अभ्यास नहीं है, असली कारण और ही है। सिगरेट अथवा बीड़ी का सेवन, तेज पेय पान अर्थात शराब, नीरा काफी, चाय आदि गर्म पावर पेट को जला देना, अनुचित आहार लेना, नाटक आदि कौतुक देखने के लिये बार बार जागरण करना, असमय में तथा परिमाण से अधिक बाहर का खाना आदि स्वास्थ्य की क्षीणता के मुख्य कारण हैं। चाय, काफी कोका, बीड़ी, चिलम, भंग, गाजा, अफीम हुक्का आदि में विष का अंश होता है अतः इनसे आरोग्य की हानि होती है। ऐसे एक भयंकर भूत को बलात् पकड़कर, उससे चिपटना और मोहान्ध होकर उसके पीछे-पीछे घिसटते जाना अपने देश और कुल को कलंकित करने वाला कृत्य है।

तम्बाकू एक जहरीला पदार्थ है। उसमें नेकोशिया कार्बोनिक एसिड और मेगनेशिया नाम की चीजें हैं, जिनसे छाती का दुर्बलता सिर का दर्द, नेत्र ज्योति में कमी आदि व्याधियाँ चिपट जाती हैं। बहुत से लोग जानते होंगे कि बीड़ी या तम्बाकू दुर्गन्ध देने वाला और रक्त शोषक पदार्थ है। इसके व्यसन से अनेक वैद्यों और डाक्टरों का आश्रय लेना पड़ता है। बीड़ी पर होने वाले व्यय की ओर से आँख मूंदकर केवल औषधियों की ओर ध्यान दिया जाये तो पता चलेगा कि धन का कितना अपव्यय होता है और हमें कितना कष्ट सहना पड़ता है।

तम्बाकू और बीडी की हानियो के विषय मे कुछ विदेशी विद्वान भी मत प्रगट करते है। उनके उद्धरण देखें :—

१. देश की परिस्थिति विषयक तथ्यो के शासकीय संकलन से ज्ञात होता है, कि प्रतिदिन के भोजन के लिए जितने धन की आवश्यकता होती है, उससे कही अधिक धन तम्बाकू के लिए चाहिए।

२. तम्बाकू मनुष्य जीवन के लिए किसी भी दशा मे हितकर नहीं है।

३. जिन किशोरो मे अभी शारीरिक परिपक्वता विकसित नही हुई, उनके लिए तम्बाकू अत्यधिक हानिकारक है। सभी डाक्टर एक मत से इसे स्वीकार करते हैं।

४. नेत्र रोगो के विशेषज्ञ डाक्टर कहते हैं, कि आँख के पर्दे पर स्थूल दर्शक शीशे से जब तेज फेंका जाता है, तब हम उसी समय बता सकते हैं, कि अमुक व्यक्ति तम्बाकू का व्यसनी है।

५. तम्बाकू के व्यसन से मनुष्य की श्रवणेन्द्रिय निष्क्रिय हो जाती है। हृदय की धड़कन तीव्र होती है और हृदय पर अनिष्ट प्रभाव डालती है।

६. तम्बाकू पीने या चबाने वाले व्यक्ति शीघ्र घबरा जाते हैं तथा छोटी-छोटी बातो से ही चिड जाते हैं।

७. शल्यचिकित्सक (सर्जन) डॉक्टर अपने अनुभव के आधार पर बताते हैं, कि शल्यक्रिया करते समय तम्बाकू के व्यसनियो मे साहस की भारी कमी देखने मे आती है और वे बहुत ज्यादा भयभीत होते हैं।

८. तम्बाकू से दात खराब हो जाते हैं, श्वास मे दुर्गन्ध आती है, पेट मे वायु पैदा होती है, चक्कर आते हैं, स्मरण शक्ति मद पड़ जाती है, हृदय मे पीडा होती है और मुख की कांति उड़ जाती है।

९. सिगरेट पीने के व्यसन से फेफड़ो मे धुआं ले जाने से और तत्पश्चात नाक द्वारा बाहर निकालने से बहुत हानि होती है।

बीड़ी सिगरेट पीने से शरीर मे गर्मी बढ़ जाती हैं जिससे शरीर सूखने लगता है, नसें तन जाती हैं, ज्ञान तन्तु निर्बल हो जाते हैं, फलत. इन वस्तुओ का सेवन करने वालों की बुद्धि व विचार शक्ति मद पड जाती है। स्वभाव भी

चिड़चिड़ा हो जाता है। आकृति कांतिहीन निस्तेज और पीली पड़ जाती है। बीड़ी पीने वाले के रक्त में आयट नाम का विष उत्पन्न हो जाता है, जिससे देह का गठन निबल होता है। वह खांसी और क्षयरोग को बढ़ाता है। आंतड़ियों में जलन और नेत्र ज्योति में ह्रास भी उसी के फल हैं जिगर को जला देना तथा श्वास का अवरोध कर रोग उत्पन्न करना भी इसी का काम हैं।

बीड़ी पीते समय तो जागृति आ जाती है, परन्तु परिणाम अत्यन्त हानिकर होता है। हमारी यह धरती स्वभावत उष्ण है अत जलवायु उष्ण होने के कारण और बीड़ी की भी स्वाभाविक उष्णता के फलस्वरूप बीड़ी हमारे लिए कभी पथ्य नहीं हो सकती। यह आयु को कम करती है। वीय को भी जला देती हैं और इस प्रकार एक व्यक्ति को संतान हीन कर देती है बीड़ी पीने से खुमारी आती है, जो आलस्य और नींद का कारण हैं। धन और वस्त्र की हानि तो बीड़ी पीने वाले प्रत्यक्ष देखते ही हैं। उनके गद्दे तकिए आदि भी जले हुए मालूम होते हैं।

कच्छ वांडिया म एक १८ वर्ष के युवक ने रात के समय सोते सोते बीड़ी सुलगाई। उसी की धुन मे सुलगती हुई दियासिलाई उसकी स्त्री की नायलोन की साड़ी में अटक गई और साड़ी जल उठी। शरीर इतना अधिक जल गया कि दो दिन म स्त्री की मृत्यु हो गई। आग को बुझाने के प्रयत्न म उसे भी दो महीने तक जलन की पीड़ा होती रही।

सज्जनो! बीड़ी स बढ़कर तम्बाकू चरस गांजा अफीम एल एस डी आदि नशीले पदार्थों का यहा और स्पष्टीकरण करने की विशेष आवश्यकता है। अफीम भी तम्बाकू के समान जहरीली चीज है। इसके उपयोग से विष मनुष्य की रगरग में प्रविष्ट हो जाता है। यह व्यसन प्राय एक दूसरे की देखा देखी मनुष्य में घर कर जाता है और आलस्य की वृद्धि के कारण बेकार बैठे बैठे हानि ही करता है। एक बार इस का रग जम जाने पर यह भूत के समान चिपट जाता है। विष को अपने हाथ में लेकर प्रसन्नता पूर्वक उसी क रग में रग जाने स बढ़कर और क्या मूर्खता हो सकती है?

तम्बाकू का चसका लगने के पश्चात् उसका त्याग करना कठिन हो जाता है, कदाचित किसी की कुशलता से त्याग हो भी जाए तो भी मन म अभिलाषा

बनी रहती है इस प्रकार की एक तुच्छ वस्तु के जाल मे फसकर मानव अपनी दुर्दशा कर डालता है। तम्बाकू के परम भक्त उसका उपयोग अनेक प्रकार से करते हैं। कोई उसे पान मे खाता है, कोई उसका मर्दन कर चूने के साथ उसे चबा चबाकर खाता है, कोई होकली (छोटे हुक्के) मे भरकर पीता है, कोई हुक्के की नली के मुह मे रखकर धूम्रपान से उसका स्वाद लेता है, कोई चिलम मे दबाकर उसका दम भरने के लिए दौडता है, कोई सुंघनी से नाक के नथुनो द्वारा हृदय भवन मे उसका प्रवेश कराता है। इस प्रकार उसका मान सत्कार करके व्यक्ति छैनाओ का सरदार बन जाता है और बाद मे स्वयं डर-पोक बन कर सिर पीट कर रोता है।

जब व्यसन के स्पष्ट परिणाम का अनुभव होता है, तब उसकी मृत्यु हो जाती है। बीडी, सिगरेट, तम्बाकू, चरस आदि ने जब उसे सर्वथा अशक्त बनाया, तब भी उसे होश न आया। अपने कृत्यो का फल उसे स्वय भोगना पडा।

तम्बाकू, गाजा, अफीम, एल०एस०डी० आदि के नशे वाली गोलियो तथा तरल पदार्थो आदि से होने वाली हानि के विषय मे डा० रिचर्डस तथा अनुभवी वैद्यो का मत है कि—

"तम्बाकू आदि के विष से रक्त मे जो विकृति होती है, वह सूक्ष्मदर्शन यत्र द्वारा किसी चिरकालीन व्यसनी के रक्त परीक्षण से ज्ञात हो जाती है। तम्बाकू आदि खाने वाले की त्वचा पीली, सफेद और फूल जाती है तथा रक्त पतला तथा कांति हीन बन जाता है। सबसे बडा परिवर्तन यह होता है कि उसके रक्त के भीतर संचारित होने वाले लालवर्ण के परमाणु तम्बाकू विकार के कारण खराब हो जाते हैं, जिससे मानव का शरीर बहुत निर्बल हो जाता है।

१. रक्त मे होने वाला प्रभाव—तम्बाकू आदि रक्त को अधिक पतला बनाते हैं, उसमे विद्यमान लाल वर्ण के रजकणो मे विकार उत्पन्न कर उसके रंग बदल देते हैं। जिससे शरीर पीला, तेजहीन तथा निर्बल बन जाता है।

२. पेट पर प्रभाव—तम्बाकू उदर को निर्बल कर देता है, इससे जी मच-लाने लगता और अधिक वमन होता है।

३. हृदय पर प्रभाव—हृदय को दुर्बल कर उसकी गति अनियमित कर देता है।

४ ज्ञानेन्द्रियों पर प्रभाव—तम्बाकू आंख की पुतलियों को चौड़ा करता है जिससे दृष्टि विभ्रम हो जाता है। जैसे कि चमकती हुई रेखाओं, धब्बों और दृष्टि बिन्दु पर अनेक प्रकार की आकृतियों का दीर्घकाल तक दिखाई देते रहना आदि। इसी के कारण कानों में आवाज स्पष्ट सुनाई नहीं देती और तेज आवाज को सहन करने की शक्ति भी नहीं रहती।

५ मस्तिष्क पर प्रभाव—मस्तिष्क का निरर्थक कूड़ा कर्कट बाहर निकालने में तम्बाकू बाधक है तथा यह मस्तिष्क में आकुलता बढ़ाता है।

६ स्नायु पर प्रभाव—तम्बाकू शक्ति का ह्रास करता है तथा रसग्रंथियों की रसक्रिया में भी कमी लाता है क्योंकि ये ग्रंथियाँ स्नायु की क्रिया से स्वाधीन होती हैं। जिससे अपचन बढ़ती है।

७ जिह्वा पर प्रभाव—तम्बाकू से जिह्वा की परत अथवा जिह्वा की घटो मोटी हो जाती है और सूज जाती है। गला भी सूज जाता है। मुख की लाली, शुष्कता और जिह्वा पर छाले पड़ते हैं। इसी प्रकार दाँत के मसूड़े स्वभावतः कठोर होकर संकुचित बन जाते हैं या शिथिल हो जाते हैं।

८ श्वास नली पर प्रभाव—तम्बाकू से श्वास नली में गर्मी उत्पन्न होती है और यह अन्दर कफ की वृद्धि करती है।

९ तम्बाकू में विद्यमान विविध विष और उनके प्रभाव —

१ निकोटिन विष—इससे कैंसर होता है।

२ कार्बन मोनोक्साइड—इससे हृदय रोग, श्वास व दमा तथा नेत्रों का तेज घटता है।

३ मार्श गैस विष—वीर्य शक्ति का नाश और नपुंसकता बढ़ाने वाला।

४ अमोनिया विष—पाचन शक्ति और हृदय बिगाड़ने वाला।

५ कोलोडीन विष—इससे चक्कर आता है व नसें कमजोर होती हैं।

६ पायरीडीन विष—इससे कब्ज होती है।

७ कार्बोलिक ऐसिड विष—अनिद्रा, स्मरण शक्ति ह्रास व चिड़चिड़ापन बढ़ाने वाला।

८ परफेरोल विष—इससे दाँत पीले, मलिन और कमजोर हो जाते हैं।

९.एजालिन या सायनोजन विष—इससे रक्त विकार होता है।

१०. पुरफुरल या प्रूसिड विष—इससे थकान, जडता और उदासीनता आती है।

इसके अतिरिक्त अन्य विषो से खांसी, टी.बी. अंतड़ियों का सूजन, लकवा, रक्त का पानी होता है।

डॉ० स्पैंस अमेरिका

१० एक सिगरेट पीने से १८ मिनट आयुष्य कम होती है।

११. तम्बाकू कैंसर जैसी भयकर व्याधिका बीज है। आज नशीली वस्तुओं के सेवन के फलस्वरूप सहस्रो रोगी कैंसर से पीडित हैं। जीवन को घटाकर मृत्यु शय्या की ओर घसीट कर ले जाने वाले सभी नशीले पदार्थ बाल्यावस्था से ही प्रतिज्ञा पूर्वक छोड देने मे आरोग्य का सुख निहित है।

१२. अभक्ष्य ओले
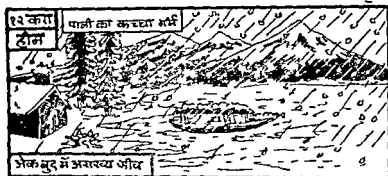
ओलों से जीव हिंसा

ओला बरफ के समान पानी के कोमल गर्भ का पिण्ड है। वर्षा ऋतु में कभी कभी ओले पड़ते हैं। ये बरफ के टुकड़ों के समान होते हैं। यह पानी का कच्चा गर्भ है जिसमें पानी के असंख्य जीव होते हैं। जीवन निर्वाह के लिए यह अनावश्यक हैं तथा बरफ के सदृश्य आरोग्य के लिए हानिकारक भी है। इसलिए ज्ञानी पुरुषों ने इसे अभक्ष्य कहा है। इसका त्याग सुलभ है। हिंसा से बचने के लिए पानी का उपयोग भी यथासंभव विवेक से करना चाहिए, आवश्यकता के बिना तो करना ही नहीं चाहिए। हिंसा से बचना, यतना अथवा विवेक रखना, पाप भीरू बनाना, ये धर्म की योग्यता को प्रकट करते हैं। जिससे आत्मा का विकास सरल होता है।

१३. सबप्रकार की अभक्ष्य मिट्टी
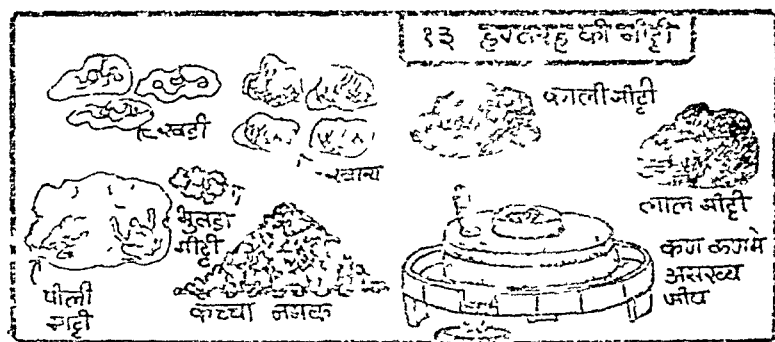
विभिन्न प्रकार की मिट्टीयां और जीव-हिसा

सभी प्रकार की मिट्टी, खडिया, चूने से मिली हुई कल्लर, कच्चा नमक आदि अभक्ष्य है। उसके कण कण मे पृथ्वी काय के असंख्य जीव होते हैं। मिट्टी और नमक मे दोष का पहला कारण है, प्रत्येक वनस्पति काय मे एक शरीर मे (पत्ता, फल-फूल,बीज) एक एक जीव है, जबकि एक हरे आँवले के परिणाम वाले पृथ्वी काय मे असख्य अगणित जीव है। यदि प्रत्येक जीव कबूतर के शरीर जितनी देह बना तो वे सब जीव इस १ लाख योजन के गोलाकार जम्बूद्वीप मे समा नही सकते। ऐसी विशेष सख्या होने पर भी वे बहुत छोटे छोटे शरीर वाले होते हैं। उनका विनाश कर अल्पतृप्ति प्राप्त करना उचित नही। इसकी अपेक्षा यही उपयुक्त है कि ऐसी चीजो का त्याग करके असख्य जीवो को अभयदान दिया जाए। इनके अभाव मे हमारी मृत्यु नहीं होने वाली है।

गर्भवती स्त्री चूने वाली मिट्टी खाये तो गर्भस्थ जीव को व्याधि होती है व हानि पहुंचती है।

मिट्टी से पथरी का रोग होता है। मिट्टी मे विद्यमान सूक्ष्म विषाक्त जीव-जन्तुओ से सैप्टिक होता है।

मिट्टी से पीलिया, पेचिस, पित्त के रोग होते हैं तथा शरीर पीला हो जाता है।

चाक, चूना, गेरू अचित है, अतः इनका उपयोग किया जा सकता है। कई प्रकार की मिट्टी मेंढक आदि सम्मूर्छिम जीवों की योनि रूप होती है। इस कारण भी वह अभक्ष्य है क्योंकि पेट मे जाने के पश्चात मेंढक व जीवों की उत्पत्ति व मृत्यु आदि महान अनर्थ भी हो जाते हैं।

कच्चा सचित नमक—खान खोद कर धरती मे निकाला गया, किसी पर्वत के शिखर रूप मे प्राप्त तथा समुद्र के पानी से आगर मे जमाया हुआ सब प्रकार का डलेदार नमक, पिसा हुआ नमक क्षार लाल, सेंधा नमक आदि अनेक क्षार तब तक उन्हें अग्निशस्त्र न लगा हो, आत्मा के परिणाम कोमल बने रहे, इसलिए श्रावक का कर्त्तव्य है कि श्रद्धा पूर्वक ऐसे नमक का त्याग करे। यदि गृहस्थो को अचित्त किया हुआ नमक बाजार में न मिले तो आवश्यकतानुसार अचित्त करा लेना चाहिए। पकती हुई दाल या शाक भाजी में डाला हुआ नमक अचित्त हो जाता है। किन्तु अचार मे मसाले म, तथा औषधि में अचित्त नमक का ही उपयोग किया जा सकता है।

आनाहार म गिने गए—शोरा माजी, सोहागा तथा फिटकरी अचित्त हैं। नमक अनेक प्रकार से अचित्त बनता है। मिट्टी के पात्र मे नमक भरकर ऊपर से अच्छी तरह पक करके या ब ° करके कुम्हार अथवा हलवाई की भट्टा में रखने से वह अचित्त हो जाता है। ऐसा नमक काफी समय तक सचित्त नही होता। नमक की योनि अत्यन्त सूक्ष्म है। अतः अग्नि का बराबर शस्त्र लगने से ही वह दीर्घकाल तक अचित्त रहता है, अन्यथा सचित्त हो जाती है।

श्री वीर विजय जी महाराज सचित्त अचित्त की सज्झाय में कहते हैं —

'अचित्त लवण वर्षा दिन सात,
सीयाले दिन पन्नर विख्यात।
मास दिवस उन्हाला माय,
आगो रहियो सचित्त ते थाय॥'

छोटी कढ़ाही, तवी या तवे पर सेके हुए अचित्त नमक की अवधि वर्षा ऋतु मे सात दिन, शीतकाल के पन्द्रह दिन, ग्रीष्म में एक मास तक है। उसके उपरात वह सचित्त हो जाता है। भगवती सूत्र के १९ वे शतक के उद्देश्य ३ मे लिखा है कि चक्रवर्ती की दासी वज्रमयी शिला पर वज्र की लीक से २१ बार नमक पीसा जाए तो भी उसमे स्थित कुछ जीवो पर अणुमात्र प्रभाव नहीं पड़ता।

नमक विषयक सावधानी—भोजन करते समय नमक लेना पड़े तो पके हुए नमक का विवेक रखना चाहिए। तले हुए चिप्स, मुरमुरे, चिवड़े, तली हुई गवारफली आदि पर पका नमक छिड़का हुआ हो तो सचित्त के त्यागी को ग्राह्य हो सकता है। यदि ठीक प्रकार से गर्म न हो तो छिड़कने से कच्चा नमक अचित्त नही बन जाता। अतः इस प्रकार के कच्चे नमक वाली बाजारी चाट, कचमूर, ककड़ी चवेना आदि का त्याग आवश्यक है।

दहीवड़ा, कचमूर, ककड़ी, मिर्च आदि पर छिड़के हुए कच्चे नमक का एक कण भी हो तो वह सचित्त है। नमक जब तक सम्यक् प्रकार से गर्म न किया जाए तब तक अचित्त नही बन पाता। अतः सावधानी रखनी चाहिए।

१४. रात्रि भोजन अभक्ष्य

रात्रि भोजन से होने वाली जीव हिंसा

सूर्यास्त के पश्चात् दूसरे दिन सूर्योदय तक चार प्रहर की रात्रि मानी जाती है। उस समय किया गया भोजन रात्रि भोजन कहलाता है।

रात्रि भोजन त्याग के प्रबल कारण—

१—सूर्यास्त के पश्चात् अनेक सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति होती है। उन्हें विद्युत प्रकाश में भी देखा नहीं जा सकता। ऐसे जीव भोजन में मिलकर नष्ट होते हैं।

२—रात को सपातिम अर्थात् उड़ने वाले मच्छर आदि जीव भोजन में मिल जाने से हिंसा होती है।

३—रात्रि भोजन से स्वास्थ्य बिगड़ता है, अजीर्ण होता है, काम वासना जाग्रत होती है प्रमाद व आलस्य बढ़ता है, प्रातः उठने की मन नहीं होता, रोग होते हैं।

४—विषले जन्तु की राल भोजन में आ जाए तो मृत्यु हो जाती है।

५—रात्रि भोजन के कारण जिस आयुष्य का बंध होता है वह तिर्यंच या नरक गति का होता है।

इस प्रकार अनेक दृष्टिकोणो मे विचार करने पर रात्रि भोजन मे अनेक दोष ज्ञात होते है। अतएव इसकी गणना अभक्ष्य मे की गई है। कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य जी योगशास्त्र मे फरमाते हैं कि रात के समय स्वच्छ-न्दरूप से विचरते हुए भूतपिशाचादि व्यन्तर देव देविय, अन्न को उच्छिष्ट कर देती हैं, अत सूर्यास्त के पश्चात् भोजन नही करना चाहिए। 'ऐसे अदृश्य देवों द्वारा उच्छिष्ट अथवा देखे गए भोजन के कारण अनेक व्यक्तियो को भूतप्रेत बाधा से पीडित होना पडता है।)

१—घोर अधकार मे नेत्र की शक्ति रुद्ध हो जाने के कारण भोजन मे पडने वाले जीव जन्तु देखे नही जा सकते अत' कौन बुद्धिमान रात्रि भोजन करेगा ?

२—रात्रि के समय छोटे जन्तु दृष्टिगोचर नही हो सकते, अत' प्राशुक आहार पानी भी नही करना चाहिए। केवली भगवान ने ऐसे आहार पानी का स्पष्ट निषेध किया है।

३—जिस भोजन मे अनेक जीव एकत्रित हुए हैं ऐसे रात्रि भोजन करने वाले मूढ जीवों का राक्षसो से पृथक कैसे किया जा सकता है ? अर्थात् वे भी एक प्रकार के निशाचर है।

४—जो दिन रात खाता ही रहता है, क्या वह व्यक्ति सीग और पूछ विहीन पशु नही है ?

५—रात्रि भोजन करने वाले मनुष्य को उल्लू, काग, बिल्ली, गिद्ध, हिरण सूअर, सर्प, बिच्छु और गोह आदि तिर्यच रूप मे जन्म लेना पडता है। यदि भाव अधिक अशुभ हो तो नरक गति सुलभ है।

६—जो मनुष्य दिन के आरभ और अत की दो घडियाँ छोडकर भोजन करता है वह पुण्य का पात्र बन जाता है।

उत्सर्ग मार्ग यह है कि प्रात. सूर्योदय के दो घड़ी पश्चात् और सांय सूर्यास्त से दो घडी पूर्व भोजन करना चाहिए। इसी लिए सिद्धात से प्रात कम से कम दो घडी की नवकारसी और रात को सूर्यास्त से पूर्व चउविहार पच्च-क्खान का विधान है।

रात्रि भोजन त्याग के कारण

१—रात्रि भोजन इस भव मे आरोग्य की हानि करता है और पर भव मे दुर्गति मे ले जाता है।

२—रात्रि भोजन सामान्य नहीं, महापाप माना जाता है।

३—रात्रि भोजन के समय रोगोत्पादक जंतुओं के भोजन में मिल जाने से कैंसर आदि रोग हो जाते हैं।

४—रात्रि भोजन करने पर धार्मिक क्रिया प्रतिक्रमण, शुभ ध्यानादि नहीं हो सकते।

५—रात्रि भोजन के कारण कई बार वैवाहिक भोज, पिकनिक पार्टी आदि में रुग्णता, वमन तथा गंभीर स्थिति उत्पन्न हुई, ऐसे समाचार दैनिक पत्रों में पढ़ने को मिलते है।

६—सूर्य के प्रकाश में वातावरण स्वच्छ रहता है, जबकि उसके अस्त होने पर अंधकार व्याप्त हो जाता है। तब अपना आहार लेने के लिए जीव जन्तु की वृष्टि आकाश में उडती है। रात्रि भोजन से उसका नाश होता है।

७—आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार सूर्यास्त के उपरांत हृदय कमल संकुचित हो जाते हैं, ऐसी स्थिति में भोजन करने से स्वास्थ्य हानि होती है स्वभाव में क्रूरता आती है तथा सूक्ष्म जन्तुओं के भक्षण से हिंसा होती है, अतः रात्रि भोजन का त्याग करना उचित है।

८—चार काम नरकगति के कारणभूत हैं—रात्रि भोजन परस्त्रीगमन, अथान बोल आचार, अनन्तकाय कन्द मूल का भक्षण।

९—अनेक पशु पक्षी भी रात्रि भोजन नहीं करते, वे रात को विश्राम करते हैं। तब इस पाप को अनन्त दुःख का मूल समझ कर मानव को भी रात्रि भोजन का त्याग करना चाहिए।

१०—दिन के समय भी अंधकार युक्त स्थान में अथवा छोटे मुंह वाले पात्र में भोजन करने से रात्रि भोजन के तुल्य दोष लगता है। अतः प्रकाश का तथा ऐसे बर्तन का विवेक रखना चाहिए जिसमें जीव जन्तु दिखाई दे सकें।

रात्रि भोजन का त्याग क्यों ?

(कुमारपाल वी शाह—जिनी पाक्षिक 'वर्धमान जैन' १५ १-७६)

मैंने अपने पारिवारिक चिकित्सक से एक दिन पूछा, 'डाक्टर साहब, आपके यहां अधिक रोगी किस प्रकार के आते हैं ? डाक्टर ने कहा कि सब प्रकार के

रोगी आते हैं। उनमे धनवान रोगी भी होते हैं और निर्धन भी। मैंने अधिक स्पष्ट कहा, 'मुझे रोगियो के आर्थिक भेद का पता नही करना है। मुझे तो यह जानना है कि रोगियो की सामान्यतः शिकायत क्या होती है?' डाक्टर ने उत्तर दिया, 'मेरे यहा औसतन् १५० से २०० रोगी प्रतिदिन आते हैं। इनमे से ८५ प्रतिशत की शिकायत मुख्यत पेट दर्द, बेचैनी की, अजीर्ण की, अनिद्रा की, जडता व आलस्य आदि की होती है। मैंने पूछा 'इसका मुख्य कारण क्या हो सकता है?' डाक्टर ने जो उत्तर दिया उससे भगवान् महावीर द्वारा आज से ढाई हजार वर्ष पहले रात्रि भोजन विषयक दिए गए उपदेश मे मेरी श्रद्धा और भी बढ गई। महावीर ने कहा था, 'चउव्विहे वि आहारे राइ भोयण वज्जणा'–अन्न, पान, खादिम और स्वादिम यह चार प्रकार का भोजन रात के समय नहीं करना चाहिए। यह त्याग वस्तुत: दुष्कर है, किन्तु दुःसाध्य नही। क्या दुष्कर होने से रात्रि भोजन का त्याग न किया जाए? तब जीवन मे क्या दुष्कर नही है। आज असह्य महगाई मे जीना भी दुष्कर हो गया है, तो क्या हम जीवन समाप्त कर देंगे? अब तक किसी ने ऐसा किया हो, यह ज्ञात नही। दुष्कर रात्रि भोजन त्याग को सरल व स्वाभाविक बनाने का प्रयत्न क्यो न किया जाए? ऐसा करना स्वहित मे है। यह कैसे, इस पर विचार किया जा सकता है।

धर्म मे रात्रि भोजन के त्याग का विधान है, अतः इसका उपहास करना शिष्टता नही। आज के वैज्ञानिको ने ही नही, विदेशी कवियो ने भी रात्रि भोजन के त्याग का अनुमोदन किया है। इटली के एक कवि की कविता का सारांश यह है :—

'पांच बजे उठना और नौ बजे भोजन करना,
पांच बजे भोजन करना और नौ बजे सोना।'

इस जीवन क्रम से ९९ वर्ष तक व्यक्ति जीवित रह सकता है।

Healing by water नामक अपनी पुस्तक में डा. हार्टली हेनेसी ने भी सूर्यास्त से पूर्व भोजन कर लेने का प्रबल समर्थन किया है।

इस प्रकार भगवान् महावीर के इस आदेश को आज के वैज्ञानिकों की भी सहमति प्राप्त हुई है। रात्रि भोजन के त्याग की बात केवल धार्मिक

मानकर हँसी में नहीं उडाई जा सकती। इसके त्याग का आधार प्राकृतिक और आरोग्य विज्ञान है। आपने कमल को खिलते और बन्द होते देखा होगा। यह सूर्य के प्रकाश से विकसित होता है और उसके अस्त होने से मुरझा जाता है। सूर्य के ताप के परिमाण वाले बल्ब से आप कमल को खिला नहीं सकते, वह सूर्य प्रकाश से ही खिलता है। प्रकृति की शक्ति असाधारण है।

सूर्य का प्रकाश हमारे आरोग्य को नव जीवन प्रदान करता है। हमें कुशल स्वास्थ्य देता है। आयुर्वेद में नाभी की तुलना कमल के साथ की गई है। जठर सूर्य प्रकाश से विकसित होता है। सूर्यास्त के पश्चात् उसकी शक्ति दिन की अपेक्षा मंद पड जाती है। जो कुछ आए उसे मंद जठर में ठूसते जाए तो पेट में दर्द या कब्ज न होकर और क्या होगा?

अयोग्य आहार अनेक विकारों का मूल है। सात्विक और पौष्टिक आहार लेना जितना आवश्यक है, उतना ही नियत समय पर आहार लेना भी। हर घंटे बाद केसर वाला दूध पीने से एक व्यक्ति दारासिंह नहीं बन जाता। इसके लिए भोजन विषयक नियमों का पालन आवश्यक है। रात्रि भोजन का त्याग आहार का एक नियम है।

रात्रि विश्राम के लिए है दूसरे दिन नई स्फूर्ति से जीने के लिए आराम करने के लिए है। मनुष्य जितनी फुर्ती से दिन के समय कार्य कर सकता है उतनी फुर्ती से रात के समय नहीं। अपवाद संभव है, परन्तु अपवाद सर्व सामान्य नियम नहीं हो सकता। रात को भोजन करने से पेट भारी भारी लगता है। चाहे हम कम खाएँ, चाहे केवल एक ग्लास दूध पीएँ। पेट के भारी होने से बेचैनी होती है। उसे दूर करने के लिए मनुष्य अकारण भ्रमणार्थ बाहर निकलता है। उद्देश्य रहित होकर नगर में आवारा घूमने का परिणाम क्या होगा? जानते हुए या न जानते हुए नगर की विलासपूर्ण चमक दमक का प्रभाव मन पर पडता है। सिनेमा और सौंदर्य प्रसाधनों के कामोत्तेजक पोस्टर आँखों में नाचने लगते हैं और निर्बल मन उनके जाल में फंस जाता है।

यदि ऐसा व्यक्ति आवारा न भी घूमे तो वह उपन्यास पढ़ेगा, सिने पत्रिकाओं का वाचन करेगा, ताश खेलेगा इस प्रकार समय नष्ट करेगा। मन में कुविचार पैदा होंगे। इसका तात्पर्य एक पक्षीय नहीं है। यह नहीं कहा जा

सकता कि रात्रि भोजन के त्यागी समय व्यर्थ नही खोते। भाव केवल यह है कि रात्रि भोजन से ऐसी वृत्तियो को अधिक प्रोत्साहन मिलता है। इस पर हमे विशेष ध्यान देना होगा।

यह बात तो पाचन तन्त्र की है आनुषंगिक प्रभाव की है। दूसरे तथ्य भी सामने हैं। रात का अर्थ है अंधेरा। नगर के मार्गों पर टयूबो का प्रकाश हो या गावो की गलियो मे गैस रोशनी हो तो भी रात अंधेरी ही होती है। इस विषय मे भगवान का कथन है—

"संति मे सुहुमा पाणा तसा अदुव थावरा;
जाइराओ अपासंतो कहेमेसणियं चरे॥ दशवै. ६।२४

ससार मे बहुत से त्रस और स्थावर प्राणी अत्यत सूक्ष्म होते हैं। वे रात्रि के अधकार मे देखे नही जा सकते। तब रात्रि भोजन हो ही कैसे सकता है?'

केवल नेत्रो से दिखाई न देने वाले अंधेरे मे फिरने वाले सूक्ष्म जन्तु होते हैं, इसका समर्थन वैज्ञानिकों ने भी किया है। बिजली के प्रकाश मे जन्तु दृष्टिगोचर होते हैं। किन्तु हम अनुभव के आधार पर कह सकते हैं कि दृष्टिगोचर न होने वाले अनेक जीवो का समूह कई बार टयूब लाइट पर जम जाता है। तब लाइट बन्द करनी पड़ती है। इस कारण रात्रि भोजन मे सूक्ष्म अथवा स्थूल जीवो के मिल जाने की पूरी सभावना है। इससे जानते अजानते हुए भी जीव हिंसा हो जाती है। यदि कोई जीव आहार का अंग बन जाए तो खाने वाले प्राणी का हरण कर लेता है। रात्रि भोजन मे हमे तो हानि पहुँचती ही है, साथ ही हम जीव हिंसा के निमित्त बनते हैं। इसीलिए भगवान महावीर ने उत्तराध्ययन सूत्र मे कहा है :—

"राइ भोयण विरओ जीवो भवइ अणासवो"

रात्रि भोजन के त्याग से जीव रात्रि भोजन के पाप से रहित अनाश्रव हो जाता है। प्रातः स्मरणीय पूर्वाचार्यो ने रात्रि भोजन को नरकगति के चार मार्गों का प्रथम द्वार माना है।

अब हमे यह निर्णय करना है कि क्या रात्रि भोजन करके पेट खराब करना है? क्या रात्रि भोजन का सेवन करके नरक गति मे जाना है? अथवा उसका त्याग करके स्वस्थ एवं अनाश्रव बनना है? वीतराग-मार्ग का आराधक बनकर कल्याण की साधना करनी है?

रात्रि भोजन के विविध नुकसान

कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य इस सदर्भ मे लिखते हैं कि रात्रि भोजन करते हुए या पकाते हुए सूक्ष्म अथवा स्थूल जीवो के उसमे गिरने की निश्चित सभावना है। उसकी विविध हानियां प्रत्यक्ष अनुभव मे आती हैं। जैसे कि १. भोजन मे जू आ जाए तो जलोदर रोग होता है। २. मक्खी गिरने से वमन होता है। ३. चीटी का भोजन मे मिल जाना बुद्धि मंदता का कारण होता है। ४. मकडी कोढ का कारण है। ५. काटा, लकडी का टुकड़ा अथवा मसाले वाले शाक मे बिच्छु गिर जाने से तलवे घायल हो जाते हैं। ६. छिपकली का अवयव या लार मिल जाने से स्थिति गभीर हो जाती है। ७. मच्छर से ज्वर हो जाता है। ८. सर्प का विष प्राणघातक सिद्ध होता है। ९. रुग्ण जन्तु कैंसर उत्पन्न करते हैं। १०. विषैला जन्तु या पदार्थ दस्त, वमन का निमित्त बन जाता है। ११. बाल (केश) स्वर भग का हेतु है। १२. व्यक्ति परलोक की आयु का बध कर उल्लू, काग, चिमगादड़, बिल्ली आदि हिंसक पशु बनता है या नरक जाता है।

सायं का भोजन कब करना चाहिए ?

प्राकृतिक चिकित्सालय के अग्रणी श्री लुई कुने ने अपनी पुस्तक 'आकृति से रोग की पहिचान' मे सध्याकालीन भोजन के विषय मे विचार प्रगट किए हैं, जो मननीय हैं।

प्राय. कहा जाता जब जब भूख लगे तब तब भोजन करना चाहिए, किन्तु यह एक प्रकार की पराधीनता और कुटेव है। कुसमय मे भोजन करने से भूख शान्त होगी परन्तु स्वास्थ्य को हानि पहुँचती है अत अपनी भूख की आदत, समय परिवर्तित करना तथा स्वास्थ्य को सुरक्षित रखना अपने वश की बात है। असमय मे लगने वाली भूख वास्तविक और सच्ची नही है। सच्ची भूख उस समय लगती है, जब सूर्य उदय के पश्चात् नाभी कमल विकसित होता है।

पशु पक्षियो को देखने से विदित होता है कि उन्हें प्रात काल पूरी-पूरी भूख लगती है और उस समय वे पूरा भोजन ग्रहण करते हैं। इसका एक प्रबल कारण है जो सूर्य के साथ बहुत सबध रखता है।

दिन के दो भाग है—एक प्रेरक, दूसरा स्तब्धक। (Animating and Tranquillising) पूर्वार्ध व उत्तरार्ध का सूर्य के साथ विकास ह्रास का क्रम रहता है। समस्त सृष्टि को क्रियाशील बनाने के लिए विकास क्रम

उत्साहित करता है। प्रत्येक पेड़ पौधे पर प्रातःकालीन सूर्य का प्रभाव पड़ता है। जिस वृक्ष पर धूप नहीं आती उस पर फल नहीं लगते अथवा बहुत कम लगते हैं, परन्तु जहा धूप ठीक तरह आती है, वहाँ विशेष रूपेण फल दिखाई देते हैं। इसी प्रकार मनुष्य पर भी सूर्य का प्रभाव महत्वहीन या अल्प नहीं है। प्रातःकाल खुली हवा में सैर करने से तन, मन प्रफुल्लित होते हैं और सूर्य की किरणों के स्पर्श से विशेष ताजगी का अनुभव होता है।

मध्याह्न का सूर्य पश्चिम की ओर ढलने लगता है, तो दूसरे भाग का आरम्भ होता है। इसमें स्फूर्ति और शक्ति न्यून प्रतीत होने लगती है। सूर्य के अस्त होने पर सबको विश्राम और निद्रा की आवश्यकता का अनुभव होने लगता है। जबकि प्रातःकाल होने पर शरीर में विशेष स्फूर्ति का अनुभव होता है और सभी कार्य तेज वेग से होने लगते हैं।

शरीर की पाचन शक्ति भी प्रभात के समय बलवान होती है। तीसरे प्रहर वह कम हो जाती है तथा सूर्यास्त होने पर उसमें और भी कमी आ जाती है। इससे यह सिद्ध होता है कि हमें अपना आहार दिन के प्रथम भाग में ले लेना चाहिए। बाद के भाग में भोजन के लिए कुछ अंश शेष रखना चाहिए और सूर्यास्त के पश्चात् किसी प्रकार का भोजन नहीं लेना चाहिए। वेदवेत्ता सूर्य को तेजोमय मानते हैं। इसमें ऋग् यजु और सामवेद इन तीनों का समावेश है। अतः सूर्य की किरणों की उपस्थिति में पवित्र होकर सब काम करने चाहिए, सूर्य के अभाव में शुभ काम नहीं करने चाहिए। उनमें भी विशेषतः भोजन तो नहीं करना चाहिए। कारण यह है कि सूर्यास्त होने पर हृदय कमल और नाभि कमल संकुचित हो जाते हैं। सूक्ष्म जीव भोजन में मिश्रित हो जाते हैं। इससे भोजन करने वाले को हानि होती है अथवा अजीर्ण तथा अन्य रोग शीघ्र निकम्मे पड़ते हैं। अतः रात्रि भोजन की आदत अपनाने योग्य नहीं है, पड़ गई हो तो वह डाक्टर उसमें सुधार करने का परामर्श देते हैं। रात्रि के समय भोजन करने से पेट भर जाता है। भरे हुए पेट की स्थिति में शरीर को वास्तविक आराम प्राप्त , म रण फुर्ती की जगह आलस्य और प्रमाद ले लेते हैं।

Healing by water के लेखक श्री टी. हार्टली हेनेसी A.R C A. का कथन है कि मानव देह पर सूर्य की रश्मियो का प्रभाव अद्‌भुत होता है। अत सूर्यास्त के पूर्व भोजन कर लेना हितकर है और वाद मे आराम करना अच्छा है। जहां सूर्य का प्रवेश है, वहां डाक्टर वैद्यो का आगमन नहीं हो सकता।

रसायन शास्त्र, शरीर विज्ञान तथा हाईजीन के भूतपूर्व प्रोफेसर एलवर्ट वेजोज एम डी. ने The philosophy of Eating मे लिखा है कि श्रम करने वाले व्यक्ति को अच्छा और पोषक गरिष्ठ भोजन तो तीन बार और वह भी सूर्योदय के पश्चात् तथा सूर्यास्त से पहले लेना चाहिए। शाम को सारे दिन के परिश्रम के कारण एक व्यक्ति श्रांत हो जाता है। उस समय भोजन पेट मे जाकर गड़बडी पैदा करता है। अत. आरोग्य व पूरी तरह नींद की सुरक्षा तथा स्फूर्तिपूर्ण जीवन जीने के लिए भोजन दिन मे ही करना चाहिए।

डा० लैफ्टेनेन्ट कर्नल ने Tuber culousis and the sun Treatment पुस्तक मे सन स्कूल के विवरण के साथ लिखा है कि सन संस्था शाम को समय पर छ. बजे भोजन कर लेती है। यह स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त अनुकूल है। सूर्यास्त के वाद का भोजन प्रतिकूल है।

डा०एस० पेरेट एम० डी० ने 'स्वास्थ्य और जीवन' नामक पुस्तक मे एक हृदय रोगी की कहानी का वर्णन करते हुए लिखा है कि इस रोगी को रात्रि भोजन के कारण वहुत वेचैनी थी। हृदय मे पीडा होती थी। उसके आहार के समय मे परिवर्तन करने से स्वास्थ्य मे सन्तोष जनक सुधार हुआ। उसने सूर्यास्त के उपरांत खाना खाना छोड दिया, फलत हृदय आदि ठीक काम करने लगे। दोपहर को कम खाने वाला और रात को ठूंस ठूंस कर खाने वाला हृदय वेदना का शिकार बन जाता है। इसे ध्यान में रखते हुए डाक्टर भी आहार का समय वदल कर स्वास्थ्य रक्षा का बहुमूल्य परामर्श देते हैं।

डा० रमेश चन्द्र मिश्र ने लिखा है कि भारत मे पेट के रोगो के लिए अयुक्त भोजन उसमे भी सूर्यास्त के वाद का भोजन उत्तरदायी है। वे कहते है कि बाह्य रूप से स्वस्थ्य दिखाई देने वाली ४० वर्षीय एक महिला से जब मैंने

पूछा तब उसने बताया कि रात को खाने के बाद सोते समय श्वास की पीड़ा होती है और शरीर पसीना पसीना हो जाता है, घबराहट होता है। इस से हृदय रोग की शंका हुई और बार बार कार्डियो ग्राम लेना पड़ा किंतु हृदय की किसी बीमारी का पता न चला इस उलझन के लिए डाक्टर ने विचार किया कि यह महिला श्रम नहीं करती। पराठे और मसालेदार शाक भाजी खा कर सोते हुए अत्यधिक वेदना का अनुभव करती है। अतः भोजन का समय सूर्यास्त से पूर्व और मसाला में कमी करके तथा श्रम और व्यायाम का परामर्श देने से दो सप्ताह में उसे पर्याप्त आराम हो गया। अधिकतर रोग रात्रि भोजन तथा अनियमित खान पान से होते हैं। दिन रात पान सुपारी चबाने से, बीड़ी सिगरेट, चाय की आदत से बाद में कसर आदि रोग स्वास्थ्य का नाश करते हैं।

रात्रि भोजन के परित्याग से धार्मिक लाभ के साथ साथ शारीरिक लाभ भी बहुत होता है। यह उभय लोक में सुखकारी हैं। दस दृष्टान्तों द्वारा दुर्लभ बताया गया यह मानव भव अनन्त पुण्य राशि से प्राप्त हुआ है। उसमें भी चिंतामणि रत्न से अधिक आत्मा का संपूर्ण रूपेण अभ्युदय करने वाला सर्वज्ञ भाषित जैन धर्म हमें उपलब्ध हुआ है, अतः कल्याण की साधना में प्रमाद छोड़ कर रात्रि भोजन आदि सब अभक्ष्यों का त्याग करना चाहिए जिससे ८४ लाख जीवायोनि के जन्म मरण रूपी दुःख से विमुक्त होकर अजर-अमर शाश्वत सुख की प्राप्ति हो।

रात्रि भोजन के त्याग की महिमा को प्रदर्शित करने वाली हंस और केशव की प्रबल बोधक कथा पर चित्त लगा कर विचार किया जाए तथा जीवन में प्रबल प्रयत्न कर घने पाप अनाचार रूपी रात्रि भोजन को छोड़कर, परम सुख के मार्ग पर बढ़ा जाए।

हंस और केशव की कथा

कुंडिनपुर नाम की एक नगरी थी। वहां यशोधर नामक एक वणिक रहता था। उसकी रूपवती भार्या का नाम रंभा था। उस की कुक्षी से दो पुत्र रत्नों का जन्म हुआ। एक का नाम हंस था और दूसरे का केशव। द्वितीया की चन्द्र कला के समान धीरे २ वृद्धि को प्राप्त होते हुए उन्होंने यौवनावस्था में पदार्पण किया। एक दिन वे दोनों उद्यान में क्रीड़ार्थ गए। भाग्योदय से वहाँ

दूसरी बात यह है कि विद्वान–पुरुष रात्रि के प्रथम आधे प्रहर को प्रदोष कहते है। अंतिम आधे प्रहर को प्रत्यूष कहते है। अत. इस समय आहार लेने मे आपत्ति नही। तुम्हे रात्रि भोजन का दोष न लगे माता–पिता की भी आज्ञा का पालन हो जाए और तुम्हारा नियम भी सच्चा रहे इस–लिए पुत्रो, अविलंब भोजन कर लो।'

यह सुन कर भूख से अधिक व्याकुल हंस ने केशव की ओर देखा। अपने बड़े भाई हंस को शिथिल और भीरु जानकर केशव ने पिता से कहा, पिताजी आपको जो इष्ट हितकर और अनुकूल हो, मैं उसे करने के लिए उद्यत हूँ, किंतु जो बात पापरूप हो वह आप के लिए सुखकर कैसे हो सकती है? फिर आपने रात्रि के प्रथम अर्ध प्रहर को प्रदोष और अंतिम को प्रत्यूष कहा है और बताया है कि इनमे रात्रि का दोष नही लगता। यह ठीक नही। वस्तुत. सूर्यास्त से पहले दो घडिया भी छोड देनी चाहिए। बुद्धिशाली व्यक्तियो को उस समय भी भोजन का त्याग करना चाहिए। अब तो रात का ही समय है। मैं भोजन कैसे कर सकता हूं? ऐसा करने से मेरे नियम का भग होगा, अत आप रात्रि मे भोजन करने का मुझे बार बार आग्रह न करे।"

केशव के ये वचन जैसे ही यशोधर के कर्ण गोचर हुए, वह बड़े आवेश मे आ गए। और केशव को अकथनीय शब्दो मे कहने लगे, 'अरे दुर्विनित, मेरी आज्ञा का उल्लंघन करते हो। घर से बाहर निकल जाओ और मुझे अपना मुह भी न दिखाना।'

पिता के आक्रोश पूर्ण वचन सुनते ही केशव तत्काल घर से बाहर चला गया। जब हंस भी उसके पीछे जाने लगा तब पिता ने उसे सहसा पकड़ लिया और मधुर शब्दो से उसे वश मे कर लिया। पिता के कहने पर हंस ने उस समय रात्रि भोजन कर लिया।

केशव ने घर से निकल कर सातवें दिन भयंकर अटवी मे प्रवेश किया उस दिन केशव का सातवां उपवास था। जब रात हुई तब उसने अनेक यात्रियो से भरपूर एक यक्ष मन्दिर देखा। वहा कुछ यात्री रसोई बना रहे थे। उन्होने केशव को देख कर कहा, हे यात्री! पधारिये पधारिये। हमारा

स्थान पवित्र करें। भोजन का लाभ प्रदान कर हमें पुण्य का भागी बनाए हमारे लिए आज का दिन सोने में सुहागे के समान है। धन्य है यह घड़ी और धन्य है यह दिवस।'

केशव ने कहा 'महानुभावों! रात को भोजन करना महापाप है। अतः मैं भोजन नहीं करुंगा। उपवास का पारणा रात में समय नहीं होता। ऐसा हो तो उपवास वास्तविक नहीं। आप उपवास का अर्थ नहीं समझ रहे हैं। धर्म शास्त्रों का आदेश है कि आठ प्रहर भोजन का त्याग करना उपवास कहलाता है। धर्म तथा शास्त्र के विरुद्ध तप करने वाला मोक्ष से वंचित रहता है।'

केशव के दृढ़ता पूर्ण वचनों को सुनकर यात्री कहने लगे, अरे भाई हमें आपकी बातें नहीं सुननी है। हमने सारी रात अतिथि की खोज की किन्तु कोई नहीं मिला। अतः हम पर अनुग्रह कर हमें लाभ दो। ऐसा कहकर वे सब केशव के चरणों में नत हो गए परन्तु केशव टस से मस न हुआ। वह अपने व्रत में अडिग रहा। उसी समय सबको चकित करने वाली घटना घटित हुई। वह यह कि यक्ष की मूर्ति में से सहसा एक पुरुष प्रकट हुआ। उसके हाथ में गदा था, उसके नेत्र अत्यन्त विकराल थे। वह बबरता से आक्रोश पूर्वक केशव को कहने लगा, 'अरे दुष्टात्मन! तू कितना निर्दय है। धर्म के मर्म से नितांत अनभिज्ञ है। तूने मेरा धर्म दूषित किया है। मेरे भक्तों का तूने निरादर किया है। भोजन करते हो या नहीं? नहीं तो इसी समय तेरे मस्तक के टुकड़े टुकड़े कर डालूंगा। केशव के लिए यह कड़ी कसौटी का समय था। ऐसे समय पर प्रतिष्ठित पुरुष भी ढीले और नम्र हो जाते हैं और कहने लगते हैं कि यह लो बापजी, भोजन करता हूं मुझे मारो नहीं। किन्तु धीर आत्मा साहस न खोकर, प्राणों की उपेक्षा कर प्रतिज्ञा का स्थिर रूप से पालन करते हैं। कुछ हंसकर केशव ने यक्ष से कहा 'तुम मुझे क्षुब्ध करने यहाँ आये हो। किन्तु याद रखो मुझे मृत्यु से भय नहीं है। मृत्यु का भय अधम और पापी जनों को होता है, कि पाप करके मरी क्या गति होगी। मैं तो धर्म के लिए प्राणों की आहुति देने वाला हूं। मेरी मृत्यु भी महोत्सव रूप होगी। परलोक में मैं सद्गति का भागी होऊंगा।

केशव के वचन सुनकर यक्ष रूष्ट हो गया और अपने भक्तो-सेवकों से कहा 'जाओ यह ऐसे नही मानता। इसके गुरु को पकड़कर यहां ले आओ। मैं इसके सामने ही इसके गुरु के टुकड़े टुकड़े कर दूंगा। क्योंकि केशव को इस मार्ग पर उसने ही अग्रसर किया है, अतः मैं उसकी खबर लूंगा।' यक्ष का आदेश मिलते ही सेवक दौड पड़े और श्री धर्मघोष नाम के मुनिवर को बालो से पकड कर यक्ष के सम्मुख प्रस्तुत कर दिया। उस समय यक्ष ने अशिष्टता से मुनिवर को कहा, "अरे मुनि ? अपने इस शिष्य केशव को समझाओ और अभी भोजन कराओ नही तो मैं इसी क्षण तुझे खड खड कर फेंक दूंगा।' यह सुनकर धर्मघोष गुरु ने केशव से कहा, केशव ! देव, गुरु और संघ के लिए अकृत्य भी करना पडता है अत. तुम्हें कुछ भी विचार करने की आवश्यकता नहीं है। अब तुम भोजन कर लो, नही तो यह यक्ष मुझे कुचल डालेगा। मेरे प्राणो का अपहरण कर लेगा, अत. मेरी रक्षा के लिए ही तू आहार ले ले।'

केशव तो तत्त्वज्ञ। वह इस प्रकार यक्ष की माया मे फस नही सकता था। उसे दृढ विश्वास था कि उसके गुरू धर्मघोष ऐसे शब्द स्वप्न मे भी नहीं कह सकते। यह सब यक्ष का प्रपंच मालूम होता है। मेरे गुरू यथार्थवादी और महा धैर्यधारी हैं। वे मृत्यु से नही डरते। अत मुझे दृढ़ विश्वास है कि ये मेरे गुरू नही हैं। यह सब कुछ यक्ष का मायाजाल है।

केशव अपने मन मे जब इस प्रकार विचार कर रहा था, तब यक्ष ने मुनिश्री को मारने के लिए गदा गठाया और कहने लगा, 'अरे केशव ! भोजन करता है या नहीं ? अन्यथा तेरे गुरू के टुकडे-टुकड़े कर डालूंगा।' केशव ने तुरंत उत्तर दिया 'यक्ष, यह मेरा गुरू नही। मेरे गुरूवर तुम जैसो से ठगे नही जा सकते। न तो वे स्वयं शिथिल होते हैं और न ही दूसरो को करते हैं। मेरे गुरू बड़े से बड़े व्यक्ति के चकमे मे आ जाएं ऐसे नही हैं। यह सब तुम्हारा प्रपच हैं।' केशव ने जब यह कहा कि यह मेरा गुरू नही है तब वह नकली बनावटी गुरू कहने लगा, 'केशव, मैं तुम्हारा गुरू हूं। मेरी रक्षा करो, नही तो यह यक्ष मेरी चटनी बना डालेगा।' उसी समय यक्ष ने गदे से मुनि की खोपडी चूर-चूर कर दी और मुनि के प्राण पखेरू उड़ गए। तो भी केशव

अपनी प्रतिज्ञा में दृढ़ अडोल रहा। यक्ष ने पुन कहा अरे समझ जा, समझ जा ! यदि तू भाजन करले ता मैं तुम्हारे मृत गुरू का जीवित कर दू और तुम्हें आधा राज्य दे दू । यदि तू नही मानेगा तो इसी गदा से तुम्हारे प्राणों का हरण कर लू गा।'

कायर व पौरूषहीन ऐसे विकट समय म साहस छोड देते हैं। किन्तु अयधारी केशव स्मित मुख से यक्ष को कहने लगा, 'हे यक्ष, मेरा गुरू ऐसा नही हो सकता, इस विषय मे मुझे दृढ़ विश्वास है। तुम अपने स्थान पर चले जाओ। किसी भी दुखावस्था में मैं अपने नियम को भग नही करूगा बल्कि प्राणो की आहुति देकर भी प्रतिज्ञा का पालन करूगा। मृतकों को सजीव करने की शक्ति यदि तुम म है तो अपने सेवकों, भक्तों और पूवजों को सजीव कर दो। मिथ्या बकवास मत करो। तुम में राजपाट देने का सामर्थ्य है ता अपने इन सेवको को राज्य क्यों नही देते ? तुम मुझे बार बार मौत का डर दिखाते हो किन्तु मृत्यु से भयभीत होने वाले और ही हैं। जिसका आयुष्य बल प्रबल है उसे मारने की किसी म शक्ति नहीं। 'धर्मो रक्षति रक्षित' धम मेरा रक्षक है।

केशव को इस प्रकार अचल, निभय और प्रतिज्ञा पालन में दृढ़ देखकर यक्ष बहुत प्रसन्न हुआ। यक्ष ने उसका आलिगन किया और उसकी दृढ़ता की भूरि भूरि प्रशसा की। यक्ष ने कहा, 'केशव यह बात सत्य है कि यह तेरा गुरू नहीं। मुर्दे को जिन्दा करने की मुझ मे शक्ति नही। न ही मैं किसी को राज्यादि दे सकता हू। यक्ष के ऐसा कहने पर मुनि के वेश में धरती पर पडा हुआ मुर्दा सहसा उठकर आकाश माग से पलायन कर गया।

सात दिन का उपवास होने पर भी तथा यक्ष द्वारा घोर उपसग के किए जाने पर भी जब वह लेश मात्र विचलित न हुआ तब यक्ष ने कहा, 'तुम विश्राम करो और प्रात काल होने पर इन सबके साथ पारणा करना' ऐसा कथन करने के साथ ही यक्ष ने अपनी माया से एक शय्या तयार की और केशव उस पर सो गया। भक्त जन उसके चरण दबाने लगे। अत्यधिक श्रांत होने के कारण वह उसी समय निद्राधीन हो गया।

कुछ समय पश्चात् यक्ष ने अपनी माया से प्रभात का समय बनाकर दिखाया, ऐसा प्रतीत होता था-जैसे कि प्रात.काल हो गया हो। यक्ष कहने लगा, केशव ! उठ, उठ सुबह हो गई है। केशव ने जब देखा तो आकाश मे सूर्य दिखाई दे रहा था। चारो ओर प्रकाश फैल गया था। केशव कुछ क्षणो के लिए विचार मे डूब गया। वह सोचने लगा कि मैं अभी अभी सोया था, क्या रात घडी भर मे समाप्त हो गई ? ऐसा हो नही सकता। यह सब यक्ष की माया है। अभी मेरी आँखों मे नीद बाकी है, श्वास मे सुगंध नही। केशव अभी विचार मग्न ही था कि यक्ष बोल उठा, 'ओ केशव; अब धृष्टता छोड़ दे और झटपट पारणा कर ले।' केशव ने उत्तर दिया, यक्षराज ! 'मैं इस प्रकार वंचना का शिकार नही बन सकता। मुझे विश्वास है कि अभी रात है, यह प्रकाश तुम्हारे मायाजाल का परिणाम है।'

जब ऐसी कठोर से कठोर कसौटी पर परखने से भी केशव चलायमान न हुआ तब यक्ष हर्षित हुआ। उसने केशव के मस्तक पर पुष्पों की वृष्टि की, गगन में जय जय शब्द गूंज उठा। अब न तो यक्ष था, न यक्ष मन्दिर और न यक्ष के भक्त जन। केशव समझ गया कि निश्चय पूर्वक यक्ष ने मेरी परीक्षा ली है। उसी क्षण यक्ष प्रत्यक्ष हुआ। उसने केशव का गुणगान किया, 'सचमुच तुम ससार मे महा पुण्यशाली और वीर पुरुषो के शिरोमणि हो। तुम्हारे जैसे पुण्यात्माओ के कारण ही यह धरती रत्नगर्भा कहलाती है।

इन्द्र महाराज ने अपनी सभा मे रात्रि भोजन के त्याग संबंधी तुम्हारी अडिग प्रतिज्ञा का वर्णन किया था। तुम्हारे धैर्य का अपूर्व कथन किया मुझे इस पर विश्वास न हुआ। इन्द्र की बात को असत्य सिद्ध करने के लिए तथा तुम्हे प्रतिज्ञा से विचलित करने के लिए मैं यहा आया। किन्तु तुम प्रतिज्ञा में स्थिर रहे, अणुमात्र भी चलित नही हुए। तुम धन्य हो। मेरा अपराध क्षमा करो। मैं तुम से प्रसन्न हूँ। मागो, जो माँगोगे देने को तैयार हूँ। यद्यपि महापुरुष की कोई अभिलाषा नही होती परन्तु तुम्हारे धैर्य और शौर्य से आकृष्ट हुआ, मैं तुम्हारे प्रति भक्ति के कारण तुम्हे दो वरदान देता हूँ कि आज से किसी भी रोगी को तुम्हारे चरणो का धोया जल लगाया जाएगा तो उसका रोग दूर हो जाएगा। तुम मन मे जो भी इच्छा करोगे, वह तत्काल पूरी हो

जाएगी।' इस प्रकार यक्ष ने केशव को वरदान दिया और उसी समय यक्ष केशव को साकेतपुर नगर के बाहर छोड कर अदृश्य हो गया।

केशव ने भी देखा कि वह किसी नगर के बाहर है। सूर्योदय होने के पश्चात् नित्य कर्म से निवृत्त होकर उसने नगर में प्रवेश किया। वहाँ नगर के मध्य भाग में एक आचार्य महाराज को देखा जो नगर के लोगों को प्रतिबोध दे रहे थे। गुरू दर्शन कर केशव अति आनंदित हुआ। गुरू महाराज को वंदना करके वह उनके सम्मुख बैठ गया।

देशना की समाप्ति पर नगर के राजा धनंजय ने गुरुदेव से निवेदन किया, गुरुदेव मेरी भावना व्रत लेने की है। अनेक रोगों से मेरा शरीर क्षीण हो गया है। अतः मैं आत्म-कल्याण करना चाहता हूँ किन्तु मेरे कोई पुत्र नहीं है। मैं अपुत्र राजगद्दी किसे दूँ ? मैं यह विचार कर रहा था कि रात को स्वप्न में एक दिव्य पुरुष ने आकर मुझे कहा कि आने वाले प्रभात में एक व्यक्ति दूरस्थ देशांतर से तुम्हारे गुरूजी के पास आएगा। वह भाग्यशाली है। तुम उसे राज सिंहासन देना। इससे तुम्हारे सब मनोरथ पूर्ण हो जायेंगे। इस स्वप्न के पश्चात् मैं तत्काल जाग उठा। प्रातःकालीन नित्य कर्म से निवृत्त होकर आपके पास आया तो इस महापुरुष के दर्शन हुए।

उस समय गुरु महाराज ने केशव के रात्रि भोजन त्याग का समस्त वृत्तांत सुनाया। तब राजा ने कहा गुरुदेव स्वप्न में आकर कहने वाला यह दिव्य पुरुष कौन होगा ?' 'राजन यह केशव की परीक्षा लेने वाला यक्षि नाम का यक्ष है। इसी ने तुम्हें स्वप्न दिया है। तत्पश्चात् केशव के साथ महाराज राज भवन में पधारे। बडी धूमधाम से केशव राज्याभिषेक किया गया। केशव वणिक पुत्र न रहकर एक महान राजा बन गया।

धर्म की महिमा अपरम्पार है। धर्म के प्रभाव से सुख, समृद्धि और दिव्य सुख स्वतः प्राप्त हो जाते हैं, किंतु हम तो माला गिनना शुरु करते हैं और गगन में ऊँचे देखने लगते कि स्वर्ण मुद्राओं की वर्षा कब होगी। हमें न तो दृढ़ निश्चय रखना है न कसौटी पर खरे उतरना है और न ही नियमों का पालन करना है। यदि हम तत्काल धन, सुख और समृद्धि की अभिलाषा रखते हैं तो यह आकाश कुसुम की कल्पना के समान व्यर्थ है।

केशव के राज्याभिषेक के बाद वहा के राजा ने गुरू महाराज के पास दीक्षा ग्रहण की। धर्मात्मा राजा के शुभागमन से प्रजा मे अपूर्व आनन्द छा गया। राजा केशव प्रतिदिन प्रभु की पूजा करने लगा। दीन दु खियो को देखकर उसके हृदय मे दया व करुणा की तरगे उछलने लगती थी, उसके द्वार दीनो के लिए खुले थे।

ऐसे एक पुण्यशाली राजा के पुण्य से आकृष्ट होकर सीमा प्रदेश के राजा भी उसकी आज्ञा मानने लगे। राजा केशव न्याय नीति से राज्य का पालन करता था, उस राज्य की प्रजा आनन्द विभोर हो गई।

एक दिन राजा केशव राजप्रासाद के झरोखे से नगर की शोभा देख रहे थे। उन्हे अपने पिताजी की स्मृति आई और उनके दर्शन की उत्कठा जागृत हुई। सज्जन पुरुष कभी भी सज्जनता का त्याग नही करते, यद्यपि पिता ने उसे घर से निष्कासित कर दिया था तथापि उस बात को विस्मृत कर पिता के दर्शनो की अभिलाषा महान श्रेष्ठता की द्योतक है। वर्तमान काल पर दृष्टि पात करें तो ज्ञात होगा कि आज के बालक क्या क्या अनुचित कार्य नही करते।

केशव के हृदय मे पितृ-दर्शन की अभिलाषा उत्पन्न होने पर उसके पिता राजमार्ग से जाते हुए दृष्टिगत हुए। उनका मुख क्षीण था, वस्त्रों का बुरा हाल था। केशव ने शीघ्र ही उन्हे पहिचान लिया। वह राजभवन से नीचे उतरा और उनके चरणो मे नत हो गया। राजा के पीछे अनेक सेवक दौडकर आ गए। पिताजी की विषम स्थिति देखकर केशव का हृदय भर आया। राजा केशव ने कहा—

'पिताजी, आप समृद्धशाली थे, आज आप रक समान कैसे दिखाई दे रहे हैं?' जब केशव के पिता यशोधर को यह ज्ञात हुआ कि उसका पुत्र राजा बन गया है, तब उसके नेत्र हर्ष और शोक से सजल हो गए। 'पुत्र केशव! तुम्हारे घर से निकल जाने के पश्चात मैंने हस को रात्रि भोजन के लिए बिठा दिया कुछ जीमने के पश्चात वह उसी समय भूमि पर लेट गया तथा मूर्छित हो गया। उसकी माता ने वास्तविकता जानने के लिए दीपक जलाया, कि बात क्या है? भोजन की थाली मे देखा तो पता चला कि भोजन विष से

मिश्रित हो गया था। माता ने जैसे ही ऊपर के भाग पर दृष्टि डाली, उसने ऊपर के मुडेर पर एक विषला साप देखा। माता समझ गई कि इस सर्प के मुख से निश्चय विष भोजन म पडा है। उससे भोजन विषाक्त हो गया है। हस को यह अवस्था देख कर हम सब करूण क्रन्दन करने लगे। उस समय एक विष वैद्य आ गया। मैंने उससे पूछा कि महाराज,— यह विष किसी भी प्रयोग द्वारा दूर हो सकता है या नहीं ? तब उसने सविस्तार बताया कि जो विष अमुक वार, अमुक स्थिति में, अमुक नक्षत्र मे चढा हो *वह उतर सकता है और जो अमुक वार, अमुक नक्षत्र में अमुक तिथि म चढ़ा* हो वह नहीं उतर सकता। उसने यह भी बताया कि सप ने हस को डसा नही है कितु सप का गरल उसके पेट म गया है। अत यह बात विचारणीय है।

मैंने वद्यराज स पूछा, क्या कोई ऐसा उपाय है जिससे हस बच सकता है। तब वद्य ने मत्र का आह्वान करके कहा कि तुम्हारा उपाय इस विषय में सफल नही होगा, तुम्हारे सभी प्रयत्न निष्फल होंगे। सप का विष धीरे धीरे इसके शरीर म व्याप्त होगा और इसक प्राण लेकर ही रहेगा। एक मास मे इस बालक का शरीर गल जाएगा और अन्त में यह मृत्यु धाम पहुँच जाएगा। वद्य के वचन सुनकर हमारे होश हवास उड गए। हस को एक शय्या पर सुला कर मैं पांच दिन तक देखता रहा कि क्या घटना घटित होती है। पांच दिन बाद देखा कि हस के शरीर म छिद्र हो गए थे। सच्ची बात यह है कि तुम्हारे जाने के बाद हम सब विकट स्थिति में फस गए। तुम्हारी तलाश में घर से बाहर निकल कर नदी नाले लांघ कर जगलों को पार करत हुए मैं इस नगर में पहुचा हू। पुण्य योग से यहाँ तुमस मिलन हुआ। मुझे घर से निकले लगभग एक मास हो गया है। वद्य के अनुसार हस अधिक जीवित नहीं रहेगा।

पिता के मुख से हस की बात सुनकर राजा केशव को अत्यन्त दुख हुआ। उसने विचार किया कि यहा से हमारा नगर लगभग सौ योजन दूर होगा। क्या मैं अपने भाई का मुख नहीं देख सकूंगा? जैसे ही उसके मन म यह विचार आया वैसे ही केशव और उसके पिता अपने ही घर में हस के पास जाकर

खड़े हो गए। क्योकि केशव को यक्ष से यह वर प्राप्त था कि तुम मन मे जो भी विचार करोगे मैं यही बैठे हुए तुम्हारा मनोरथ पूर्ण कर दूंगा। केशव ने हस के शरीर को जीर्ण-शीर्ण अवस्था मे देखा। सारी देह सड़ गयी थी। उसकी दुर्गंध चारो ओर फैल रही थी। कोई भी व्यक्ति उसके पास खडा होने के लिए तैयार न था। केवल उसकी माता उसके समीप बैठी थी। जिसकी आंखो से अश्रुधारा वह रही थी और वह विलाप कर रही थी। हस के निकट ही साक्षात् मृत्यु आकर खडी हो, ऐसा आभास हो रहा था। सब निराश हो चुके थे। हस इस मृत्यु लोक मे नरक जैसी भयकर वेदना का अनुभव कर रहा था।

केशव सोचने लगा कि मैं यहाँ कहां से? जैसे ही उसने यह विचार किया वैसे ही वह्निदेव दिखाई दिया। उसने कहा, मित्र, मैं ही तुम्हे वहाँ से उठाकर यहा लाया हूँ।' यह कहकर वह उसी क्षण अदृश्य हो गया।

तदुपरांत केशव ने हाथ मे जल लेकर उसे हस के शरीर पर छिडका। केशव के हाथ के स्पर्श के जल ने हस के शरीर पर पड़ते ही जादू सा प्रभाव दिखाया और कुछ पलो मे ही हस रोग से मुक्त हो गया। यही नही, वह स्वस्थ होकर बैठ गया उसका शरीर पूर्ववत बन गया।

यह बात सारे नगर मे विद्युत वेग से फैल गई और रोगो से ग्रस्त अनेक लोग वहा आ पहुँचे। परोपकारी केशव ने उन सब पर अपने स्पर्श का जल छिडका और सबको व्याधि से छुटकारा दिलाया। माता पिता के हर्ष की सीमा ही न रही। नगर की जनता भी हर्ष के मारे फूली न समाई। सर्वत्र केशव की जय जयकार होने लगी। धर्म की महिमा प्रसारित हुई। अनेक व्यक्तियो ने रात्रि भोजन के त्याग का नियम लिया। धर्म का प्रत्यक्ष प्रभाव देखकर जनता धर्म मार्ग पर आरूढ हुई।

राजा केशव अपने सगे सबधियो, माता पिता और स्नेही जन को अपनी राजधानी साकेतपुर ले आया। धर्मनिष्ट राजा के राज्य मे प्रजा आमोद प्रमोद मे रत हो गई। राज्य, समृद्धि और वैभव धर्म के प्रभाव से स्वमेव चरणो मे वापिस आ जाते हैं, यह बात सबको ज्ञात हुई। राजा केशव ने अनगिनत आत्माओ को धर्म के मार्ग पर अग्रसर कर सबको इस बात का ज्ञान करवाया कि कल्याण राज्य कैसा होता है। दीर्घकाल तक राज्य ऋद्धि का

भोग कर तथा श्रावक के व्रत ग्रहण करके वैभव यशस्वी, उज्जवल और धर्म मय जीवन बिताकर स्वर्ग लोक सिधारा। रात्रि भोजन त्याग की यह प्रभाव शाली कथा हमारे लिए प्रेरक है। रात्रि भोजन के त्याग की यह प्रभावक कथा हमें रात्रि भोजन त्याग की प्रेरणा देती है त्याग का महत्व प्रकट करती है यह भी ज्ञान कराती है कि रात्रि भोजन के कारण इस लोक में भी कितना भयंकर दु:ख, घोर वेदना और पीड़ा सहनी पड़ती है। इससे हमें अपूर्व सद्बोध प्राप्त होता है।

रात्रि भोजन महा पाप है, इस बात की साक्षी स्वरूप निम्नलिखित कथा भी है —रामायण में लिखा है कि राजा महीधर की वनमाला नाम की पुत्री का विवाह वनवास में लक्ष्मण के साथ हुआ। तत्पश्चात् लक्ष्मण ने वनमाला से कहा, अभी तुम्हें अपने पिताजी के घर रहना है क्योंकि हम वनवास में हैं। वनवास पूरा होने पर वापिस जाते हुए, मैं तुम्हें ले जाऊंगा।' इस विषय में लक्ष्मण ने दूसरी स्त्री, ब्राह्मण, गोहत्या आदि की अनेक सौगंध ली, परन्तु वनमाला सन्तुष्ट न हुई। तब लक्ष्मण ने कहा 'यदि मैं तुम्हें लेने वापिस न आऊं तो मुझे वह पाप लगे जो रात्रि भोजन से लगता है। तब वनमाला ने अनुमति दी। इससे भी ज्ञात होता है कि रात्रि भोजन से भयंकर कर्म बंध होता है। अनेक जीवों की हिंसा के अतिरिक्त आरोग्य भी बिगड़ जाता है। रात्रि को भोजन करते समय दीपक होते हुए भी सूक्ष्म जीव दिखाई नहीं देते। उनकी हिंसा तथा होने वाले दोषों से बचने के लिए रात्रि भोजन का त्याग ही उचित है।

एक का नियम अनेक के लिए सुख प्रद बना

गुलागन नामक गांव में पदु आदि तीन भाई रहते थे। तीनों कृषि कर्म करते थे। सत् संगति के कारण पदु धर्म परायण था। एक बार वह वर्षा के कारण खेत में बनी हुई झोंपड़ी में ठहरा रहा। बरसात के कारण एक साधु महात्मा उसकी कुटिया के पास आकर खड़े हो गए। पदु मुनिश्री को देखकर हर्षित हुआ। उठकर कुटी के भीतर ले गया और करबद्ध नमस्कार किया। मुनिजी ने धर्मोपदेश में रात्रि भोजन के त्याग की विशेषतः प्रेरणा की, तथा बताया कि इससे अनेक अनर्थ व जीव हत्या होती है।

पट्टु लघुकर्मी था, उसे धर्म मे रुचि भी थी। साधु के उपदेश का उस पर सुन्दर प्रभाव पड़ा और उसने आजीवन रात्रि भोजन का त्याग कर दिया। वर्षा बन्द होने पर मुनि जी उपाश्रय मे आ गए और पट्टु अपने घर।

तदन्तर ऐसी घटना हुई कि उसी दिन पर्व दिवस होने के कारण खुशी मनाने के लिए मिठाई बनाई गई थी। सभी रात के समय भोजन करने बैठने लगे किन्तु पट्टु ने इनकार कर किया और कहा कि रात्रि भोजन न करने का मेरा नियम है।

सभी भाइयो मे परस्पर प्रेम भाव था। एक भाई न खाए तो दूसरे भी भोजनार्थ कैसे बैठ सकते थे ? अत: किसी ने भी रात्रि भोजन न किया। जब भाइयो ने खाना नही खाया तो उनकी पत्निया कैसे खा सकती थी ? एक के त्याग से स्वत: ही छ: छ. आत्माओ को रात्रि भोजन के त्याग का लाभ मिला।

उनमें से किसी ने भी रात्रि भोजन नही किया। यदि करते तो सबके प्राण जाते। धर्म की प्रतिज्ञा क्या क्या काम करती है, धर्म का कैसा अद्‌भुत प्रभाव है। रात को मिष्ठान्न बनाते समय अंधेरे मे पता न चला, ओखली मे साप के कण थे, वे कूट लिए गए। सांप के बच्चे के टुकडे-टुकडे हो गए और विष मिठाई मे मिल गया। प्रात: सब ने इसे आखो से देखा। सब विस्मित हुए, यह क्या ! अच्छा हुआ कि पट्टु के रात्रि भोजन त्याग के कारण हम सबने भी भोजन नही किया। फलत. सबके प्राण बच गए। धर्म मे उनकी आस्था दृढ हुई। सबने बडे भाई के नियम की प्रशसा की और स्वय भी वैसी प्रतिज्ञा की।

पट्टु आदि ने जैन धर्म मे श्रद्धा रखकर मुनि जी से मूल १२ व्रत ग्रहण किए। सब श्रावक धर्म की आराधना करने लगे। अन्त मे मरकर देवलोक मे उत्पन्न हुए और यथा समय मोक्ष पद प्राप्त करेंगे।

रात्रि भोजन के त्याग की प्रतिज्ञा कितना महान कार्य करती है और कितना बडा लाभ होता है। व्यक्ति किस प्रकार मृत्यु के मुख से बच जाता है। सच है, जो धर्माचरण करता है, वह सर्व प्रकार सुखी होता है। जो आत्मा धर्म

की उपेक्षा कर रात्रि भोजनादि अभक्ष्य अपराध करता है वह सब तरह से दुःखी होती है।

रात्रि भोजन महा पाप है, इस विषय मे शास्त्रीय प्रमाण

(१) नरक के चार द्वारों में प्रथम रात्रि भोजन दूसरा पर–स्त्री–गमन तीसरा बोल आचार (बाल गुजराती बोली में आचार वा काठियावाड प्रदेश का पारिभाषिक शब्द है। बोली के अंतिम अक्षर का द्योतक देवनागरी में भी नहीं है यह शब्द उस आचार के लिए प्रयुक्त होता है जिसमें खमीर उठ गया हो या भयो मिली हुई हो। यह अभक्ष्य है।) चौथा अनन्तकाय का भक्षण।

(२) महाभारत में लिखा है जो मांस, मदिरा रात्रि भोजन तथा कदमूल अर्थात् अनन्तकाय का भक्षण करते हैं, उनके द्वारा आचरित तप, जप, वृथा हो जाते हैं।

(३) मार्कण्डेय पुराण में मार्कण्डेय ऋषि का कथन है कि दिवानाथ सूर्य के अस्त हो जाने पर पानी पीना रुधिर पान के समान है और भोजन करना मांस भक्षण के समान है।

(४) स्वजन सगे संबंधी आदि की मृत्यु होने पर मनुष्य को सूतक लगता है। तब दिवस के नाथ सूर्य का अस्त होने पर भोजन कैसे किया जा सकता है ? रात्रि भोजन सर्वथा वर्ज्य है।

(५) मदिरा, मांस, रात्रि भोजन तथा कंमूल का सेवन करने वाले नरक जाते हैं। इनके त्यागी देवलोक में जन्म लेते हैं।

(६) रात्रि भोजन के दोषों को जानने वाले महानुभाव दिन के प्रारम्भ और दिन के अन्त की अर्थात सूर्योदय के पश्चात की दो घड़ी और सूर्यास्त होने से पहले की दो घड़ी छोड़कर भोजन करते है। यह पुण्य भोजन है।

(७) हे युधिष्ठिर! देवता दिन के प्रथम भाग में, ऋषि मध्याह्न में पितर तीसरे प्रहर में, दैत्य और दानव शाम को तथा यक्ष और राक्षस संध्या वेला में भोजन करते हैं। देवादि के ये सब भोजन के समय है इन सब समयों का उल्लंघन करके रात्रि भोजन करना वस्तुतः अभोजन है यह अधम कृत्य है तथा सर्वथा वर्ज्य है।

(८) रात्रि भोजन करने से मनुष्य उल्लू काग, बिल्ली, गीध साम्भर, हिरण, सुअर, सर्प, बिच्छू आदि बनता है।

एक महापुरुष ने कहा है .—

'रात्रि भोजन मां दोष घणा रे, सो कहिए विस्तार,
केवली कहता पार न आवे पूर्व कोडी मोझार रे।
प्राणी रात्रि भोजन मत करो रे।

(रात्रि भोजन मे अनेक दोष हैं, विस्तार मे क्या कहे ? एक करोड पूर्व वर्षों मे केवली कथन करें तब भी पार नही आता। हे प्राणी ! रात्रि भोजन मत कर।)

(९) रात्रि भोजन का त्याग करने वाले पुण्यात्माओ को एक मास मे १५ उपवास का फल मिलता है।

(१०) हमेशा के लिए रात्रि भोजन का त्याग करने वाले भव्यात्मा वस्तुत धन्यवाद के पात्र है। इससे आधे जीवन के उपवास का फल प्राप्त होता। इस त्याग के गुणो का वर्णन सर्वज्ञ भगवान को छोडकर दूसरा नही कर सकता, वही इसके लिए समर्थ है।

—योगशास्त्र

(११) ससार मे यह न्याय की बात है कि ब्याज की शर्त न करने पर लगाई गई पूजी का ब्याज नही मिलता। इसी प्रकार रात्रि भोजन के त्याग की प्रतिज्ञा के बिना लाभ प्राप्त नही होता चाहे हम रात को न खाते हो।

(१२) कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य का कथन है कि जो मनुष्य दिन का भोजन छोडकर रात को ही भोजन करते है वे मानक मोती का ऊर त्याग काच ग्रहण करते है। दिन के विद्यमान होते हुए भी जो सुखेच्छा से रात्रि भोजन करते हैं वे मानो मीठे पानी से भरी हुई क्यारियो के होने पर भी खारी भूमि वाले क्षेत्र मे धान बोने जैसा काम करते है—अर्थात् वे मूर्खतापूर्ण कार्य करते हैं।

(१३) जिस भोजन मे अनेक त्रसजीव एक साथ मिश्रित है ऐसे रात्रि भोजन को करने वाले मूढ जीवो को निशाचर राक्षसो से पृथक कैसे किया जा सकता है ? अर्थात् वे राक्षसो से भिन्न नही।

(१४) रात के समय स्वच्छद विहार करने वाले प्रेत पिशाचादि व्यतंर व्यतरी अन्न को जूठा कर देते हैं। उससे भूत प्रेत बाधा की पीडा हो जाती है। अत सूर्यास्त के पश्चात् भोजन करना सर्वथा अनुचित है।

(१५) घोर अधकार से नेत्रों की शक्ति रूद्ध हो जाती है। फलत भोजन मैं पड़ने वाले सूक्ष्म जतुओं को हम देख नहीं पाते। रात के समय अनथकारी भोजन कौन करेगा।

(१६) जैन न्याय ग्रंथ 'रत्नाकरावतारिका मे लिखा है'—
'जनेन रात्रि भोजन न भजनियम्' जिन के अनुयायियों को रात्रि भोजन नहीं करना चाहिए। वीतराग की आज्ञा मानने और पालने वाले कृतकृत्य हो जाते हैं सब दुखो से मुक्त हो जाते हैं।

(१७) जब दिन का आठवां भाग शेष रहता है तब सूर्य का तेज मन्द पड़ जाता है, सूर्य पश्चिम की ओर ढलता है। जैनेतर शास्त्रो मे उस समय के भोजन को नक्त' भोजन कहा जाता है। उसका निषेध किया गया है। इससे सिद्ध है कि रात्रि भोजन का सम्पूर्ण रात्रि से त्याग आवश्यक है।

(१८) हे युधिष्ठिर! तपस्वियों और विवेकशील गृहस्थियों को रात में पानी नहीं पीना चाहिए। रात्रि भोजन की तो बात ही क्या?

(१९) हे सूर्य! तुम इस समस्त जगत मे व्याप्त हो। तुम त्रिलोक के प्राणियों द्वारा ध्यान करने योग्य हो। अत हे देव! जब तुम अस्त होते हो तब जल भी रुधिर के समान कहा जाता है। जब पानी भी रक्त के सदृश है, तब रात्रि भोजन करने मे महादोष लगे, यह स्वाभाविक है।

(२०) स्वपर धर्म शास्त्रों मे निन्दित, नरक के प्रथम द्वार तुल्य रात्रि भोजन पाप रूप है। सबने ही इसके त्याग का आदेश दिया है।

(२१) निशीथ सूत्र भाष्य मे कहा है कि रात के समय सूक्ष्म जीव देखे नही जा सकते अत प्रासुक मोदक, खजूर आदि पदार्थ भी नही खाने चाहिए। लड्डू आदि पर उत्पन्न होने वाली पाँच वर्णों की इल्ली मे से किसी भी वर्ण की इल्ली अथवा सूक्ष्म कुंथु आदि की विराधना हो सकती है। अत यह अनाचरणीय है तथा मूल व्रत का विराधक है।

(२२) जो मनुष्य सदा एक बार भोजन करता है वह अग्निहोत्र का फल प्राप्त करता है। जो सदैव सूर्यास्त से पूर्व भोजन कर लेता है उसे तीर्थ यात्रा का फल मिल जाता है।

(२३) रात्रि के समय राक्षसादि धरती तल पर जहाँ तहाँ स्वेच्छा से विच-

रण करते हैं। वे भी रात्रि भोजन करने वालों के प्रति उपद्रव कर सकते हैं।

(२४) रात को भोजन करने के पश्चात् जूठे वर्तन उसी तरह पड़े रहते हैं। उनमे असख्य सर्मूछिम पचेन्द्रिय जीव उत्पन्न होते हैं, और मरते हैं, उडते हुए जीव भी गिरकर मरते हैं। यह बहुत बडा दोष है। अत संघ भोजन, जाति भोजन आदि दिन के समय ही कर लेना उचित है। उसमे किसी प्रकार का अभक्ष्य न हो, इस बात की सावधानी जरूरी है।

चउविहार, तिविहार, दुविहार का ज्ञान

आहार चार प्रकार का माना गया है—(१) अशन (२) पान (३)खादिम और (४) स्वादिम। उनमे उदर पूर्ति करने वाले रोटी, चावल, पकवान, दूध आदि पदार्थ अशन कहलाते हैं। स्वच्छ जल पान कहलाता है। फल और सूखे मेवे जो आंशिक उदर पूर्ति कर सकते हैं, खादिम है। जो पदार्थ मुख की सुगधि (वास) के योग्य हैं वे स्वादिम गिने जाते है। सूर्यास्त होने पर इन चारो प्रकार के आहार का त्याग करना चाहिए।

(१) इन चारो आहार के त्याग का पच्चक्खान चउविहार है। (२) जिसे केवल पानी की छूट रखकर अशन, खादिम, और स्वादिम का त्याग सूर्यास्त के साथ करना है, वह तिविहार पच्चक्खान लेता है। (३) जिसे पानी और स्वादिम मे औषधि की गोली आदि लेनी पडती है, वह सूर्यास्त से पहले अशन और खादिम का त्याग कर दुविहार का पच्चक्खान ग्रहण करता है।

भोजन के शुद्ध भाग

(१) दिन मे बनाया हुआ भोजन रात को खाना-अशुद्ध

(२) रात को बनाया हुआ रात को खाना-अशुद्ध

(३) रात को बनाया हुआ दिन मे खाना-अशुद्ध

(४) दिन के समय यतना-विवेक-पूर्वक बनाया हुआ भोजन दिन मे खाना यही एक शुद्ध भाग है।

सूर्यास्त से पहले चारो आहार का त्याग कर देना उत्तम है। सूर्यास्त के निकट के समय मे जब यह भ्रम हो कि सूर्यास्त हो गया है या होने वाला है, सूर्य अत्र है या नहीं, तब भी भोजन नहीं करना चाहिए। जिस समय आकाश मे बादल हो उस समय सूर्यास्त के समय का ध्यान रखना चाहिए तथा बंध-

कार वाले स्थान में भोजन नहीं करना चाहिए। प्रत्येक नगर में सूर्यास्त के समय में कुछ-कुछ अन्तर होता है। इसलिए सर्वोत्तम मार्ग यह है कि सूर्यास्त से पूर्व की दो घड़ी छोड़ दी जाएँ। अंत में सूर्यास्त से पांच मिनिट पहले चारों आहार का त्याग किया जाए तो पच्चक्खाण शुद्ध होता है।

स्वाध्याय

प्रश्न १ हिम बरफ, ओले किस लिए अभक्ष्य माने जाते हैं ?

२ आइस्क्रीम क्यों अभक्ष्य है ? इससे क्या हानियाँ होती हैं ?

३ विष की अभक्ष्यता और विषैले पदार्थों के दोष लिखो ?

४ तम्बाकू आदि व्यसन क्यों हानिकारक हैं? विलसडे और डा. रिचर्ड्स के अनुभव भी लिखो ?

५ मिट्टी खाने से क्या हानि होती है ? नमक के विषय में किन किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ताकि सचित्त का भोगा न लगे ?

६ रात्रि भोजन महा पाप क्यों है ?

७ रात्रि भोजन से क्या अनर्थ होते हैं ?

८ रात्रि भोजन के विषय में डाक्टर तथा धर्म शास्त्र क्या कहते हैं ?

९ रात्रि भोजन के त्याग के विषय में हंस और केशव की कहानी प्रेरक शैली में लिखो।

अभक्ष्य बहुबीज
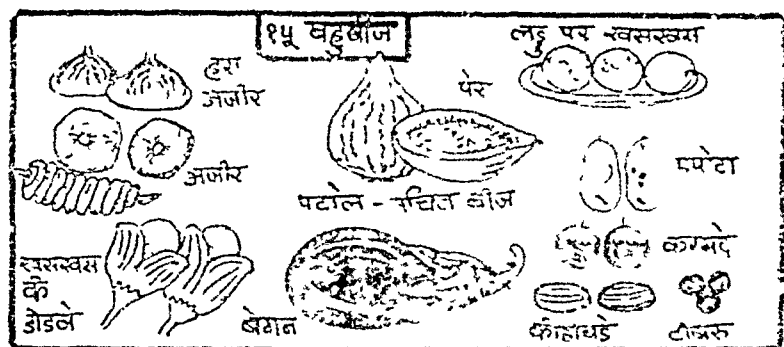
बहु वीज फल

जिन फलो और शाक मे दो बीजो के बीच अन्तर पट (पर्दा) न हो अर्थात् बीज ही बीज सटे हुए हो, जिन फलो मे भी इस प्रकार से बीज हो, जिनमे गूदा कम और बीज अधिक हो, जिनके बीजो के रहने के लिए पृथक-पृथक स्थान न हो उन्हें बहुबीज समझना चाहिए। जैसे कि चिव्वड, टीवरू, करोदा (बीज पैदा होने से पूर्व अनतकाय), बैंगन, खसखस, राजगर, पपोटा, पटोल, हराव सूखा अंजीर आदि जिनमे विपुल सूक्ष्मबीज हैं। बीज बीज मे सूक्ष्म जीव होते हैं। बहुबीज वाले पदार्थ पित्त का प्रकोप करते है। आरोग्य की दृष्टि से भी उनका त्याग करना चाहिए, जिनमे खाने का अंश कम हो और जीव हिंसा अधिक हो ऐसे पदार्थो का त्याग ही उत्तम है। अनेक सम्यक जीवो की हिंसा से बचना चाहिए।

१६. अभक्ष्य अनन्तकाय
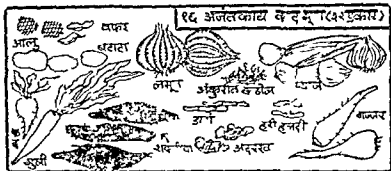
अनत काय और अनत-जीवी फल

वनस्पति के दो प्रकार हैं—(१) प्रत्येक वनस्पति काय—जिसके एक शरीर में एक जीव होता—फल, फूल छाल, तना, काष्ठ, मूल, पत्ता, बीज में अलग-अलग एक जीव होता है। (२) साधारण वनस्पति काय–जिसके एक शरीर में अनत जीव होते हैं।

अनंत काय वनस्पति की पहिचान के लक्षण —गूढ़ सिर-संधि पव्वं समभंगमहीरुगं च छिन्नरुहं साहारणं शरीर।–जिस वनस्पति के पत्र, फलादि प्रमुख भाग की नस तथा संधि का पता न लगे, गांठ छिपी हुई हो, जो तोड़ने पर ठीक तरह टूट जाए और टूटने पर उसी समय चूरा हो जाए, अथवा मुड़ जाए तात के रेशे न हो, काटने पर पुन उग जाए उसे साधारण वनस्पति समझना चाहिए। उसके एक शरीर में अनत जीव होते हैं। एक अणु में असंख्य शरीर होते हैं और प्रत्येक शरीर म अनत जीव होते हैं।

इस प्रकार कन्द मूलादि अनत काय म अनत जीवों का नाश होने से इन्हें अभक्ष्य माना गया है। उनके सम्पूर्ण त्याग से अनत जीवों को अभयदान प्रदान करने का फल मिलता है।

हमें बाद अनत जीवों को कुचलने के लिए नहीं मिले, अन्यथा अनत जीव राशि के नाश से भवान्तर में जिह्वा की प्राप्ति दुलभ है, एकेन्द्रियता

सुलभ होगी। वहां जाने पर जीव असख्य अथवा अनंत उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल व्यतीत करता है। एकेन्द्रिय जीव प्रगट रूप से कोई पाप नहीं करता, किन्तु मन के अभाव मे किसी प्रकार का धर्म उनसे नही होता। जीव कर्मो का बंधन करता रहता है और दीर्घ काल तक छेदन-भेदन, गर्मी सर्दी आदि के कष्टो को सहता हुआ समय व्यतीत करता है। अनतकाय मे न जाना हो तो उसका त्याग आवश्यक है।

अनंत सख्या कितनी ?

(१) ससार मे सबसे कम मनुष्य। (२) उनकी अपेक्षा असंख्य गुणा नरक के जीव। (३) उनसे भी असंख्य गुणा देव के जीव। (४) उनसे असंख्य गुणा तिर्यंच पचेन्द्रिय। (५) इसी क्रम से विकलेन्द्रिय जीव, (६) अग्निकाय जीव। (७) इनसे विशेषाधिक क्रमशः पृथ्वी काय, अपकाय, वायु काय जीव। (८) उनसे अनत गुणा सिद्ध के जीव। (९) सिद्धो से अनंत गुणा जीव एक निगोद शरीर मे हैं।

३२ अनंत काय के नाम

१. जमी कन्द
२. हरी हल्दी
३. हरा अदरक
४. सुरण कन्द
५. वज्र कंद
६. हरा कचूर
७ सतावर वेल
८. विरालो लता—सोफ की जड
९. कुआर
१०. थूहर
११. गूलो
१२. लहसुन—लसन
१३. बास का करेला
१४. गाजर
१५. लाणा—इसकी सब्जी बनती है।
१६ लोढी, लोढा कद
१७. गिरमिर, गिरिकरनी
१८. किसलय (कोमल पत्ते) नया अंकुर
१९ खीरसूया कद कसेरू
२० थेग—कद विशेष, थेग भाजी
२१. हरे मोथ
२२. लवण वृक्ष की छाल
२३. खिलोड़ी
२४. अमृत वेल
२५. मूली (५ अंग)
२६. भूमि फोड़ा पाठभेदे छुंबा
२७. बथुआ—प्रथम उगेकी भाजी
२८. विरूढ़ (अकुर) कल्हार

२९ पालक की भाजी
३० सूयरवल्ली (जगल की एकबेलडी)
३१ कोमल आंवली जब तक उसमें बीज न पडा हो।
३२ आलू रतालू, पिंडालू

कद मूलादि अनतकाय पदार्थों मे एक शरीर मे अनतानत जीव होते हैं। कद अर्थात् वृक्ष के तने के नीचे भूमि मे रहा हुआ भाग। ये सब हरे ताजे कद अनतकाय होते हैं। आद्र अर्थात वे सब प्रकार के कद जो सुखाए नहीं गए हैं।

३२ अनतकाय की पहचान

१ सूरण कद–जिनमे–त्रस जीवों का नाश होता है।
२ वज्र कद–एक कद विशेष। योग शास्त्र की टीका में उसका नाम वज्र तरु बताया है।
३ हरी हल्दी–न सुखाई हुई हर प्रकार की हल्दी।
४ अदरक–हरी सोंठ।
५ हरा कचूर–स्वाद में तीखा होता है।
६ शतावरी–लता विशेष औषधि मे इसका काफी प्रयोग होता है। हरी शतावरी का त्याग करना चाहिए।
७ सौंफ की जड लता विशेष। कई लोग इसे सौफाली भी कहते हैं।
८ कुमारी–कुआर प्रसिद्ध है। इसके पत्ते दो धारों में कांटे वाले लम्बे परनाले के आकार के होते हैं।
९ थोहर–हर प्रकार की थोहर जसे कि हाथिया, कगाना अनतकाय है।
१० गिलोय (गडूचा)–प्रत्येक प्रकार की गिलोय की लता। यह नीम आदि वृक्षों पर दिखाई देती है।
११ लहसुन (लसन)–मसाला–चटनी मे प्रयुक्त होता है।
१२ बांस का करेला–कोमल नए बाँस का अवयव विशेष।
१३ गाजर–मिठास वाला जमीं कद है।
१४ लाणा–लुणी नाम की एक विशेष वनस्पति। इससे साजी खार बनता है।
१५ साटी–पद्मिनी नामक वनस्पति का कद। पानी में पैदा होता है।

१६. गिरमिर–एक प्रकार की लता कच्छ मे प्रसिद्ध है । इसे गरमर भी कहते है ।

१७. किसलय–कोमल पत्ते । नए उगते हुए सभी गुच्छो के पत्ते अनतकाय होते हैं । प्रथम प्रगट होते हुए अकुर भी अनतकाय होते हैं । मेथी की भाजी के मूल मे स्थित मोटे पत्ते भी अनतकाय होते हैं ।

१८ खरसूया–कद विशेष जिसे कसेरु भी कहते हैं । उसकी केवल हरी डडिया होती हैं । उसके दूध मे विष का अंश होता है ।

१९. थेग की भाजी–इसका होरा भी बनता है, जो ज्वार के दाने के समान होता है ।

२०. हरी मोथ–जलाशयो के किनारे-किनारे होती है । पकने पर काली हो जाती है ।

२१. लवण नामक वृक्ष की छाल उसे भ्रमर वृक्ष भी कहते हैं । छाल को छोडकर शेष अग प्रत्येक वनस्पति हैं ।

२२. खिलोडी–खिल्लड नामक कद–खिलोडी कद ।

२३. अमृत वेल–एक प्रकार की लता जिसके फैलने मे अधिक देर नहीं लगती ।

२४. मूली–देशी और विदेशी । सफेद और लाल दोनो अनंत काय है । मूली के कद को छोडकर उसकी डडी, फूल, पत्ते छोटे-छोटे मोगरे और दाने ये सब अभक्ष्य हैं (प्रत्येक मे जीव होने से) । अत. मूली पाँचो अग त्याज्य है ।

२५. भूमि फोडा–वर्षा ऋतु मे छत्र के आकार मे उगने वाला कुत्ता ।

२६. विरूढ–द्विदल मे निकलते हुए अकुर । जब चने, मूंग आदि की दाल बनाने के लिए उन्हें भिगोया जाता है; तब अधिक समय तक पानी मे रहने के कारण उसमे सफेद अकुर निकलते हैं । इससे वे अनंत काय हो जाते हैं । अकुर सब सभी द्विदल अभक्ष्य समझने चाहिए । भिगोने पर अकुर फूटते है । अत सावधानी रखनी चाहिए ।

२७ बथुआ—एक प्रकार का साग। यह उगते समय अनन्त काय है परन्तु जब यह कोमल न रहकर कठोर हो जाता है तब प्रत्येक में गिना जाता है।

२८ सूकर वल्ली—एक प्रकार की लता जो वन में होती है।

२९ पल्लक—पालक का साग।

३० कोमल आवली—जिसमें गुठली बीज न उत्पन्न हुए हों, ऐसी कोमल आंवली की कतलें अनन्त काय है।

३१ आलू (बटाटा)—रतालु कहलाते हैं।

३२ पिंडालु—प्याज के नाम से प्रसिद्ध है।

इन ३२ प्रकार के कन्दमूल के कण कण में अनन्त जीव होते हैं। जिनका सम्पूर्ण त्याग करने से अनन्ता जीवों को अभयदान देने का महान लाभ मिलता है। जबकि इनका नाश करने से अशाता वेदनीय, नरकायु आदि पाप प्रकृति का बंध होने से अनेक प्रकार की वेदना भोगनी पड़ती है।

आलू मे विद्यमान विष

लंदन २८-११-७८ (रायटर) मुंबई समाचार

१९वीं शताब्दी में यूरोप में अत्यधिक लोकप्रिय आलुओं का यदि आधुनिक आरोग्य शास्त्र के आधार पर अनुसंधान किया जाता तो कदाचित् न खाद्य समझे जाते।

Food and Society नामक अपनी पुस्तक में डा० मगनस पाइक ने लिखा है कि भोजन और औषधि के अधिकारी आलू को विषैला ही मानते थे। वे कहते हैं कि साधारण आलू में सोलनाइन नाम का विषाक्त पदार्थ दस लाख में ६० के परिमाण में होता है। यदि आलू को धूप में रखा जाए तब वह ४००/ तक हो जाता है। इसलिए इस धीमा जहर माना जाता है। जो खाने वाले के शरीर का बिगाड़ता है।

ब्रिटेन का साहसी वीर वोल्टर रेले आलू को उत्तर तथा दक्षिण अमेरिका से ब्रिटेन और आयरलैंड मे सबसे पहले लाया था। यदि वह उसे आज लाया होता और स्वास्थ्य अधिकारियो से इस विषय मे पूछा जाता तो वे उसकी स्वीकृति नही देते क्योंकि यह रोग और मृत्यु को आमन्त्रण देने वाले विषाणुओ से युक्त है, अत: इनसे रक्षा करने के लिए, दयालु बनना आवश्यक है और अनतकाय का भक्षण भी बंद करना जरूरी है।

कैमरे मे हम जैसे है वैसे नही दिखते, अपितु जैसा दिखना चाहते है वैसे ही दिखते है परन्तु एक्स-रे मे तो जैसे है वैसे ही दिखाई देगे।——

हमारा आचरण यह कैमरे के फोटो जैसे है जबकि हमारे विचार एक्स-रे के फोटो जैसे है। हमारी वास्तविकता आचरण की अपेक्षा विचारो मे अधिक स्पष्ट होती है। अत जिनके जीवन मे विचार शुद्धि होगी, उनके जीवन मे आचार शुद्धि अवश्य आवेगी, और इन दोनो के लिए आवश्यक है, आहार शुद्धि——

हुआ आचार तीन दिन के उपरांत अभक्ष्य हो जाता है। परन्तु आम नींबू, आदि के साथ न मिलाए गए गंवार, लसूडा, ककडी, चिव्वड, मिर्च आदि का खटास रहित आचार एक रात बीतने पर दूसरे दिन ही अभक्ष्य हो जाता है।

आम या नीबू के साथ मिश्रित हो तो तीन दिन तक खाया जा सकता है। यदि सिकी हुई मेथी डाली हो तो दूसरे ही दिन बासी हो जाने के कारण अभक्ष्य है। कारण यह है कि मेथी धान्य है। इसलिये मेथी, बेसन अथवा भुने हुए चने की दाल डाला हो तो उसी दिन लिये जा सकते हैं।

जिस आचार मे मेथी पडी हो उसे कच्चे दूध, दही, छाछ रूप गोरस के साथ नही खाना चाहिए। आम, लसूडा छुहारा, मिर्च का शुष्क अचार बनाया जाता है। उसे यदि अच्छी तरह धूप नहीं दी गई हो और नमी रह जाने से झुकाया, या मोडा न जा सके तो वह अचार भी तीन दिन बाद अभक्ष्य है।

तीन दिन धूप लगाना, ऐसी कोई बात नही। किन्तु जब तक खूडी के समान शुष्क न हो जाये तब तक पाँच सात दिन या इससे भी अधिक दिनों तक धूप मे रखना चाहिए। इस प्रकार सुखाने के बाद राई, गुड आदि बढाते हैं और तेल आदि मे डालते हैं।

ऐसा आचार तब तक भक्ष्य हैं, जब तक उसके वर्ण, गंध, रस, स्पर्श परिवर्तित नही होते। यदि तेल कम हो तो आचार खराब हो जाता है। तब वह भक्ष्य नही रहता। विकृत वस्तु मे रसज त्रस जीव उत्पन्न हो चुके होते हैं। उसमे फफूंद आने से अनन्त जीव हो जाते हैं। ध्यान पूर्वक बनाए गए आचार मे भी इस प्रकार पर्याप्त सावधानी रखना आवश्यक है।

आचार विषयक सावधानी

१ अचार का मर्तबान अच्छी तरह साफ करने के बाद भरना चाहिए, अन्यथा खराब होने मे देर नही लगती।

२. उस मर्तबान पर मजबूत ढक्कन देकर कपडे से कसकर बांध देना चाहिये। उसमे वायु का प्रवेश नही होना चाहिए। नही तो मौसम मे हवा लगने से हरी फफूंद पैदा हो जाने के कारण आचार अभक्ष्य हो जाता है।

मुकड़ी वाला आचार नहीं खाना चाहिए। (मुकड़ा फफूंदी-उल्ली) फफूंद के कण-कण में अनंत जीव होते हैं।

३ घर में विवेकी व्यक्ति को अपने हाथ धोकर पोछ लेने और सुखा लेने के बाद छोटी कड़छी अथवा किसी अन्य साधन से आचार निकालना चाहिए। यथा सम्भव हाथ से नहीं निकालना चाहिए। पानी वाले हाथ सुखाकर ही निकालना। अन्यथा जल का एक बूंद भी पड़ जाने से जीवोत्पत्ति हो जाती है। इसलिए सावधानी रखनी आवश्यक है।

४ आचार के मर्तबान को ऐसे स्थान पर रखना चाहिए जहाँ चींटे, मकोड़े आदि जीव पड़ न सकें। चौमासे में उस स्थान को हवा भी नहीं लगनी चाहिए। कुछ लोग अचार मुरब्बा आदि अंधेरे में रखते हैं। उनका रस गिर जाने से अथवा स्वच्छ न होने के कारण वह जगह चिकनी हो जाती है। जहां मच्छरादि चिपट जाते हैं। अंधकार के कारण आचार मुरब्बा निकालते समय वे मर्तबान में पड़कर मर जाते हैं। फिर पेट में भी प्रविष्ट हो सकते हैं। अतः जिस स्थान पर प्रकाश सरलता से पड़ सकता हो और उड़ते हुए जीव दिखाई दे सकें। वहां आचार रखना चाहिए। जिससे जीव हिंसा न हो।

५ जिस अचार को जैसे तैसे सुखाया गया है वह तीन दिन से अधिक समय के लिए उपयोग में नहीं लाया जा सकता। अतः उपयुक्त ढंग से धूप में सुखाना चाहिए। आचार बनाते समय पानी का स्पर्श बिलकुल नहीं होना चाहिए।

६ कई लोग आचार को एक साल तक या इससे भी अधिक समय के लिए रख छोड़ते हैं। ऐसा न करके उसका उपयोग कर लेना चाहिए जिससे वह खराब न हो। विकृत हो जाने के उपरान्त वह उपयोग नहीं हो सकता है और फैंकने से बहुत विराधना होती है।

जिह्वेन्द्रिय पर विजय प्राप्त करने वाले वस्तुतः अचार का त्याग कर देते हैं। यह कार्य सचमुच प्रशंसनीय है। इस जीव ने अनंत बार हरेक पदार्थ खाकर देख लिया किन्तु तृष्णा का शमन नहीं हुआ।

अनाहारी हुए बिना न कोई मोक्ष गया है, न जाता है। और न ही

जाएगा। धीरे-धीरे ऐसी तुच्छ वस्तु से ममता दूर करो, जिससे शाश्वत काल के लिए अनाहारी पद सुलभ हो। रसना पर विजय एक महान आत्म विजय है।

अनेक जीवो युक्त अभक्ष्य अचार का त्याग रसना का विजय है, यह एक दिव्य आत्म विजय है, जो जीभ के सयम और अभक्ष्य त्याग करने के लिये आवश्यक है अन्यथा अभक्ष्य सेवन से दीर्घकाल तक कर्मों की भारी सजा भोगनी पड़ेगी।

यदि मैत्री करनी हो—

यदि आपको इस संसार के सभी जीवो से मैत्री करनी है जो उसका सही उपाय है——

——संपूर्ण संसार को अपना बनाने का प्रयास करने के बदले आप ही सभी के बन जाओ—'बस, फिर शत्रुता कही नही रहेगी।

सिकंद्र संसार को अपना बनाने निकला तो—लहु की नदियाँ बह चली।

महावीर प्रभू ने जगत के छोटे से छोटे सूक्ष्म से सूक्ष्म जीव की रक्षा का निर्णय करके ससार छोड़ा तो, जगत पिता बन गये।

संसार को अपना बनाने जाओगे तो- दुश्मन पैदा होंगे
आप ससार के बनोगे तो सर्वत्र–मित्र पाओगे।

---

१८. अभक्ष्य दही बडा द्विदल
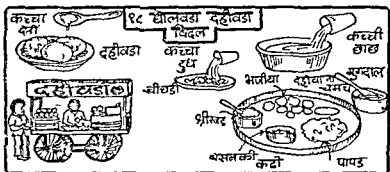
दही बडा और उसमे उत्पन्न द्विंद्रिय जीव

दही बडा अर्थात् द्विदल विदल और कच्चे दूध, दही या छाछ रूप गोरस में मिली हुई कोई भी चीज। उसमें द्विंद्रिय जीव तत्काल उत्पन्न हो जाते हैं। त्रस जीवों की हिंसा के कारण यह अभक्ष्य है।

सामान्यतः जिन्हें हम कठोल (मावुत दल न) धान्य कहते हैं वे सब द्विदल या विदल में समाविष्ट है।

जिनमें से तेल नहीं निकलता तो भी दो बराबर टुकडे होकर दाल बन जाती है और जो झाड के फल रूप नहीं होते वे द्विदल हैं।

चना मूग मोठ उडद, अरहर, चवला कुलथी, मटर लौंग मेथी, मीनश आदि इन द्विदलों की फलियाँ हरे सूखे पत्ते भाजी उनका आटा दाल उन से बनी हुई चीजें आदि भी द्विदल माने जाते हैं। जैसे कि सभी दलहन के पत्ता का भाजी दली सेमफली, चवले की फली तुवर मूग मटर की फली हरे चने, पत्तों का साग उनकी सुखाई गई भाजी, मसाला आचार दाल, कढी सेव, गाठियाँ पूडी पापड, बूंदी, वडी के साथ कच्चे दूध, दही, छाछ का मेल होने से अभक्ष्य है।

जिन में से तैल निकलता है, वे द्विदल नहीं कहलाते। राई, सरसों,

तिल । इसी प्रकार झाडी के फल रूप सागरी द्विदल नही है। मेथी वाला आचार आदि पदार्थ भी द्विदल है ।

दही, गोरस खूब तेज गर्म किया गया हो अथवा गरम करने के पश्चात् ठडा होने पर उसमे द्विदल की वस्तु मिलाई जाए तो दोष नही लगता ।

इस विषय मे विशेष विवेक रखना चाहिए। कच्चा दही या छाछ लेनी हो तो द्विदल वाली वस्तु के खाने के पश्चात् पानी पीना चाहिए और हाथ मु ह धो पोछ लेना चाहिए। वर्तन बदल देने चाहिए। साराश यह है कि कच्चे या पके हुए द्विदल की बनी हुई किसी भी वस्तु का तथा कच्चे गोरस (दही) का किसी भी प्रकार स्पर्श न हो, यह ध्यान रखना चाहिए ।

मेथी—जिस अचार मे मेथी मिली हो, उसके साथ कच्चा गोरस नहीं खाना चाहिए ।

कढी—छाछ को अच्छी तरह उबाल कर बेसन मिलाना चाहिए ।

दहीवडा—आदि कच्चे गोरस मे बनाए हो तो अभक्ष्य हैं। उबले हुए गोरस मे उस दिन के लिये भक्ष्य हैं ।

रायता—भी गोरस (दही) उबाल कर बनाना चाहिए, जिससे किसी दूसरी द्विदल की वस्तु के साथ खाना पड़े तो बाधा न हो ।

रोटी, पूरी के साथ कच्चा दही खाना हो तो द्विदल वाली वस्तु के स्पर्श से बचना होगा। द्विदल की बनी वस्तु खानी हो तो दही का स्पर्श नही करना होगा। कुछ लोग समझते हैं कि गर्म करने का तात्पर्य केवल यह है कि ठडक दूर हो जाए और गर्मी का साधारण सा असर हो जाए। परन्तु यह मिथ्या भ्रम है। इससे द्विदल का दोष लगता है। इसका कारण यह बताया जाता है कि दही अधिक गर्म करने से छाछ फट जाती है। इससे बचने के लिये धीमी आच देना ठीक है। किन्तु पका हुआ नमक अथवा बाजरे का आटा डाल कर हिलाने से छाछ को अच्छी प्रकार उबाला जाए तो वह फटेगी नही। अत दही भली-भाँति उबालना चाहिए। थोडा गर्म किया हुआ दही उबाला गया नहीं माना जा सकता शास्त्रो मे इस प्रकार लिखा है—उबाला हुआ गोरस ।

अग्नि द्वारा उबाले गए अति उष्ण गोरस छाछ, दही, दूध आदि मे द्विदल डालने से द्विदल का दोष नही लगता। आज कल अज्ञानवश अथवा शीघ्रता

वश इस ओर ध्यान नहीं दिया जाता है। इसमें सुधार होना चाहिए। विधि के अनुसार गोरस को गर्म करने के पश्चात चने का आटा मेथी आदि विदल मिलाये जाएँ तो व्यक्ति दोष का भागी नहीं बनता। मुख्य हेतु जीव रक्षा है। स्वाद गौण है। स्वाद के लिए गोरस ठीक तरह से गर्म न किया जाए तो अभक्ष्य का दोष लगता है।

खट्टे ढोकल का खमीर—खमीर के लिए भी ऊपर लिखी पद्धति से छाछ गर्म करनी चाहिए। स्वजन कुटुम्ब एवं सज्जनों के तथा जाति भोज आदि के स्थानों में भोजनार्थ जाने हुए विदल का पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिये। अन्यथा सहज ही दोष लग सकता है।

विदल और गोरस के संयोग से जीव उत्पन्न होते हैं, यह बात केवल ज्ञान से जानकर ही अरिहंत भगवान ने कही है। कच्चे गोरस के साथ विदल का त्याग करना चाहिए ताकि बहुत से जीवों की उत्पत्ति न हो और उत्पन्न जीव हमारे द्वारा न मारे जाए।

श्री श्राद्ध वृत्ति और सम्बोध प्रकरण में उल्लेख है कि सभी देशों से सम्बद्ध कच्चे गोरस में युक्त समस्त द्विदलों (द्विदलों) में अति सूक्ष्म पंचेंद्रिय जीव तथा निगोद (अनन्तकाय) के जीव उत्पन्न होते हैं।

महाभारत में भी कथन है कि हे युधिष्ठिर! कच्चे गोरस का उड़द तथा मूंग आदि से भोजन करना निश्चयपूर्वक मांसाहार के समान है।

रसोई बनाने वाले तथा भोजन करने वालों को इस बात का ओर पूरा पूरा ध्यान देना चाहिए कि विदल में अभक्ष्य न हो और सामूहिक भोजन में भाग लेने वालों को यह दोष न लगे।

श्री खड़क भोजन के साथ मूंग की दाल चने के आटे की कढ़ी पकौड़ी के बड़े, पकौड़ा, मेथी के मसाले का अचार आदि नहीं रखना चाहिए। कढ़ी में चावल का आटा डालने से विदल नहीं होता।

कच्चा रायता छाछ, दही लेना हो तो दाल की कटोरी अथवा भोजन की थाली में नहीं लेनी चाहिये। परन्तु हाथ मुँह की सफाई करके अलग से लें।

१९. अभक्ष्य बैंगन-भटा
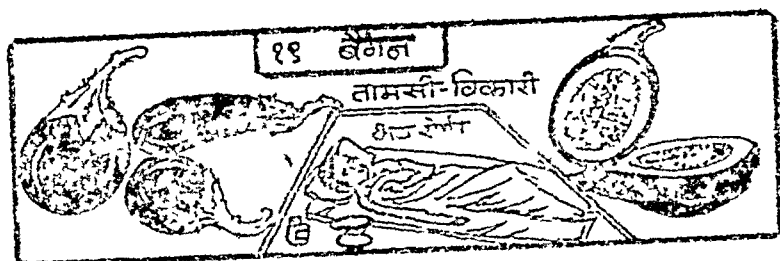
बैंगन और उसकी अभक्ष्यता

सब प्रकार के बैंगन अभक्ष्य है । इनमे बीज बहुत ज्यादा होते हैं । इनकी डठल के नीचे सूक्ष्म त्रस जीव होते हैं । इनके खाने मे नींद अधिक आती है । ये अति विकारी और हानिकारक परिणाम के जनक हैं इनसे पितादि रोग भी होते हैं । बैंगन को सुखाकर भी खाने का निषेध किया गया है । इसका आकार भी अच्छा नहीं है । यह हृदय को घृष्ट बनाता है । कफ रोग का उत्पादक है । अधिक खाने वाले के लिए चार-चार दिन तक ज्वर और क्षय रोग सुलभ है । पुराणो मे भी बैंगन और भटा का निषेध है ।

शिव पुराण मे लिखा है कि जिस घर मे मूली पकाई जाती है उसे श्मशान समान समझना चाहिए । सैकड़ो चन्द्रायण तप निष्फल हो जाते हैं । मरण काल मे परमात्मा विस्मृत हो जाता है । ऐसे अभक्ष्य पदार्थ का भोजन विष और माँस के समान है । फलत बुद्धि का नाश होता है और नरक गति का बंध होता है । वहाँ पराधीनता वश अपार वेदना का अनुभव करना पड़ता है ।

त्रिकाल-ज्ञानियो ने कर्म रूपी रोग के उन्मूलनार्थ इन अभक्ष्य पदार्थों के त्याग का विधान किया है । हम उनका तिरस्कार कर कर्म रूपी व्याधि की वृद्धि के लिये बैंगन आदि का व्यवहार कर अपने भव भ्रमण को विशेष रूप से मोल ले रहे । खेद है कि अपने रोग को इससे दूर रखने की तुलना मे इसे पुष्टि प्रदान कर रहे हैं ।

भव्यो ! जरा ज्ञान चक्षु से देखो और विवेक पूर्वक अभक्ष्य का त्याग करो । इससे हम अपने कर्म रूपी रोग का निवारण कर शीघ्र ही अमर पद प्राप्त कर सकेंगे ।

२०. अभक्ष्य अज्ञात फल

अज्ञात फल और उनकी अभक्ष्यता

व फल या फूल अभक्ष्य हैं जिनके नाम, जाति या गुण कोई न जानता हो या जिन्हें किसी ने खाया न हो। उनके गुण दोष का हमें ज्ञान नहीं होता। यदि वे विषफल हो तो आत्म घात हो जाता है। अत उनका त्याग युक्तियुक्त है किंपी, महान उपकारी गुरू महाराज ने वंकचूल (राजकुमार) को अज्ञात फल के त्याग का नियम करवाया था। उसने प्रबल भूख लगने पर भी इस नियम का दृढ़ता से पालन किया। फलत उनके प्राण बच गए और उसके अन्य चार साथी अज्ञात फल के भक्षण के कारण विष के वशीभूत हो मरण धर्म को प्राप्त हुए। यह कथा विचारणीय है —

वन में एक दस्यु दल के नेता बने हुए वंकचूल ने भारी वर्षा के कारण स्थान-स्थान पर पानी कीचड़ वनस्पति और काई हो जाने से दया धर्म के सूक्ष्मतया पालन करने वाले जन मुनियों को चातुर्मास के लिए आश्रय दिया यथाशक्ति उनकी सेवा भी की। चौमासे के पश्चात् मार्ग स्वच्छ हो जाने पर साधुओं ने विहार किया। " " उन्होंने वंकचूल को सुन्दर प्रतिबोध प्रदान किया कि एक छोटा या बड़े पाप का आचरण, वचन अथवा विचार जीव को कर्म के दण्ड से महा दुःख की सजा देता है। पाप का यथा शक्ति त्याग दुःख से मुक्त होने का मार्ग है। जिसका पालन समव हो ऐसा नियम लेने के लिए

वकचूल के मन मे उत्साह उत्पन्न हुआ। उसके जीवन का सुधार करने के लिए मुनि महाराज ने चार नियम कराए —

१ अज्ञात फल नही खाना। २ किसी पर आघात करने से पहले सात पग पीछे हट जाना।। ३ राजा की स्त्री के साथ प्रेम नही करना। ४. कौवे का मांस नही खाना।

इस प्रकार नियम ले लिए गए। उसके बाद एक बार वकचूल अपने दल के साथ चोरी करने निकला। एक बडे सार्थ (टोले) मे जबरदस्त धावा किया, धन सपत्ति लूट ली। अत्यधिक सपत्ति पर अधिकार करके वकचूल तथा अन्य चोर भाग गए और एक घने वन मे पहुंचे उस समय हरेक को भूख लगी थी। वे भोजन की खोज मे चारो ओर घूम आये। एक झाड पर अति सुन्दर फल देखकर सब वहा टूट पड़े और फल तोडकर वकचूल के पास ले आए।

वकचूल से फल खाने की प्रार्थना की गई। वंकचूल ने पूछा कि क्या वे उस फल को पहिचानते है? साथियो ने कहा कि नही, हम इस फल के गुण दोष को बिलकुल नही जानते। तब वकचूल ने कहा, 'मेरा नियम है कि अज्ञात फल न खाऊँ।

तत्पश्चात साथी चोरो ने पेट भरकर वे फल खाए। परिणाम स्वरूप कुछ क्षणो के उपरात ही दृश्य परिवर्तित हो गया।

फल खाने वाले सभी चोर भूमि पर लेट गए। आखे उतर गई...... श्वास बन्द हो गया।

केवल वकचूल बच गया। वह फल विषैले किंपाक वृक्ष का था। आपने नियम का चमत्कार देखा? यदि वंकचूल फल खाता तो क्या जीवित रह सकता था? कदापि नही। अभक्ष्य के त्याग की महिमा अपार है। इससे आत्मा का रक्षण और जीवन का सुधार होता है। इन नियमो के पालन से वकचूल चोर १२वे देवलोक मे गया।

हे भव्य प्राणियो! परम दयालु और नितांत निःस्वार्थी तीर्थंकर भगवान तथा गुरु महाराज या अनत दु:खों से छुटकारा दिलाने वाला ऐसा उपदेश हम

पम पुण्योदय से ही प्राप्त करते हैं। उसका पुनः मिलना दुर्लभ है। पुनः इसी मूलधन का ब्याज गवा देने के बाद हम पूंजी को ही खाने लगेंगे। यदि हम उससे भी वंचित हो गए तो पर भव में शुभ संपदा कहां से उपलब्ध होगी ? अतः अनंत गुणधारी सर्वज्ञ की उत्तम शिक्षा ग्रहण करो और उस पर आचरण कर उल्लास का विकास करो। इससे मोक्ष माला स्वयमेव तुम्हारे कंठ का शृंगार करेगी।

इतने मात्र से”

कभी-कभी छोटा सा पत्थर सोने के प्याले को तोड़ देता है किंतु इतने मात्र से पत्थर कीमती नहीं बन जाता और न ही सोना मूल्यहीन होता है।

इसी प्रकार कर्म का विचित्र उदय ज्ञानादि अनंत गुणों को आवृत कर देता है, किंतु इतने मात्र से कर्म बलवान नहीं हो जाता। और आत्मा बलहीन नहीं सिद्ध होती क्योंकि एक समय ऐसा भी आता है कि आत्मा कर्मों का नाश शेष करके अपने गुणों का प्रकट करती है।

---

२१. अभक्ष्य तुच्छ फल

अभक्ष्य तुच्छ फलो के खाने का परिणाम

तुच्छ फल वे कहलाते है, जो असार हैं, तृप्ति करने वाले नही हैं। अत्यधिक खाने पर भी शक्ति या तृप्ति प्राप्त नही होती, जिनमें खाने योग्य अश कम होता है और फेकने योग्य अधिक। जैसे कि छोटे-छोटे बेर, पीले अथवा नीचे लसूडे, कच्ची इमली, जामुन आदि तथा अत्यन्त कोमल मूंग, चवला, गवांर, सेम, दोज आदि की फलियाँ और जिन अन्य फलों की जातिया अति कोमल होती है उन सबको तुच्छ समझना चाहिये। इनमे जीव हिंसा अधिक होती है, अत ये अभक्ष्य माने गये हैं। हरे चने के पत्तो व फूल का साग, आम की गुठली रहित कैरी, बेर की गुठली, का गर्भ निकाल कर भक्षण करना, आदि मे अति कोमल अवस्था मे अनत काय के व्रत का उल्लघन होता है। तुच्छ फल खाने के बाद हम उनकी गुठली बाहर फेक देते हैं। उसमे मुख की लार लगी हुई होती है। फलत असख्य सम्मूर्छिम पचेन्द्रिय जीव उत्पन्न होकर मर जाते हैं। छोटे बेरो की गुठलिया इधर-उधर फेंक देने से उनकी मिठास के कारण अनेक चीटियाँ आती हैं। वे विद्यालय के बच्चों के पाव तले कुचली जाती हैं और मर जाती हैं। किसी विद्यार्थी का पाव फिसल जाए तो हड्डी टूट जाती है। अन्य दुष्परिणाम भी होते हैं। अत इनका त्याग करना श्रेष्ठ है।

२२ अभक्ष्य चलित रस

सभी चलित रस अभक्ष्य हैं

जिसका रस या स्वाद बदल जाता है उसे चलित रस कहते हैं। सड़ी और बासी वस्तुओं का समावेश इसमें होता है। चलित रस वाले पदार्थों के रूप रस गंध, स्पर्श आदि बदल जाते हैं। वे अरुचिकर स्वाद रहित हो जाते हैं उनकी गंध खराब हो जाती है। उनमें विविध त्रस जीव रसज लार के जीव, पनक फूलन निगोद के जीव उत्पन्न होते हैं। निगोद और त्रस जीवों की हिंसा के कारण चलित रस अभक्ष्य माना गया है। इसका भक्षण आरोग्य के लिए भी हानिकारक है। यह असमय में अस्वस्थता और मृत्यु का कारण भी है।

चलित रस के पदार्थों से अनेक बार दस्त और वमन होते हैं। ऐसे अनेक उदाहरण समाचार पत्रों में प्रकाशित हुए हैं जिनसे पता चलता है कि चलित रस के भक्षण से व्यक्तियों की दशा अति गम्भीर हो गई है। अनेक प्राणि [illegible] हो। अभक्ष्य भक्षण के त्याग का, उपदेश कितना हितकर और महत्त्वपूर्ण है इन दुर्घटनाओं को देखकर उसमें स्वभावतः श्रद्धा दृढ़ होती है।

रोटी, दाल, भात, साग खिचड़ी, हलवा लापसी, पकौड़ी, बाटा (पपेनी) पूड़ी, बड़ा, नरम पूड़ी ढोकला आदि एक रात व्यतीत हो जाने पर बासी गिने जाते हैं। उनमें पानी का अंश होने के कारण रसज लार के द्विन्द्रीय जीव

उत्पन्न होते है। उनके खाने मे त्रस जीवो की हिंसा होती है और स्वास्थ्य बिगडता है। अत. बासी होने वाली वस्तु नही रखनी चाहिए। दूसरे दिन बासी चीज कुत्तो, गायो अथवा गरीबो को देने से त्रस जीवो की हिंसा होती है। यह महान दोष है।

जिसका समय बीत चुका हो ऐसी मिठाई, दो रात व्यतीत हो जाने पर दही, छाछ तथा दहीछाछ मे बनाये गये बडे, थेपली दूसरी रात के बाद अभक्ष्य हो जाते हैं।

अभक्ष्य दही और विद के प्रसंग से जैन धर्म पर श्रद्धालु बनने वाला—धनपाल पडित

धनपाल का भाई शोभन पिता के वचन को सफल करने लिये जैन धर्म मे दीक्षा ले लेता है—इससे धनपाल को दुख हुआ। शोभन मुनि ने गुरु महाराज के विनय, बहुमान, भक्ति से कुछ समय मे ही जिन स्तुति के रूप मे शोभन स्तुति नामक ग्रथ की रचना की। वे उत्तरोत्तर ज्ञानाभ्यास मे बहुत आगे बढते गए.... और समर्थ ज्ञानी बन गए।

दूसरी ओर धनपाल धारा नगरी के राजा भोज का मान्य पडित हुआ। ....धनपाल को जैन मुनियो से द्वेष होने से उस नगर मे जैन मुनियों का आवागमन कम हो गया।

गुरु आज्ञा से शोभनमुनि धनपाल को सत्य का प्रकाश और तत्व का बोध देने के लिए धारा नगरी पधारे! योगानुयोग से ग्राम के बाहर ही धनपाल से भेट हो गई। परस्पर बातचीत से धनपाल को मुनिजी की विद्वता पर आदर आया। इससे उसने उनके आवास की व्यवस्था की।

गोचरी करने के समय धनपाल के घर दो साधु गए, धर्मलाभ कहा........ अतिथि को द्वार पर देखकर पडिताइन हर्षित हो गई....दही के पात्र मे से दही वहराने लगी—तो मुनि श्री ने पूछा—'यह दही कितने दिनो का है?' पडिताइन ने उत्तर दिया—'तीन दिन का है।' मुनि श्री ने कहा—"यह हमे नहीं खपेगा।" यह सुनकर धनपाल ने कहा—'महाराज! इसमे जीव पड गए हैं क्या?' "हाँ" मुनि श्री ने निडर होकर कहा। धनपाल कहने लगा—'महाराज बताइये कहा पर जीव हैं।' मुनि श्री ने जीव देखने का उपाय बताया।

जीवों को देखने के लिए धनपाल ने दही में महावर का चूर्ण डाला, तुरन्त ही दही में सञ्चार करते कीड़े दिखने लगे। मुनि के वचनों पर धनपाल का विश्वास जम गया। उसके मन में श्रद्धाभाव जागृत हुआ, कि जैन मुनि की कितनी सूक्ष्म दृष्टि और खानपान के विषय में कितनी जीवरक्षा सम्बन्धी सावधानी।

फिर पण्डितानी ने घर से ताजे लड्डुओं का थाल मंगाया—तब मुनि श्री ने फिर कहा ये लड्डू हमें कल्पनीय नहीं हैं। पण्डितानी तो धनपाल का देखती रही लड्डुओं की ओर उंगली करते हुए धनपाल बोला—क्या इन लड्डुओं में जहर है? "हाँ! इनमें जहर का अनुमान है वह सत्य होना चाहिए" मुनि बोले।

धनपाल ने रसोइये से कड़क तरीके से पूछा तो जानकारी हुई कि किसी दुश्मन ने रसोइये को फोड़कर उसे मारने के लिए लड्डुओं में जहर डलवाया था।

इससे धनपाल गुरु महाराज के चरणों पर झुक गया और गद्गद् होकर बोला—हे मुनिवर! आपने तो मुझे नवजीवन प्रदान किया है। आपका जितना उपकार मानूं उतना कम है। आप यदि नहीं आए होते तो मेरा और मेरे परिवार का विनाश ही हो जाता। मुझे एक बात बताइए कि आप श्री यहाँ से अपरिचित होने पर भी कैसे जान गए कि लड्डुओं में जहर है।

मुनि ने कहा—दृष्ट्वान्नं सविषं चकोर विहगो धत्ते विरागं दृशो।

विष युक्त अन्न को देखकर चकोर पक्षी नेत्र को बन्द कर लेता है। इस प्रकार चकोर पक्षी को देखकर हमने विष के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की।

धनपाल कहने लगा— आपको देखकर मुझे अपने छोटे भाई शोभन की याद आ गई है

साथ आए छोटे मुनि कहने लगे— 'वही आपके भ्राता महात्मा बन कर शोभन मुनि हैं।'

[illegible] [illegible] सद्भावना जागृत हुई। मुनि श्री से जैन शासन के अनुपम तत्त्वों का प्रकाश प्राप्त हुआ। पर उसके मिथ्यात्व का अन्धकार दूर हुआ, और जिनधर्म पर श्रद्धा जगी हुई। उसकी इस श्रद्धा को राजा भोज भी चलायमान न कर सके। धनपाल ने [illegible] भी तेजस्वी कृतियाँ दी। संस्कृत में अद्भुत

रचना की जिसमे तिलक मजरी, ऋषभ पचाशिका आदि मुख्य हैं। धनपाल पडित ने जैन धर्म की उपासना और प्रभावना द्वारा जीवन सफल किया। ....यह है अभक्ष्य ज्ञान का चमत्कार।

मिठाई खाखरा आटा आदि का समय

(१) आषाढ सुदी १५ से कार्तिक सुदी १४ तक वर्षा ऋतु मे १५ दिन (२) कार्तिक सुदी १५ से फाल्गुन सुदी १४ तक सर्दी मे ३० दिन (३) फाल्गुन सुदी १५ से आषाढ सुदी १४ तक गर्मी मे २० दिन तक मिठाई भक्ष्य है, यदि उसके रूप, रस, स्वादादि मे परिवर्तन न हुआ हो। समय बीत जाने पर अभक्ष्य समझकर त्याग कर देना चाहिए।

आम और खिरनी आर्द्रा नक्षत्र के बाद अभक्ष्य हैं।

सूखे मेवे और सब प्रकार की भाजी (साग)—चौलाई, मेथी, हरा धनिया, अरबी के पत्ते आदि फाल्गुन सुदी १५ से कार्तिक सुदी १५ तक आठ मास के लिए अभक्ष्य है।

मावा (खोवा)—दूध का मावा जिस दिन तैयार किया गया हो उसी दिन भक्ष्य है, रात को अभक्ष्य। उस मावे को धीमे धीमे तल कर भून कर रखा हो तो भक्ष्य है। अन्यथा बासी मावा प्रात काल अभक्ष्य हो जाता है। अभक्ष्य मावे की बनी हुई बाजारी मिठाइयो का त्याग करना चाहिए। मावा नरम होता है। कच्ची चासनी से अथवा मावे मे चीनी मिलाकर बनाया हुआ पेडा (पिंड) दूसरे दिन अभक्ष्य समझना चाहिए। इसमे फूलन, निगोद के जीव उत्पन्न हो जाते, वे अनंतानंत है। मुंडी (हरनी) वाली, स्वाद रहित प्रत्येक मिठाई अभक्ष्य है।

घारी (एक मिठाई) गुलाब जामुन आदि मे मावा बासी हो और चासनी कच्ची हो तो वह अभक्ष्य है।

आम, आवले के मुरब्बे की चासनी भी ठीक न हो तो वह अभक्ष्य है। फूलन आ जाती है।

दूध पाक, खर्जी खीर, श्री खड, दूध की मलाई जिस दिन बनाई जाए उसी दिन भक्ष्य है। दूसरे दिन बासी हो जाने से अभक्ष्य है।

चटनी तैयार करते हुए पानी अथवा भुने चने की दाल मेथी आदि कोई

अनाज न डाला हो तो तीन दिन बाद वह अभक्ष्य हो जाती है। पानी, मेथी, मसाला भुने चने की दाल आदि वाली चटनी दूसरे दिन बासी हो जाने के कारण अभक्ष्य है।

जलेबी—चूंकि खमीर में रात को सड़न पैदा की जाती है, अत उसमें त्रस जीव पैदा होते हैं। उससे बनी बाजारी जलेबी अभक्ष्य है।

आद्र सूखा हलवा—जिसे दो तीन दिन आटे को सड़ाकर बनाया जाता है। सड़े हुये आटे में त्रस जीवों की उत्पत्ति होती। अत अभक्ष्य है।

भुना हुआ पापड़ दूसरे दिन बासी हो जाता है। तला हुआ दूसरे दिन लिया जा सकता है।

बिना तले हुए चूरमे का लड्डू दूसरे दिन बासी हो जाता है। इसी प्रकार तले हुए चूरमे की मठरी भीतर से कच्ची हो तो दूसरे दिन अभक्ष्य बन जाती है।

भुने हुय धान्य-चने, मुरमुरा, खील आदि का काल मिठाई जितना समझना चाहिये।

सेव गाठिया बूंदी दाल चिवड़ा आदि का समय भी मिठाई जितना जानना किन्तु यदि उससे पहले वर्ण गंध, रस, स्पर्श परिवर्तन हो जाए तो अवधि से पूर्व भी अभक्ष्य हो जाते हैं।

डबल रोटी बिस्कुट आदि जो बहुत समय पहले के बने होते हैं। खमीर लाने के लिए भिगोकर रखने के कारण अभक्ष्य बन जाते हैं।

शरबत व सभी पेय बासी, कच्ची चासनी या चलित रस से बने हों तो अभक्ष्य हैं।

इस विषय में अधिक जानकारी गुरु के माध्यम से प्राप्त करनी चाहिये। श्री यशो विजय जी जैन पाठशाला महेसाणा की ओर से प्रकाशित 'अभक्ष्य अनन्तकाय विचार पुस्तक विशेष रूप से पठनीय है। उस पर विचार व यथा संभव तदनुसार आचरण करना चाहिये।

स्वाध्याय

१ बहु बीज का अभक्ष्यता कारण उनके नाम लिखो ?

२ अनन्तकाय में जीव संख्या मनुष्य से कितना अधिक है ऐसे अनन्त

वहुत्व से स्पष्ट करो ?

३ अनतकाय के ३२ नाम लिखकर हानियां लिखो ?

४ सधान आचार कैसे अभक्ष्य होता है ? उसमे कौन-कौन से जीव मरते हैं ?

५. आचार मे क्या-क्या सावधानी रखनी चाहिये ?

६. द्विदल कैसे बनता है ? उसकी व्याख्या क्या है ?

७. विदल के पाप से बचने के लिए भोजन बनाते हुये और खाते हुए क्या सावधानी रखनी चाहिये ?

८. श्री खड के साथ क्या-क्या नही खाना चाहिए ?

९. बैंगन की अभक्ष्यता व हानियां लिखो ?

१०. अज्ञात फल किसलिये अभक्ष्य और हानिकर है ?

११. तुच्छ फल किसे कहते है ? उनसे क्या हानि है ?

१२. चलित रस कब बनता है ? उसकी पहिचान कैसे होती ?

१३. मिठाई व बाबरा ऋतु के अनुसार कितने दिन चल सकते है ?

१४. मेवे, मावा, आम, चटनी कब अभक्ष्य माने जाते हैं ?

१५. जलेबी, हलवा, डबल रोटी, बिस्कुट क्यो अभक्ष्य है ?

१६. बाईस अभक्ष्यो मे कौन-कौन सी इन्द्रिय वाले जीवो की हिंसा होती है ?

१७. अभक्ष्य त्याग के क्या क्या लाभ हैं ?

नरक गति का वर्णन

अभक्ष्य खान पान के सम्बन्ध से अपार असीम वेदना वाली नरक गति

देव मनुष्य, तिर्यच, और नरक म चार गति हैं। नरक गति म रहने वाले जीवा का सबसे अधिक शारीरिक कष्ट होता है, जो निरंतर भी ह। अति पापी, महा हिंसक, क्रूर परिणामी, बर भाव के तीव्र विचारो वाले, अनाचारी, मांस भक्षक, अभक्ष्य भोगी, मद्यप, पर स्त्रीगामी, महा आरम्भ, मग परिग्रह कर्मादान के व्यवसाय, पचेन्द्रिय का वध धर्म की अवमानना धर्म का नाश आदि महा पाप करने वाले तथा पापा का पश्चाताप नहीं करने वाले मानव और पशु अपने तीव्र पाप कर्मों का फल भोगने के लिए नरक गति मे जाते हैं और वहा दीर्घ काल तक सतत् कष्टो का अनुभव करते हैं। नरक निवासी जीवा को वेदना तीन प्रकार की होती है—१ क्षेत्र वेदना। २ परमा धामी कृत वेदना। ३ परस्पर कृत वेदना।

१ क्षेत्रवेदना—जीव जिस समय इस योनि म जाता है और जब तक वहाँ की आयुष्य पूरी नहीं लेता है तब तक क्षेत्र वेदना सदव विद्यमान रहती है। आख बद कर दोबारा खोलने म जितना समय लगता है उतने समय क लिये भी उसे विश्राम नही मिलता। निरंतर दुःख की आग म जलता हुआ बहुत आक्रन्द करता है। यह वेदना दस प्रकार की है—भूख प्यास, सर्दी, गर्मी, ज्वर-ताप, दाह खुजली, पराधीनता, भय शोक।

यह दस प्रकार की वेदना नारकी जीव स्वत ही अपने पूर्व कर्मों के प्रभाव स लगातार भोगता रहता है। कोई दूसरा उसे यह वेदना नहीं देता है। जिनकी उत्पत्ति का स्थान ठंडा (शीत) होता है, उन्हें अधिक उष्णता की वेदना और उत्पत्ति स्थल गर्म-उष्ण होता उन्हें अधिक शीत की यन्त्रणा होती है। शरीर की जसी प्रकृति होती है, उसके विरुद्ध वातावरण सहन करना बहुत कठिन होता है। यह बात स्वाभाविक है। नरक मे [illegible] पद क अत्यंत अशुभ कर्मों का भोग करने हेतु [illegible] जाते हैं। अत [illegible] की रचना

के विरुद्ध परिस्थिति मे आजीवन भयकर दु ख सहन करते रहने के लिए वे विवश हैं ।

इस दस प्रकार की क्षेत्र वेदना मे भूख की पहली वेदना इतनी कठोर होती है कि केवल एक नारकी जीव सारे ससार के समस्त धान्य, फल, फूल, मिठाई आदि खाद्य पदार्थ खा ले तो भी उसकी भूख शांत न होकर बढती जाएगी वैक्रिय शरीर होने के कारण वह मनुष्य या पशु की भांति आहार ग्रहण नही करता । उसकी इच्छा कितनी ही बलवती क्यो न हो तो भी भोजन मिलता नही । इस प्रकार अधिक भूख से तडफता हुआ, पुकार करता हुआ अपनी बहुत लबी आयु को पूर्ण करता है । भूख की सख्त से सख्त पीड़ा नारकीय जीव हमेशा अनुभूत करता है ।

भूख की कठोरतम पीड़ा के समान ही नरक का जीव प्यास की प्रबल पीड़ा को भी लगातार भोगता है । विश्व के सब कुओं, बावड़ियो, तालाबो, सरोवरो, नदियो, द्रहो, कु डो और समुद्रो का जल एक नारकी जीव पी ले तो भी उसकी तृषा की शांति न होगी । ऐसी तृषा की असीम वेदना का अनुभव करते हुए कठ, तालु, जीभ और ओठ हमेशा सूखते रहते हैं । यदि तीव्र अशुभ कर्मो से बांधे गए दु ख का वह प्रतिकार करना चाहे तो भी कर नही सकता । जैसे-जैसे दु ख टालने का प्रयास करता है, वह बढ़ता जाता है ।

शीत वेदना का अनुभव भी अपरिमित होता है । कल्पना करो कि इस मानव भव मे एक व्यक्ति शीत प्रकृति वाला है । वह दमे, खासी आदि की पीड़ा का हमेशा अनुभव करता है । थोड़ी सी शीत पवन भी सह नही सकता । पौष अथवा माघ महीने की अतिशय शीत रात्रि मे जब जबर्दस्त ठंड पड रही हो, चहुं ओर से शीतल पवन के झटके लग रहे हो, हिमपात हो रहा हो, उसे यदि पर्वत के उच्चतम शिखर पर नगे शरीर सुला दिया जाए, तो वह जितनी शीत वेदना का अनुभव करेगा उसमे अनत गुणी शीत वेदना उष्ण-योनि मे जन्म लेने वाले नारकी जीवो को निरतर भोगनी पडती हैं ।

नारकी जीवो को उष्ण वेदना का भी तीव्रतम अनुभव होता है । शीततम प्रदेश मे जन्म लेने वाला एक मनुष्य हो, वह लेश मात्र गर्मी भी सहन करने मे

असमय हो। उसे उष्णतम वायु वाले प्रदेश में, ग्रीष्म ऋतु के यौवन मे, ज्येष्ठ, आषाढ के तीव्र ताप में खदिर काष्ठ के धक धक करते हुए कोयलों पर सुला देने से जितनी वेदना का अनुभव होगा उससे अनंत गुणी उष्णता का वेदना नरक में रहने वाले शीतयोनि में उत्पन्न जीवो को होती है। उष्णता की वेदना शीतलता की वेदना से बहुत अधिक होती है।

दूसरी और तीसरी नरक भूमि के जीवो के जन्म स्थान शीत होते हैं तथा वहां आजीवन रहना पड़ता है। घूमने फिरने के स्थान अत्युष्ण होते हैं। यद्यपि वहां मनुष्य लोक के समान अग्नि नहीं होती तो भी वहां की धरती मिट्टी पत्थर दीवार आदि स्थान यदि इस पृथ्वी के समान बन हो तो उनमें यहां की अग्नि की अपेक्षा अनंत गुणा गर्मी देने की शक्ति होगी। चौथी नरक भूमि में बहुत से जीव शीत योनी में उत्पन्न होते हैं। उन्हें उष्ण वेदना सहनी पड़ती है। कुछ उष्णयोनी में जन्म लेते हैं उन्हें शीत वेदना होती है। पांचवी नरक भूमि के नारकियों में थोड़े शीतयोनी वाले और अधिकतर उष्णयोनी वाले होते हैं। शीत योनी वाला को उष्ण वेदना और उष्ण योनी वालों को शीत वेदना होती हैं। छठी, सातवीं भूमि के नारकियो के उत्पत्ति स्थान उष्ण और वेदना शीत होती है। इस प्रकार उष्णता और शीतलता की वेदना पृथक पृथक जीवों को होती है। उष्णता की वेदना की अपेक्षा शीत की वेदना अत्यधिक पीड़ा प्रद है।

ज्वर वेदना अर्थात् ताप की पीड़ा। यह प्रत्येक नारकी जीव के लिए हमेशा स्थिर रहती है। क्रमशः नीचे की नरक भूमि के जीव अधिक दुखी होते हैं।

दाह अर्थात् जलन। नारकीय जीवों के शरीर के भीतर और बाहर सदव अत्यधिक जलन रहती है। वे जहां जाते हैं वहां जलन को बढ़ाने वाले साधन ही मिलते जाते हैं। जलन शांत करने के लिए आजीवन न स्थान मिलता है न साधन।

कंडू अर्थात् खाज या खुजली। नारकीय जीवो के शरीरो मे निरन्तर इतनी खाज होती है कि जी भरकर खुजलाने पर भी पीड़ा दूर नही होती। चाकू, छुरी, तलवार अथवा इस प्रकार के अति तीक्ष्ण शस्त्रो द्वारा शरीर को छील दे तो भी इनकी खाज की पीड़ा का निराकरण नही होता। जीवन पर्यन्त यह वेदना सहनी पड़ती है।

पराधीनता भी इतनी ही होती है। किसी भी अवस्था मे स्वाधीनता का अनुभव नही होता। पराधीनता मे ही निरन्तर जीवन व्यतीत करना पड़ता है।

भय बहुत रहता है। इससे कष्ट होगा या इस दशा से, ऐसी चिन्ता दिन-रात मस्तिष्क पर सवार रहती है। नारकीय जीव हमेशा त्रास, निर्बलता और उलझन मे ही रहते है। किसी भी प्रकार की शारीरिक, मानसिक शाति का लेश मात्र अनुभव नही होता। विभग ज्ञान मे आगामी काल की वेदना जानकर हमेशा नारकीय जीव भयाकुल रहते हैं।

शोक की वेदना भी असीम होती है। चीखे मारना, करुण क्रदन करना, अति चिंतित रहना आदि दु खप्रद परिस्थितियो मे ही जीवन व्यतीत होता है।

२. परमाधमी कृत वेदना

१. अंब जाति के परमाधमी असुर देव अपने स्थानो से बाहर निकल कर नरक भूमियो मे आते हैं। वहा खेलते व आनद मानते हुए अशरण नारकी जीवो के शरीर मे भाला, त्रिशूल आदि शस्त्रो की नोक चुभोते हैं, कुत्तो के समान इधर से उधर दौडाते हैं, जैसे तेली बैल को जोर से चलाता है वैसे चक्कर पर चक्कर कटवाते हैं, आकाश मे ऊँचा उछालते हैं, नीचे गिरने पर भाला शूलादि नोकदार शस्त्रो की नोक पर पकड़ते हैं; नीचे पटक कर हथोड़ों की मार से चूर-चूर कर देते हैं, जमीन पर पटक कर तीक्ष्ण शस्त्रो द्वारा बीधते हैं, मोटे-मोटे संड़ासे से गला पकड कर धरती पर उलटा पटक देते है, फिर

ऊपर उछालते हैं, नीचे गिरने पर बड भारी हथोडे से चोटें लगाकर ऐसा कर देत हैं जसे पूणत मूछित हा गए हों ऐसी अवस्था म भी तलवार आदि से उनक शरीर को खण्ड खण्ड कर देते हैं, आरे से ऐसे चीरते हैं जसे लकडी चीरी जाती है। इस प्रकार अपने कर्मों के अधीनस्थ नारकी जीव अब जाति के परम तुच्छ असुर दवा के हाथा वही असह्य वेदना भोगत हैं। नारकी जीवो के वक्रिय शरीर इस प्रकार के होते हैं कि उनका जस चाह छेदन भेदन करें, टुकडे टुकडे करें, उन्हें अचेतन कर दें तो भी वे मरते नहीं, अत्यन्त वेदना का अनुभव करते हैं। अलग हुए शरीर के भाग पारे के समान पुन इकट्ठे हो जात हैं। इन जीवों की आयु निकाचित होती है अत पूरी आयु भोगकर ही छुटकारा होता है।

२ अवरीष जाति के परमाधमी देव नारकी जीवों को बहुत ऊचे आकाश म ले जाकर अतरिक्ष से नीचे फेंक दते हैं। वे जसे ही अति कठोर, तीक्ष्ण धार वाले पत्थरों का भूमि पर गिरते हैं, बस हो बींध जात हैं। उनके शरीर छिन्न जात हैं। उन पर वे परमाधामी देव बडे बडे हथाडा की चाटें मारकर उन्ह मित्तांत सत्वहीन निश्चेष्ट कर देत हैं। तत्पश्चात् तलवार, छुरी आदि से टुकडे टुकडे कर देते हैं।

जैसे केले चीभड, तरबूज, अथवा उस प्रकार के किसी अन्य फल का चीर कर दो फाड कर दिया जाता है वसे ही महा पापों का फल भोगने के लिए नरक को प्राप्त उन नारका जीवो के शरीर के दो फाड अम्बराष नामक परम तुच्छ निदय असुर दव कर डालते हैं। नारकी जीवो को जितना अधिक दुःख होता है जितनी ज्यादा चार्खे मारते पडती हैं द क्रूर असुर उतना ही अधिक प्रसन्न होते हैं।

३ श्याम जाति के परमाधमी देव नारकी जीवो के शरीर के अवयवो का छेदन कर बहुत कष्ट देते हैं। नारकी जीव वज्र की दीवारों म छोटे तार क

तुल्य निष्कुट मे जन्म धारण करते समय अंगुली के असंख्यात भाग वाले शरीर से युक्त होते है। अन्तर्मुहूर्त अर्थात् दो घडी के अन्दर अन्दर इनका शरीर इतना बडा हो जाता है, जितना उस भव मे होना हो। प्रथम नरक भूमि मे कम से कम तीन हाथ का और अधिक से अधिक सवा इकतीस हाथ का शरीर होता है। अनुक्रम से नीचे की नरक भूमियो मे शरीर दुगना दुगना होता जाता है। अन्तिम सातवी नरक भूमि मे बडे से बडा शरीर पाच सौ धनुष का अर्थात् दो हजार हाथ के परिमाण का होता है। इतनी भीमकाय देह उत्पन्न होने के पश्चात् दो घडी मे ही तैयार हो जाती है और जीवन के अन्त तक विद्यमान रहती है। उत्पत्ति स्थान छोटा होता है और शरीर बडा होता है। इन स्थानो का अग्रिम भाग बहुत सकुचित होता है। अत: जिस प्रकार जता (सोने चांदी के तार खीचने का एक औजार) मे से तार खीचा जाता है, उस प्रकार खीच कर निकलना पडता है। उत्पन्न होकर जैसे ही वे बाहर निकलते हैं, वैसे ही इस श्याम जाति के परमाधमी देव बडे-२ सडासे लेकर दौडते हैं और उनमे भरकर खीचते है। वे इस प्रकार जोर से खीचते हैं कि जीव टुकडे-टुकडे हो कर बाहर निकले। फिर उन्हे जमीन पर पटक दिया जाता है। यह धरती नोकदार भालो की नोक से भी अधिक तीक्ष्ण पत्थरों वाली होती हैं। वहाँ गिरते ही छलनी होते हैं और पीडा पाते हैं।

अपितु, ऐसी कठोर भूमि पर गिरने के पश्चात् लोहे की बडी-बडी सलाखों से उनके नाक और कानादि निर्दयता पूर्वक बीधे जाते हैं। मजबूत रस्सो और नोकदार हुको वाली जंजीरो से उन्हे कसकर बांध दिया जाता है। बांधने के पश्चात् बेत जैसी पतली-पतली छडियो से उन्हे अच्छी तरह पीटा जाता है। उन्हे पुन. उठाया जाता है और दीवार व जमीन पर बडे वेग से पटका जाता है मोटे-मोटे डडो की मार पडती है। नारकी जीव दुःखी अवस्था मे रूदन करते पडे रहते हैं और अतीव करूण क्रदन करते हैं। तब 'जले पर नमक' के समान लातो व घुक्को के, अनेक प्रकार के शस्त्रो के आघात पहुँचाकर विशेष रूपेण पीडित किया जाता है। इस दुर्दशा का अनुभव करते हुए, हताश हुए उन बेचारे नारकी जीवो को कही से भी आश्रय या शांति प्राप्त नही होती। पूर्व भव मे दूसरो को अशांति प्रदान कर, त्रासित कर, महापाप कर यहाँ उसके

लाखों गुणी, करोड़ों गुणी अथवा असंख्य गुणी अशांति भोगने के लिए ऐसे दुष्ट कर्म के वे भागीदार बने हैं। अत पराधीनता के कारण बहुत कुछ सहन करना पड़ता है। ऐसी विषम स्थिति म पल्योपम, सागरोपम जितने दीर्घकाल व्यतीत करने पड़ते हैं।

४ सबल जाति के नरक पाल परमाधमी असुरदेव कुतूहल के वशीभूत होकर क्रीड़ार्थ नारकी जीवों को इस प्रकार सताते हैं कि नोकदार धर धक कर जलते हुए हथियार लेकर उनके पेट और सीने म घुसा देते हैं और हृदय के मास के लोथड़े खींचकर बाहर निकाल देते हैं। आंतों को भी खींचकर बाहर निकालते हैं। तीक्ष्ण हथियारों से उनके खड-खड कर देते हैं। त्वचा उधेड़ देते हैं। जिगर की चारों ओर से खींचा तानी करके रुलाते हैं।

पाप के बोझ म लदे हुए पुण्य के अंश से वंचित नारकी जीव पूर्व भव के सुखों का स्मरण करके और वर्तमान दारुण अवस्था का ध्यान करते हुए पराधीन बने परमाधमी असुरों के रहम पर जीवन बिताते हैं।

५ रौद्र नामक असुर अति रौद्र महा भयानक रूप धारण करके नारकी जीवों के शरीर मे तलवार, भाला, छुरी, बरछी आदि घुसा देते हैं अतिशय दुःख देते हैं।

६ उपरुद्र नामक नरकपाल असुर परमाधमी देव नारकी जीवों के हाथ पैर, बाहु, मस्तक आदि पकड़कर गर्दन को मरोड़ कर तोड़ डालते हैं, अंग उपांग खींचकर अलग कर देते हैं, आरे से चीरते हैं। दुःख देने में किसी प्रकार की कमी नहीं रखते। प्राप्त शक्तियों का उपयोग नारकी जीवों को अधिका धिक वेदना पहुंचाने म करते हैं। ऐसे क्रूर कर्मी अतिशय पापरत असुरों की पराधीनता म नारकी जीवों को भवांत तक रुके रहना पड़ता है। दुःख की पुकार सुनने वाला तो कोई मिलता नहीं। जिसके सम्मुख दुःख का परिमार्जन हो सके वहीं अधिक दुखदायी बन जाता है। हास्य अभिमान और उन्माद के कारण बांधे गये कर्मों का ऐसा दारुण विपाक सहन करना पड़ता है।

७ काल जाति के परमाधमी असुर नारकी जीवों को अग्नि से भरे हुए बड़े बड़े भट्टों, बड़ी बड़ी अंगीठियों लोहा गलाने की बड़ी-बड़ी भट्टियों आदि

अति तापकारी स्थानो मे फेंककर भूनते हैं। जिन्होने दूसरो को तड़पने भूनने आदि का पाप किया था उन्हें सेकते है, पकाते हैं, तड़पाते महापीडा देते हैं।

८. महाकाल जाति के परमाधमी देव पिछले भव मे जीवो को मारने काटने का काम करने वाले कसाई धधा अथवा उस जैसे हिंसक कार्य करने वाले मास भक्षक, पशुओ का चमडा उतारने वाले माँसादि का व्यापार करने वाले, हिंसक कार्यो के प्रचारक दुष्ट, हिंसक कृत्यो मे आगे बढकर भाग लेने वाले अकारण अथवा सकारण जीव हिंसा के कार्यो की प्रशसा या अनुमोदना करने वाले, क्रूर कर्मी, पाप के भार से दबे हुए नारकी जीवो के शरीरो के बारीक बारीक टुकड़े कर डालते है। 'लो तुम्हे अन्य जीवो का मास खाना अति रूचिकर था' ऐसा कह कर उसी के मास के छोटे-छोटे टुकड़े काट कर उस के मुख मे डालते है। बलात् उसी के शरीर का मांस उसे खिलाते हैं। पीठ की चमडी उधेड कर पिछले भाग को पूछ के समान कर देते हैं। फिर उसे जोर से खीच कर परेशान करते हैं। विविध यातनाओ से त्रसित करते है। पूर्व भव मे हजारो लाखो जीवो को पराधीन बना कर जिन प्राणियो ने उन्हे छीला हो काटा हो शरीर के अग पृथक-पृथक किये हो, अवयवो को शून्य कर देखने का प्रयोग किया हो, किसी के बाल खीचे हो, किस की त्वचा उतारी हो, किसी को किसी और प्रकार से भिन्न-भिन्न कारणो से व्यापारादि के कारण से मरने का काम किया हो वे सब नरक गति मे आने के पश्चात् इस लोक मे जितनी बार जितने जीवो को मारा हो या कष्ट दिया हो उस से लाखो करोड़ो गुणा बार दुःख उठाते हैं। पीड़ा पाते हैं, व्याकुल होते हैं। इसीलिए महापुरुष कहते हैं कि होश मे किए गये पाप का परिणाम भोगते हुए रो रो कर भी छुटकारा नही होता। अत. नरक गति के दुःख का चित्र दृष्टि सन्मुख रखकर पाप के आरम्भ से बचने का प्रयास करना चाहिए।

९ असि पत्र जाति के असुर देव तलवार कटारी बडे छुरे आदि लेकर नारकी जीवो के होंठ छेदते हैं, कान काटते हैं, हाथ पैर तोड़ डालते हैं, पीठ

पर आघात कर बहुत बड़ा घाव कर देते, सिर को धड़ से अलग कर देते हैं, इस प्रकार देह के भिन्न भिन्न भागों को तीक्ष्ण शस्त्रों से छिन्न भिन्न कर बहुत पीड़ा देते हैं। परमाधर्मी देवों को देव योनि के स्वभाव से विभंग ज्ञान होता होता है। वे इस ज्ञान से नारकी जीव के पूर्व भव की वास्तविकताओं को जानते हैं। उनके पूर्व कृत पापों का याद करके उन्हें खूब सताते हैं। दुष्ट कर्मों का विपाक भोगने के निमित्त आये हुये नारकी जीवों को दुःख से क्षण भर भी विराम नहीं मिलता। दुःख से दूर भागने के लिए कितना ही छटपटायें किन्तु दुःख से मुक्ति नहीं होती। कारण यह है कि वे अपनी शक्ति का दुरुपयोग करके नरक में आए हुए हैं।

१० धनुष अथवा महाधनु नाम के असुर देव नारकी जीवों को दुःख देने के लिये तलवार की तीक्ष्ण धार के समान पत्तों वाले वृक्षों का वन तैयार करते हैं। दुःख से व्यथित, ताप से व्याकुल, वेदना से पीड़ित नारकी जीव जब इन झाड़ों के नीचे विश्राम करने बैठते हैं तब प्रचंड पवन चला कर वे असुर इन पत्तों को उनके शरीर पर गिराते हैं, वे पत्ते गिरते हुए उनके शरीर को चीर डालते हैं। नाक, कान, हाथ, भुजा, छाती पीठ आदि सब अवयव कट जाते हैं। जीव विश्राम लेने आते हैं, परन्तु वहाँ भी व्यथित ही होना पड़ता है। नारकी जीवों का समस्त जीवन इस प्रकार दुःखद होता है।

११ कुम्भी नामक नरक पाल असुर नारकी जीवों को तंग मुँह वाली हांडी, कुम्भियों अथवा कोठियों में ठसाठस भर देते हैं। चारों ओर अग्नि प्रज्वलित कर देते हैं। वे कड़ाहों में डाल कर नीचे आग जलाकर चना के समान उन्हें भून डालते हैं। जीव अन्दर जलते हुए, दाह से पीड़ित होते हुए जैसे तेल उछलते हैं भयानक चीखें मारते हैं। परन्तु उन्हें क्षण भर भी शांति नहीं मिलती।

१२ बालुका नामक परमाधर्मी असुर भयानक अत्यन्त पीड़ित नारकी जीवों को तपती हुई रेती पर चलाते हैं, जो उनसे कर वज्र गर्म

लगती है। पांव मे काटा, भाला अथवा शूल चुभने मे जितनी पीड़ा होता है, उससे कई गुणा अधिक वेदना उन्हेहोती है। ऐसी गरम रेत मे इस प्रकार जाते भूने है जैसे चने आदि। ऊचे उठाकर फिर उन्हे गरम रेत पर फेंक दिया जाता है। शरीर के सभी भागो मे नुकीली ककर चुभती है, चारो ओर से पीड़ा का आक्रमण होता है। इन्होने पूर्व भवो मे कभी यह विचार नही किया था कि हमारी ऐसी करनी से दूसरे जीवो को क्या दुःख होता है।

इस प्रकार विचार विहीन होकर जिन्होने हिंसा लूटमार चोरी विश्वास घात, विषय सेवन, अनाचार आदि जैसे महान् आरम्भ वाले पाप पूर्ण अति लोभ से किये होते हैं। वे उनका फल भोगने के लिये नरक मे जन्म लेते हैं। उनकी वात सुनने वाला वहा कोई भी नही होता। उनके चारो ओर भय, त्रास, उपद्रव, अशांति के सिवाय और कोई वात दृष्टि गोचर नही होती। नरक गति का भव पूरा किये विना त्राण या छुटकारा नही।

१३ वैतरणी नामक परमाधमी देव वैतरणी नदी की रचना करते हैं। उसमे वहुत गर्म उवलता हुआ अत्याधिक क्षार वाले तेजाव के समान छूते ही जला डालने वाला पानी भरा हुआ होता हैं। अत्यन्त भयानक रूधिर, पीप, केश, अस्थिया आदि भी भरी होती हैं। ऐसी भयावह नदी मे नारकी जीव वहा दिये जाते हैं। परवश हुए वे कहाँ जाएँ? वैतरणी देवो द्वारा दिये गये पीडन को सहना ही पड़ता है। जो लोग स्वाधीनता के समय स्वच्छद व्यवहार करते है, अपने से कम शक्ति वालो पर अत्याचार करते है, किसी को उलटा रास्ता वताते हैं, किसी को हानि कारक कार्य मे फसा कर प्रफुल्लित होते हैं, दूसरों को त्रास प्रदान कर खुशी से नाचते हैं; पापो के विचार प्रवाह मे आनदित होते है, उन्हे ऐसी वैतरिणी नदी के प्रवाह मे वहना पडता है। कोई शरण दाता नहीं मिलता, गहन पीडा भोगनी पडती है।